राजस्थान भारती प्रकाशन नं०

धर्मवर्द्धन ग्रन्थावली

सम्पादक —

अगरचंद नाहटा

प्रकाशक —

सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट
बीकानेर

प्रथम संस्करण सवत् २०१७ मूल्य ५)

जिनसे सदा सहयोग व साहित्यक्षेत्र
में आगे बढ़ने की प्रेरणा
मिलती रही उन्हीं सौजन्य-
मूर्त्ति, विद्यामहोदधि,
राजस्थानी साहित्य
के महान्
सेवक

श्री नरोत्तमदासजी स्वामी

के
कर कमलों
में
सादर समर्पित

—अगरचंद नाहटा

प्रकाशकीय

श्री सादूल राजस्थानी रिसर्च-इन्स्टीट्यूट बीकानेर की स्थापना सन् १६४४ में बीकानेर राज्य के तत्कालीन प्रधान मन्त्री श्री के० एम० पणिक्कर महोदय की प्रेरणा से, साहित्यानुरागी बीकानेर-नरेश स्वर्गीय महाराजा श्री सादूलसिंहजी बहादुर द्वारा संस्कृत, हिन्दी एवं विशेषतः राजस्थानी साहित्य की सेवा तथा राजस्थानी भाषा के सर्वाङ्गीण विकास के लिये की गई थी।

भारतवर्ष के सुप्रसिद्ध विद्वानों एवं भाषाशास्त्रियों का सहयोग प्राप्त करने का सौभाग्य हमें प्रारम्भ से ही मिलता रहा है।

संस्था द्वारा विगत १६ वर्षों से बीकानेर में विभिन्न साहित्यिक प्रवृत्तियां चलाई जा रही हैं, जिनमें से निम्न प्रमुख है—

१. विशाल राजस्थानी-हिन्दी शब्दकोश

इस सम्बन्ध में विभिन्न स्रोतों से संस्था लगभग दो लाख से अधिक शब्दों का संकलन कर चुकी है। इसका सम्पादन आधुनिक कोशों के ढंग पर, लंबे समय से प्रारम्भ कर दिया गया है और अब तक लगभग तीस हजार शब्द सम्पादित हो चुके हैं। कोश में शब्द, व्याकरण, व्युत्पत्ति, उसके अर्थ और उदाहरण आदि अनेक महत्वपूर्ण सूचनाएं दी गई हैं। यह एक अत्यन्त विशाल योजना है, जिसकी सन्तोषजनक क्रियान्विति के लिये प्रचुर द्रव्य और श्रम की आवश्यकता है। आशा है राजस्थान सरकार की ओर से, प्रार्थित द्रव्य-साहाय्य उपलब्ध होते ही निकट भविष्य में इसका प्रकाशन प्रारम्भ करना सम्भव हो सकेगा।

२. विशाल राजस्थानी मुहावरा कोश

राजस्थानी भाषा अपने विशाल शब्द भंडार के साथ मुहावरों से भी समृद्ध है। अनुमानतः पचास हजार से भी अधिक मुहावरे दैनिक प्रयोग में लाये जाते हैं। हमने लगभग दस हजार मुहावरों का, हिन्दी में अर्थ और राजस्थानी में उदाहरणों सहित प्रयोग देकर सम्पादन करवा लिया है और शीघ्र ही इसे प्रकाशित करने का प्रबन्ध किया जा रहा है। यह भी प्रचुर द्रव्य और श्रम-साध्य कार्य है।

यदि हम यह विशाल संग्रह साहित्य-जगत को दे सके तो यह संस्था के लिये ही नहीं किन्तु राजस्थानी और हिन्दी जगत के लिये भी एक गौरव की बात होगी।

३. आधुनिक राजस्थानी रचनाओं का प्रकाशन

इसके अंतर्गत निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकीं हैं:—

१. कळायण, ऋतु काव्य। ले० श्री नानूराम संस्कर्ता।
२. आभै पटकी, प्रथम सामाजिक उपन्यास। ले० श्री श्रीलाल जोशी।
३. वरस गांठ, मौलिक कहानी संग्रह। ले० श्री मुरलीधर व्यास।

'राजस्थान-भारती' मे भी आधुनिक राजस्थानी रचनाओं का एक अलग स्तम्भ है, जिसमें भी राजस्थानी कवितायें, कहानियां और रेखाचित्र आदि छपते रहते हैं।

४. 'राजस्थान-भारती' का प्रकाशन

इस विख्यात शोधपत्रिका का प्रकाशन संस्था के लिये गौरव की वस्तु है। गत १४ वर्षों से प्रकाशित इस पत्रिका की विद्वानो ने मुक्त कंठ से प्रशंसा की है। बहुत चाहते हुए भी द्रव्याभाव, प्रेस की एवं अन्य कठिनाइयों के कारण, त्रैमासिक रूप से इसका प्रकाशन संभव नहीं हो सका है। इसका भाग ५ अंक ३-४ **'डा० लुइजि पिओ तैस्सितोरी विशेषांक'** बहुत ही महत्वपूर्ण एवं उपयोगी सामग्री से परिपूर्ण है। यह अंक एक विदेशी विद्वान की राजस्थानी साहित्य सेवा का एक बहुमूल्य सचित्र कोश है। पत्रिका का अगला ७वां भाग शीघ्र ही प्रकाशित होने जा रहा हैं। इसका अंक १-२ राजस्थानी के सर्वश्रेष्ठ महाकवि पृथ्वीराज राठोड़ का सचित्र और वृहत् विशेषांक हैं। अपने ढंग का यह एक ही प्रयत्न है।

पत्रिका की उपयोगिता और महत्व के संबंध में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि इसके परिवर्तन में भारत एवं विदेशों से लगभग ८० पत्र-पत्रिकाएं हमें प्राप्त होती हैं। भारत के अतिरिक्त पाश्चात्य देशों में भी इसकी मांग है व इसके ग्राहक हैं। शोधकर्त्ताओं के लिये 'राजस्थान-भारती' अनिवार्यत: संग्रहणीय शोध-पत्रिका है। इसमें राजस्थानी भाषा, साहित्य, पुरातत्व, इतिहास, कला आदि पर लेखों के अतिरिक्त संस्था के तीन विशिष्ट सदस्य डा० दशरथ शर्मा, श्री नरोत्तमदास स्वामी और श्री अगरचंद नाहटा की वृहत् लेख सूची भी प्रकाशित की गई है।

५. राजस्थानी साहित्य के प्राचीन और महत्वपूर्ण ग्रन्थों का अनुसंधान, सम्पादन एवं प्रकाशन

हमारी साहित्य-निधि को प्राचीन, महत्वपूर्ण और श्रेष्ठ साहित्यिक कृतियों को सुरक्षित रखने एवं सर्वसुलभ कराने के लिये सुसम्पादित एवं शुद्ध रूप में मुद्रित करवा कर उचित मूल्य में वितरित करने की हमारी एक विशाल योजना है। संस्कृत, हिंदी और राजस्थानी के महत्वपूर्ण ग्रंथों का अनुसंधान और प्रकाशन संस्था के सदस्यो की ओर से निरंतर होता रहा है, जिसका संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है—

६. पृथ्वीराज रासो

पृथ्वीराज रासो के कई संस्करण प्रकाश में लाये गये हैं और उनमें से लघुतम संस्करण का सम्पादन करवा कर उसका कुछ अंश 'राजस्थान-भारती' में प्रकाशित किया गया है। रासो के विविध संस्करण और उसके ऐतिहासिक महत्व पर कई लेख राजस्थान-भारती में प्रकाशित हुए हैं।

७. राजस्थान के अज्ञात कवि जान (न्यामतखां) की ७५ रचनाओं की खोज की गई। जिसकी सर्वप्रथम जानकारी 'राजस्थान-भारती' के प्रथम अंक में प्रकाशित हुई है। उनका महत्वपूर्ण ऐतिहासिक 'काव्य क्यामरासा' तो प्रकाशित भी करवाया जा चुका है।

८. राजस्थान के जैन संस्कृत साहित्य का परिचय नामक एक निबंध राजस्थान-भारती में प्रकाशित किया जा चुका है।

९. मारवाड़ क्षेत्र के ५०० लोकगीतों का संग्रह किया जा चुका है। बीकानेर एवं जैसलमेर क्षेत्र के सैंकड़ों लोकगीत, घूमर के लोकगीत, बाल लोकगीत, लोरियाँ, और लगभग ७०० लोक कथाएँ संग्रहीत की गई हैं। राजस्थानी कहावतों के दो भाग प्रकाशित किये जा चुके हैं। जीणमाता के गीत, पाबूजी के पवाड़े और राजा भरथरी आदि लोक काव्य सर्वप्रथम 'राजस्थान-भारती' में प्रकाशित किए गए हैं।

१०. बीकानेर राज्य के और जैसलमेर के अप्रकाशित अभिलेखों का विशाल संग्रह 'बीकानेर जैन लेख संग्रह' नामक वृहत् पुस्तक के रूप में प्रकाशित हो चुका है।

११. जसवंत उद्योत, मुंहता नैणसी री ख्यात और अनोखी आन जैसे महत्वपूर्ण ऐतिहासिक ग्रंथों का सम्पादन एवं प्रकाशन हो चुका हैं।

१२. जोधपुर के महाराजा मानसिंहजी के सचिव कविवर उदयचन्द भंडारी की ४० रचनाओं का अनुसन्धान किया गया है और महाराजा मानसिंहजी की काव्य-साधना के सम्बन्ध में भी सबसे प्रथम 'राजस्थान भारती' में लेख प्रकाशित हुआ है।

१३. जैसलमेर के अप्रकाशित १०० शिलालेखों और 'भट्टि वंश प्रशस्ति' आदि अनेक अप्राप्य और अप्रकाशित ग्रंथ खोज-यात्रा करके प्राप्त किये गये हैं।

१४. बीकानेर के मस्तयोगी कवि ज्ञानसारजी के ग्रंथों का अनुसन्धान किया गया और ज्ञानसागर ग्रंथावली के नाम से एक ग्रंथ भी प्रकाशित हो चुका है। इसी प्रकार राजस्थान के महान विद्वान महोपाध्याय समयसुन्दर की ५६३ लघु रचनाओं का संग्रह प्रकाशित किया गया है।

१५. इसके अतिरिक्त संस्था द्वारा—

(१) डा० लुइजि पिओ तैस्सितोरी, समयसुन्दर, पृथ्वीराज और लोकमान्य तिलक आदि साहित्य-सेवियों के निर्वाण-दिवस और जयन्तियां मनाई जाती हैं।

(२) साप्ताहिक साहित्य गोष्ठियों का आयोजन बहुत समय से किया जा रहा है, इसमें अनेकों महत्वपूर्ण निबंध, लेख, कविताएं और कहानियां आदि पढ़ी जाती हैं, जिससे अनेक विध नवीन साहित्य का निर्माण होता रहता है। विचार विमर्श के लिये गोष्ठियों तथा भाषणमालाओं आदि के भी समय-समय पर आयोजन किये जाते रहे हैं।

१६. बाहर से ख्याति प्राप्त विद्वानों को बुलाकर उनके भाषण करवाने का आयोजन भी किया जाता है। डा० वासुदेवशरण अग्रवाल, डा० कैलाशनाथ काटजू, राय श्रीकृष्णदास, डा० जी० रामचन्द्रन्, डा० सत्यप्रकाश, डा० डब्लू० एलेन, डा० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या, डा० तिबेरिओ-तिबेरी आदि अनेक अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त विद्वानों के इस कार्यक्रम के अन्तर्गत भाषण हो चुके हैं।

गत दो वर्षों से महाकवि पृथ्वीराज राठौड़ आसन की स्थापना की गई है। दोनों वर्षों के आसन-अधिवेशनों के अभिभाषक क्रमशः राजस्थानी भाषा के प्रकाण्ड

विद्वान् श्री मनोहर शर्मा एम० ए०, बिसाऊ और पं० श्रीलालजी मिश्र एम० ए०, हूंडलोद थे।

इस प्रकार संस्था अपने १६ वर्षों के जीवनकाल में, संस्कृत, हिन्दी और राजस्थानी साहित्य की निरंतर सेवा करती रही है। आर्थिक संकट से ग्रस्त इस संस्था के लिये यह सम्भव नहीं हो सका कि यह अपने कार्यक्रम को नियमित रूप से पूरा कर सकती, फिर भी यदा कदा लड़खड़ा कर गिरते पड़ते इसके कार्यकर्त्ताओं ने 'राजस्थान-भारती' का सम्पादन एवं प्रकाशन जारी रखा और यह प्रयास किया कि नाना प्रकार की बाधाओं के बावजूद भी साहित्य सेवा का कार्य निरंतर चलता रहे। यह ठीक है कि संस्था के पास अपना निजी भवन नहीं है, न अच्छा संदर्भ पुस्तकालय है, और न कार्यालय को सुचारु रूप से सम्पादित करने के समुचित साधन ही हैं; परन्तु साधनों के अभाव में भी संस्था के कार्यकर्त्ताओं ने साहित्य की जो मौन और एकान्त साधना की है वह प्रकाश में आने पर संस्था के गौरव को निश्चित ही बढ़ा सकने वाली होगी।

राजस्थानी-साहित्य-भंडार अत्यन्त विशाल है। अब तक इसका अत्यल्प अंश ही प्रकाश में आया है। प्राचीन भारतीय वाङ्मय के अलभ्य एवं अनर्घ रत्नों को प्रकाशित करके विद्वज्जनों और साहित्यिकों के समक्ष प्रस्तुत करना एवं उन्हें सुगमता से प्राप्त करना संस्था का लक्ष्य रहा है। हम अपनी इस लक्ष्य पूर्ति की ओर धीरे-धीरे किन्तु दृढ़ता के साथ अग्रसर हो रहे हैं।

यद्यपि अब तक पत्रिका तथा कतिपय पुस्तकों के अतिरिक्त अन्वेषण द्वारा प्राप्त अन्य महत्वपूर्ण सामग्री का प्रकाशन करा देना भी अभीष्ट था, परन्तु अर्थाभाव के कारण ऐसा किया जाना सम्भव नहीं हो सका। हर्ष की बात है कि भारत सरकार के वैज्ञानिक संशोध एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम मन्त्रालय (Ministry of scientific Research and Cultural Affairs) ने अपनी आधुनिक भारतीय भाषाओं के विकास की योजना के अंतर्गत हमारे कार्यक्रम को स्वीकृत कर प्रकाशन के लिये १५०००) रु० इस मद में राजस्थान सरकार को दिये तथा राजस्थान सरकार द्वारा उतनी ही राशि अपनी ओर से मिलाकर कुल ३००००) तीस हजार की सहायता, राजस्थानी साहित्य के सम्पादन-प्रकाशना

हेतु इस संस्था को इस वित्तीय वर्ष में प्रदान की गई है; जिससे इस वर्ष निम्नोक्त ३१ पुस्तकों का प्रकाशन किया जा रहा है।

१. राजस्थानी व्याकरण—	श्री नरोतमदास स्वामी
२. राजस्थानी गद्य का विकास (शोध प्रबंध)	डा० शिवस्वरूप शर्मा अचल
३. अचलदास खीची री वचनिका—	श्री नरोत्तमदास स्वामी
४. हमीरायण—	श्री भंवरलाल नाहटा
५. पद्मिनी चरित्र चौपई—	,, ,, ,,
६. दलपत विलास—	श्री रावत सारस्वत
७. डिंगल गीत—	,, ,, ,,
८. पंवार वंश दर्पण—	डा० दशरथ शर्मा
९. पृथ्वीराज राठोड़ ग्रंथावली—	श्री नरोतमदास स्वामी और श्री बदरीप्रसाद साकरिया
१०. हरिरस—	श्री बदरीप्रसाद साकरिया
११. पीरदान लालस ग्रंथावली—	श्री अगरचंद नाहटा
१२. महादेव पार्वती वेलि—	श्री रावत सारस्वत
१३. सीताराम चौपई—	श्री अगरचंद नाहटा
१४. जैन रासादि संग्रह—	श्री अगरचंद नाहटा और डा० हरिवल्लभ भायाणी
१५. सदयवत्स वीर प्रबंध—	प्रो० मंजुलाल मजूमदार
१६. जिनराजसूरि कृतिकुसुमांजलि—	श्री भंवरलाल नाहटा
१७. विनयचंद कृतिकुसुमांजलि—	,, ,, ,,
१८. कविवर धर्मवर्द्धन ग्रंथावली—	श्री अगरचंद नाहटा
१९. राजस्थान रा दूहा—	श्री नरोत्तमदास स्वामी
२०. वीर रस रा दूहा—	,, ,, ,,
२१. राजस्थान के नीति दोहे—	श्री मोहनलाल पुरोहित
२२. राजस्थानी व्रत कथाएं—	,, ,, ,,
२३. राजस्थानी प्रेम कथाएं—	,, ,, ,,
२४. चंदायन—	श्री रावत सारस्वत

२५. मट्ठुली—	श्री अगरचंद नहाटा और म:विनय सागर
२६. जिनहर्ष ग्रंथावली	श्री अगरचंद नाहटा
२७. राजस्थानी हस्त लिखित ग्रंथों का विवरण	,, ,,
२८. दम्पति विनोद	,, ,,
२९. हीयाली–राजस्थान का बुद्धिवर्धक साहित्य	,, ,,
३०. समयसुन्दर रासत्रय	श्री भंवरलाल नाहटा
३१. दुरसा आढा ग्रंथावली	श्री बदरीप्रसाद साकरिया

जैसलमेर ऐतिहासिक साधन संग्रह (संपा० डा० दशरथ शर्मा), ईशरदास ग्रंथावली (संपा० बदरीप्रसाद साकरिया), रामरासो (प्रो० गोवर्द्धन शर्मा), राजस्थानी जैन साहित्य (ले० श्री अगरचंद नाहटा), नागदमण (संपा० बदरीप्रसाद साकरिया) मुहावरा कोश (मुरलीधर व्यास) आदि ग्रंथों का संपादन हो चुका है परन्तु अर्थाभाव के कारण इनका प्रकाशन इस वर्ष नहीं हो रहा है।

हम आशा करते हैं कि कार्य की महत्ता एवं गुरुता को लक्ष्य में रखते हुए अगले वर्ष इससे भी अधिक सहायता हमें अवश्य प्राप्त हो सकेगी जिससे उपरोक्त संपादित तथा अन्य महत्वपूर्ण ग्रंथों का प्रकाशन संभव हो सकेगा।

इस सहायता के लिये हम भारत सरकार के शिक्षा विकास सचिवालय के आभारी हैं, जिन्होंने कृपा करके हमारी योजना को स्वीकृत किया और ग्रान्ट-इन-एड की रकम मंजूर की।

राजस्थान के मुख्य मंत्री माननीय मोहनलालजी सुखाड़िया, जो सौभाग्य से शिक्षा मत्री भी हैं और जो साहित्य की प्रगति एवं पुनरुद्धार के लिये पूर्ण सचेष्ट हैं, का भी इस सहायता के प्राप्त कराने में पूरा-पूरा योगदान रहा है। अत: हम उनके प्रति अपनी कृतज्ञता सादर प्रगट करते हैं।

राजस्थान के प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षाध्यक्ष महोदय श्री जगन्नाथसिंहजी मेहता का भी हम आभार प्रगट करते हैं, जिन्होंने अपनी ओर से पूरी-पूरी दिलचस्पी लेकर हमारा उत्साहवर्द्धन किया, जिससे हम इस वृहद् कार्य को सम्पन्न करने में समर्थ हो सके। संस्था उनकी सदैव ऋणी रहेगी।

इतने थोड़े समय में इतने महत्वपूर्ण ग्रन्थों का संपादन करके संस्था के प्रकाशन-कार्य में जो सराहनीय सहयोग दिया है, इसके लिये हम सभी ग्रन्थ सम्पादकों व लेखकों के अत्यन्त आभारी हैं।

अनूप संस्कृत लाइब्रेरी और अभय जैन ग्रन्थालय बीकानेर, स्व० पूर्णचन्द्र नाहर संग्रहालय कलकत्ता, जैन भवन संग्रह कलकत्ता, महावीर तीर्थक्षेत्र अनुसंधान समिति जयपुर, ओरियंटल इन्स्टीट्यूट बड़ोदा, भांडारकर रिसर्च इन्स्टीट्यूट पूना, खरतरगच्छ वृहद् ज्ञान भण्डार बीकानेर, एशियाटिक सोसाइटी बंबई, आत्माराम जैन ज्ञानभंडार बड़ोदा, मुनि पुण्यविजयजी, मुनि रमणिक विजयजी, श्री सीताराम लालस, श्री रविशंकर देराश्री, पं० हरिदत्तजी गोविंद व्यास जैसलमेर आदि अनेक संस्थाओं और व्यक्तियों से हस्तलिखित प्रतियां प्राप्त होने से ही उपरोक्त ग्रंथों का संपादन सम्भव हो सका है। अतएव हम इन सबके प्रति आभार प्रदर्शन करना अपना परम कर्त्तव्य समझते हैं।

ऐसे प्राचीन ग्रन्थों का सम्पादन श्रमसाध्य है एवं पर्याप्त समय की अपेक्षा रखता है। हमने अल्प समय में ही इतने ग्रन्थ प्रकाशित करने का प्रयत्न किया इसलिये त्रुटियों का रह जाना स्वाभाविक है। गच्छतः स्खलनंक्वपि भवत्येव प्रमादतः, हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधति साधवः।

आशा है विद्वद्वृन्द हमारे इन प्रकाशनों का अवलोकन करके साहित्य का रसास्वादन करेंगे और अपने सुझावों द्वारा हमें लाभान्वित करेंगे जिससे हम अपने प्रयास को सफल मानकर कृतार्थ हो सकेंगे और पुनः मां भारती के चरण कमलों में विनम्रतापूर्वक अपनी पुष्पांजलि समर्पित करने के हेतु पुनः उपस्थित होने का साहस बटोर सकेंगे।

निवेदक
लालचन्द कोठारी
प्रधान-मन्त्री
सादूल राजस्थानी-इन्स्टीट्यूट
बीकानेर

बीकानेर,
मार्गशीर्ष शुक्ला १५
संवत् २०१७
दिसम्बर ३, १९६०

परिभाषा
२

२

कविवर धर्मवर्द्धन की हस्तलिखित "परिभाषा"।

भूमिका

राजस्थान की साहित्य-सम्पत्ति की अभिवृद्धि एवं सुरक्षा में जैन विद्वानों का योग सदैव स्मरणीय रहेगा। जैन-विद्वानों का उद्देश्य एकमात्र जनसाधारण में सद्धर्म का प्रचार करना एवं ज्ञान की ज्योति को प्रकाशमान रखना रहा है। न उनको राजा-महाराजाओं का गुणानुवाद करना था, न हिंसामय युद्ध के लिए योद्धाओं को उत्तेजित करना था और न शृंगार रस से पूर्ण रचनाओं द्वारा जन-समाज में कामोत्तेजना फैलाना था। उनका जीवन सदा से निवृत्ति-प्रधान रहता आया है। अतः सद्धर्म-प्रचार के साथ ही साहित्य का उत्पादन एवं उन्नयन करना उनके जीवन का अंग बना हुआ दृष्टिगोचर होता है।

जैन विद्वानों ने प्रचुर साहित्य-सामग्री का निर्माण करने के साथ ही अतिमात्रा में ग्रंथों का संरक्षण भी किया है। इस कार्य में उन्होंने जैन-अजैन का विचार नहीं किया। जैन भंडारों में सभी प्रकार के महत्वपूर्ण ग्रन्थों की प्रतियां सुरक्षित की जाती रहीं हैं और उनके अपने लिखे हुए ग्रन्थ भी केवल जैन-धर्म विषयक ही नहीं हैं। उन्होंने सभी विषयों के ग्रन्थों से अपने भंडारों को परिपूर्ण करने के साथ ही स्वयं भी विविध ज्ञान-

शाखाओं अथवा साहित्यिक परम्पराओं की पूर्ति के लिए लिए ग्रन्थ रचना की है। जैन भंडारों में की गई ज्ञान साधना ने विद्यारसिकों के लिए प्रचुर साहित्य-सामग्री एकत्रित कर दी है। यह जैन विद्वानों की एकान्त तपस्या का ही फल है कि बहुसंख्यक अनमोल ग्रन्थ नष्ट होने से बच गए हैं और वे अब भी सर्वसाधारण के लिए सुलभ हैं।

राजस्थान के लब्धप्रतिष्ठ जैन विद्वानों एवं कवियों की संख्या भी काफी बड़ी है। इन विद्वानों ने अनेक भाषाओं में ग्रन्थ-रचना की है। जहां इन्होंने संस्कृत में ग्रन्थ लिखे हैं, वहां प्राकृत एवं अपभ्रंश को भी अपनी प्रतिभा की भेंट दी है। लोकभाषा की ओर तो जैन विद्वानों का ध्यान सदा से ही रहा है। यही कारण है कि राजस्थानी जैन साहित्य की विशालता आश्चर्यजनक है। प्राचीन राजस्थानी साहित्य को तो जैन विद्वानों की विशेष देन है।

राजस्थान के जैन साहित्य-तपस्वियों में उपाध्याय धर्मवर्द्धन का विशिष्ट स्थान है। ये एक साथ ही सद्धर्म-प्रचारक, समर्थ विद्वान एवं सरस कवि के रूप में प्रतिष्ठित हैं। इनकी अपनी रचनाएँ काफी अधिक हैं और वे संस्कृत, पिंगल एवं डिंगल आदि अनेक भाषाओं में हैं। इतना ही नहीं, इन्होंने अपनी रचनाओं में अनेक परम्पराओं का सुन्दर निर्वाह कर के अपने साहित्य को समष्टि-रूप से एक विशिष्ट वस्तु बना दिया है, जिसके विषय में आगे जरा विस्तार से चर्चा की जाएगी।

श्री अगरचंद नाहटा ने अपने 'राजस्थानी साहित्य और जैन कवि धर्मवर्द्धन' शीर्षक लेख (त्रैमासिक राजस्थान, भाद्रपद १९९३) में उपाध्याय धर्मवर्द्धन के जीवनवृत्तान्त पर अच्छा प्रकाश डाला है। तदनुसार इनका जन्म सं० १७०० में हुआ था और इनका जन्म नाम 'धरमसी' (धर्मसिंह) था। इन्होंने तत्कालीन खरतरगच्छाचार्य श्रीजिनरत्नसूरि के पास सं० १७१३ में तेरह वर्ष की अल्पायु मे ही दीक्षा ग्रहण की और इनका दीक्षा नाम 'धर्मवर्द्धन' हुआ। पन्द्रहवींशताब्दी के प्रभावक खरतर गच्छाचार्य श्रीजिनभद्रसूरि की शिष्य-परम्परा के मुनि विजयहर्ष आप के विद्यागुरु थे, जिनके समीप रह कर आपने अनेक शास्त्रों का अध्ययन किया।

मुनि धर्मवर्द्धन का समस्त जीवन धर्मप्रचार एवं ग्रन्थ-रचना में ही व्यतीत हुआ। आपने अनेक प्रदेशों, नगरों एवं ग्रामों में विहार करके धर्म-प्रचार किया और प्रचुर साहित्य-रचना की। आपको अपने जीवन में बड़ा सम्मान प्राप्त हुआ। आपकी विद्वत्ता की प्रसिद्धि फैली। फलतः गच्छनायक श्रीजिनचन्द्रसूरि ने आपको सं० १७४० में उपाध्याय पद से अलंकृत किया। आगे चल कर गच्छ के तत्कालीन सभी उपाध्यायों में वयोवृद्ध एवं ज्ञानवृद्ध होने के कारण आप महोपाध्याय पद से विभूषित हुए।

लगभग ८० वर्ष की आयु में यशस्वी एवं दीर्घजीवन प्राप्त करके मुनि धर्मवर्द्धन ने इहलीला संवरण की। जयसुन्दर,

कीर्तिसुन्दर, ज्ञानवल्लभ आदि अनेक विद्वान आपके शिष्य थे। इनकी शिष्यपरम्परा १६ वीं शताब्दी तक चालू रही [१]। आपके सम्बन्ध में भोजक अमराजी का कहा हुआ एक डिंगल गीत इस प्रकार है :—

खरतर श्री विजैहरष वाचक तणौ,
ज्ञान गुण गीत सौभाग वड़ गात।
धडा वांधई तिके गुणां रा धरमसी,
पतगरइ तु नै सहि बड़ा कवि पात ॥१॥
ज्ञानवंत सूत्र सिधंतरी लहइ गम,
अगम रा अरथ जिके तिके आणइ।
मह बहोतर कला तो कनां धरमसी,
जैन सिव धरम रा मरम जांणइ ॥ २ ॥
व्याकरण वेद पुराण कुराण विधि
आप मति सार अधिकार आखइ।
ताहरी धरमसी समझि इसड़ी तरह,
भरह पिंगल तणा भेद भाखइ ॥ ३ ॥
राजि है श्री कमल साईज चढ़ती रती,
जिन सासन जोइतां जती गुण जाण।
नग अमूल धरमसी सारिखा नीपजइ,
खरतरइ गच्छ हीरां तणी खांण ॥ ४ ॥

---

१ महोपाध्याय धर्मवर्द्धनजी की विस्तृत जीवनी श्री नाहाटाजी के लेख में द्रष्टव्य है।

तत्कालीन बीकानेर नरेश सुजाणसिंहजी ने गच्छनायक श्रीजिनसुखसूरि को दिए गए सं० १७७६ के अपने पत्र में महोपाध्यायजी की इस प्रकार प्रशंसा की है :—

सब गुण ज्ञान विशेष बिराजै ।
कविगण ऊपरि घन ज्यु गाजै ॥
धर्मसिंह धरणीतल मांहि ।
पण्डित योग्य प्रणति दल तांहि ॥

महोपाध्याय धर्मवर्द्धन अनेक विषयों के ज्ञाता एवं बहुभाषाविद् उच्चकोटि के विद्वान थे। आपकी अनेक रचनाएं संस्कृत में हैं। साथ ही प्राकृत-अपभ्रंश आदि प्राचीन भाषाओं में भी रचना करने में आप समर्थ थे। इस सम्बंध में कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं :—

सरस्वती-वंदना (संस्कृत)

मंद्रैर्मध्यैश्च तारैः क्रमततिभिरुरः कण्ठमूर्द्धप्रचारैः,
सप्तस्वर्या प्रयुक्तैः सरगमपधनेत्याख्यया ऽन्योन्यमुक्तैः ।
स्कन्धे न्यस्य प्रवालं कल ललितकलं कच्छपीं वादयंती,
रम्यास्या सुप्रसन्ना वितरतु वितते भारती भारती मे ॥६॥
(सरस्वत्यष्टकम्)

प्राकृत

विविह सुविहि लच्छीवल्लिसंताणमेहं,
सुगुणरयणगेहं पत्तमप्पुण्णरेहं ।

दलियदुरियदाहं लद्धसंसिद्धिलाहं,
जलहिमिव अगाहं वंदिमो पासनाहं ॥ ३ ॥

अपभ्रंसिका

तुहु राउल राउलह सामि हु राउल रंकह,
हिणसु दुहाइ सुहाइ कुण सुमइ मा अवहीरह ।
पिक्खइ जगु अजग्गु ठाणु वरसंतउ कि घणु,
पत्तउ पइ जइ होसु दुहियसा तुह अवहीरणु ॥८॥
(श्रीगौडीपार्श्वनाथस्तवनम्)

राजस्थान का डिंगल साहित्य अत्यंत गौरवमय है। इसके गीत भारतीय साहित्य की विशिष्ट वस्तु हैं। गीतों की वर्णन-शैली एवं उनकी छन्द रचना अपने आप में स्वतंत्र है। डिंगल की गीत सम्पत्ति है भी अति विशाल और इसकी अभिवृद्धि में केवल चारणों ही नहीं, अन्य वर्गों एवं कवियों का भी पूरा योगदान रहा है। महोपाध्याय धर्मवर्द्धन के डिंगलगीत उनकी समस्त साहित्यसामग्री में अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। उन्होंने काफी डिंगल गीत लिखे है और और उनका अर्थ-गांभीर्य विशेष रूप से ध्यान में रखने की चीज है। यहां उनके कुछ डिंगलगीत उदाहरण-स्वरूप प्रस्तुत किए जाते हैं :—

१. सूर्य स्तुति

हुदै लोक जिण रे उदै, मुदै सहु काम हूँ,
पूजनीकां सिरे देव पूजो ।

साच री बात सहु सांभलौ सेवकां,
देव को सूर सम नहीं दूजौ ॥ १ ॥
सहस किरणां धरै हरै अंधकार सही,
नमैं ग्रहसमै तियां कष्ट नावै ।
प्रगट परताप परता घणा पूरतौ,
अवर कुण अमर रवि गमर आवै ॥ २ ॥
पडि रहै रात रा पखिया पंथिया,
हुवै दरसण सकौ राह हींडें ।
सोभ चढे सुरां सुरां असुरां सिहर,
मिहर री मिहर सुर कवण मीढें ॥ ३ ॥
तपे जग ऊपरा जपै सहु को तरणि,
सुभा असुभां करम धरम साखी ।
रूड़ा ग्रह हुवइ सहु रूड़ै ग्रह राजवी,
रूड़ां रजवट प्रगट रीति राखी ॥ ४ ॥

२. वर्षा वर्णन

सबल मैंगल बादल तणा सज करि,
गुहिर असमाण नीसाण गाजै ।
जंग जोरैं करण काल रिपु जीपवा,
आज कटकी करी इंद राजै ॥ १ ॥
तीख करवाल बिकराल बीजली तणी
घोर माती घटा घर र घालै ।
छोडि वासां घणी सोक छांटा तणी,

चटक माहे मिल्यौ कटक चालै ।। २ ।।
तड़ा तड़ि तोब करि गयण तड़कै तड़ित,
महाझड़ झड़ि करि झूझ मंड्यौ ।
कड़ा किड़ि कोध करि काल़ कटका कीयौ,
खिणकरै बल़ खल़ सबल़ खंड्यौ ।। ३ ।।
सरस वांना सगल कीध सजल़ थल़,
प्रगट पुहवी निपट प्रेम प्रघल़ा ।
लहकती लाछि वलि लील लोको लही,
सुध मन करै धर्मशील सगल़ा ।। ४ ।।

३. श्री महावीर जन्म

सफल़ थाल़ वागा थिया धवल़ मंगल़ सयल़
तुरत त्रिभुवन हुआ हरष त्यारां ।
धनद कोठार भंडार भरिया धने,
जनमियो देव व्रधमान ज्यारां ।। १ ।।
वार तिण मेरगिरि सिहर न्ववरावियौ
भला सुर असुरपति हुआ मेल़ा ।
सुद्रव वरषा हुई लोक हरष्या सहु,
वाह जिनवीर री जनम वेला ।। २ ।।
मिहर जगि ऊगतें पूगतें मनोरथ
जुगति जाचक लहैं दान जाचा ।
मंडिया महोछव सिधारथ मौहले,
सुपन त्रिसला सुतन किया साचा ।। ३ ।।

करण उपगार संसार तारण कल्ह.,
आप अवतार जगदीस आयौ ।
धनो धन जैन धर्म सीम धारणधणी,
जगतगुर भले महावीर जायौ ॥ ४ ॥

४. शत्रुञ्जय महिमा

सरब पूरब सुकृत तीये किया सफल,
लाभ सहु लाभ में अधिक लीया ।
सफल सहु तीरथां सिरे सेत्रुज री,
यात्रा कीधी तियां धन्न जीया ॥ १ ॥
सुजस परकासता मिले संघ सासता,
शास्त्रे सासता विरुद सुणिजे ।
ऋषभ जिणराज पुंडरीक गिरि राजीयो,
भेटिया सार अवतार भणिजे ॥ २ ॥
कांकरै कांकरै कोडि कोडी किता,
साधु शुभ ध्यान इण थान सीधा ।
साच सिद्धक्षेत्र शुद्ध चेत सुं सेवतां,
कीध दरसण नयनसफल कीधा ॥ ३ ॥
तासु दुरगति न ह्वै नरक त्रियंच री,
सुगति सुर नर लहै सुगति सारी ।
विमल आतम तिको विमलगिरि निरखसी
धनो धन श्री धर्मसील धारी ॥ ४ ॥

५. धरती की ममता

भोगवी किते भू किता भोगवसी
मांहरी मांहरी करड मरै ।
रोठी तजी पातलां ऊपरि,
कूकर मिलि मिलि कलह करै ॥ १ ॥
भपटि धरणि कितेइ धुंसी,
धरि अपणाइत केट ध्रुवै ।
धोबा तणी सिला परि धोबी,
हूं पति हूं पति करै हुवै ॥ २ ॥
इण इल किया किता पति आगै,
परतिख किता किता परपूठ ।
वसुधा प्रगट दीसती वेश्या,
भूफै भूप भुजंग सुभूठ ॥ ३ ॥
पातल सिला वेश्या प्रथ्वी,
इण न्यारां री रीत इसी ।
ममता करै मरै सो मूरख,
कहै धमसी धणियाप किसी ॥ ४ ॥

६. राष्ट्रवीर शिवाजी

सकति काइ साधना किना निज भुज सकति,
वड़ा गढ़ धूणिया बीर बांकै ।
अवर उमराव कुण आइ साम्हौ अड़ै,
सिवा री धाक पातिसाह सांकै ॥ १ ॥

खसर करता तिके असुर सहु खूंदिया,
जीविया तिके त्रिणौ लेहि जीहै ।
सबद आवाज सिवराज री सांभलै,
बिली जिम दिली रो धणी बीहै ॥ २ ॥
सहर देखे दिली मिले पतिसाह सूं,
खलक देखत सिवौ नाम खारै ।
आवियौ वले. कुसले. दले. आप रे ।
हाथ घसि रह्यौ हजरत्ति हारै ॥ ३ ॥
कहर म्लेच्छां शहर डहर कंद काटिवा,
लहर दरियाव निज धरम लोचै ।
हिंदुऔ राव आइ दिली लेसी हिवै,
सबल मन मांहि सुलतांण सोचै ॥ ४ ॥

उपर कविवर धर्मवर्द्धन के ६ डिंगल गीत इसलिए प्रस्तुत किए गए हैं कि इनके द्वारा विषयगत विविधता प्रकट हो सके। कविवर ने विविध विषयों में डिंगलगीत रच कर इस शैली का महत्त्व प्रकाशित किया है। डिंगलगीतों का विषय केवल युद्धवर्णन अथवा विरूदगान तक ही सीमित नहीं है। इस में देवस्तुति, प्रकृति वर्णन, निर्वेद एवं राष्ट्रीयता आदि तत्त्वों का भी सम्यक् संन्निवेश दृष्टिगोचर होता है। कविवर धर्मवर्द्धन के गीतों की डिंगल भी प्रसादगुण धारण किए हुए है। यह इनकी अपनी विशेषत्ता है।

कविवर धर्मवर्द्धन ने अनेक गेय पदों की भी रचना की है। ये पद अधिकांश में औपदेशिक अथवा स्तवन रूप हैं

और पदों की भाषा पिंगल है। कविवर के कुछ पदों को उदाहरण-स्वरूप यहां दिया जाता है :—

१. राग तोड़ी

तुं करे गर्व सो सर्व वृथा री।
स्थिर न रहे सुर नर विद्याधर
ता पर तेरी कौन कथा री॥ १॥
कोरिक जोरि दाम किये इक ते,
जाकैं पास वि दाम न था री।
उठि चल्यो जब आप अचानक,
परिय रही सब धरिय पथा री॥ २॥
संपद आपद दुंहु सोकनि के,
फिकरी होइ फंद में फथा री।
सुधर्मशील धरे सोउ सुखिया,
सुखिया राचत मुक्ति मथारी॥ ३॥

२. राग सामेरी

मन मृग तुं तन वन में मातौ।
केलि करे चरे इच्छाचारी जाणे नहीं दिन जातो॥ १॥
माया रूप महा मृग त्रिसनां, तिण में धावे तातो।
आखर पूरी होत न इच्छा, तो भी नहीं पछतातो॥ २॥
कामणी कपट महा कुडि मंडी, खबरि करे फाल खातो।
कहे धर्मसीह उलंगीसि वाको, तेरी सफल कला तो॥ ३॥

जैन विद्वानों द्वारा लोक साहित्य का बड़ा उपकार हुआ है। जहां उन्होंने अपनी रचनाओं के लिए लोककथाओं का आधार लेकर बड़ी ही रोचक एवं शिक्षाप्रद सामग्री प्रस्तुत की है, वहां उन्होंने लोकगीतों के क्षेत्र में भी विशेष कार्य किया है। उन्होंने लोकगीतों की धुनों के आधार पर बहुत अधिक गीतों की रचना की है और साथ ही उनकी आधार-भूत धुनों के गीतों की आद्य पंक्तियां भी अपनी रचनाओं के साथ लिख दी हैं। इस प्रकार हजारों प्राचीन लोकगीतों की आद्य पंक्तियां इन धर्म प्रचारक कवियों की कृपा से सुरक्षित हो गई[२]। मुनि धर्मवर्द्धन विरचित अनेक गीत भी इसी रूप में हैं। उनके कुछ गीतों की धुनें इस प्रकार हैं :—

१. मुरली बजावै जी आवो प्यारो कान्ह।
२. आज निहेंजो दीसै नाहलो।
३. केसरियो हाली हल खड़ हो।
४. धण रा ढोला।
५. ढाल, सुंबरदेरा गीत री।
६. ढाल, नणदल री।
७. उड रे आंबा कोइल मोरी।
८. हेम घड्यो रतने जड्यो खुंपो।
९. कपूर हुवै अति ऊजलो रे।

---

२. 'जैन गुर्जर कवियो' भा० ३ खं० २ में ऐसी प्राचीन 'देशियों' की अति विस्तृत सूची दी गई है, जो द्रष्टव्य है।

१०. सुगुण सनेही मेरे लाला।
११. दीवाली दिन आवीयउ।

मुनि धर्मवर्द्धन का जीवन त्यागमय था एवं जनता में सद्धर्म का प्रचार करना ही उनका मुख्य कार्य था। अतः उनकी रचनाओं में औपदेशिक एवं धार्मिक सामग्री का पाया जाना सर्वथा स्वाभाविक है। वे जैन शासन में थे। उनके हृदय में जैन तीर्थङ्करों एवं आचार्यों के प्रति अगाध भक्ति थी, जो उनकी अधिकांश रचनाओं का प्रधान विषय है। इन रचनाओं से मुनिवर के हृदय की भक्ति टपकी है। यहां कुछ उदाहरण दिए जाते हैं :—

१. संघ (छप्पय)

वंदो जिन चौवीस चवदसे बावन गणधर।
साधु अट्ठावीस लाख सहस अड़तीस सुखंकर॥
साध्वी लाख चम्माल सहस छयालिस चउसय।
श्रावक पचपन लाख सहस अड़ताल समुच्चय॥
श्राविका कोडि पंच लाख सहु, अधिक अठावीस सहस अख।
परिवार इतो संघ ने प्रगट, श्री धर्मसी कहै करहु सुख॥

२. श्री जिनदत्तसूरि (सवैया)

बावन वीर किए अपने वश, चौसट्ठि योगिनीं पाय लगाई।
डाइण साइणि, व्यंतर खेचर, भूत परेत पिसाच पुलाई।
बीज तटक भटक कटूक, अटक रहै पें खटक न कांई।
कहै धर्मसीह लंघे कुण लीह, दीयै जिनदत्त की एक दुहाई।

३. श्री जिनचंद्रसूरि (कवित्त)

जैसे राजहंसनि सौं राजे मानसर राज,
जैसे विंध भूधर विराजै गजराज सौं।
जैसे सुर राजि सुं जु सोभ सुरराज साजै,
जैसे सिंधुराज राजै सिंधुनि के साज सौं।
जसे तार हरनि के वृन्द सौं विराजे चंद,
जैसे गिरराज राजै नंद वन गाज मौं।
जैसे धर्मशील मौं विराजै गच्छराज तैसे
राजै जिनचंदसूरि संघ के समाज मौं।

जनता में सद्धर्म का प्रचार करने का मुख्य अंग आचरण एवं व्यवहार की शुद्धि है। मुनिवर ने इन विषयों पर भी बहुत कुछ लिखा है। इसी श्रेणि में उनकी नीति-प्रधान रचनाएँ हैं। इनमें कवि के दीर्घजीवन का सार समाया हुआ है। यहां कुछ उदाहरण इस सम्बंध में प्रस्तुत किए जाते हैं :—

१. भाव

भाव संसार समुद्र की नाव है,
भाव बिना करणी सब फीकी
भाव क्रिया ही कौ राव कहावत,
भाव ही तें सब बात है नीकी।

दान करौ बहु ध्यान धरौ,
तप जप्प की खप्प करौ दिन ही की ।
बात को सार यहै धर्मसी इक,
भाव बिना नहीं सिद्धि कहीं की ।।४५।।
(धर्म बावनी)

२. मधुर वचन

बहु आदर सूं बोलियै, वारु मीठा बैण ।
धन विण लागां धर्मसी, सगला ही ह्वै सैण ।।
सगला ही ह्वै सैण, बैण अमृत वदीजै ।
आदर दीजै अधिक, कदे मनि गर्व न कीज ।।
इणा बातै आपणा, सैंण हुइ सोभ वदै सहु ।
मानै निसचै मीत, बोल मीठो गुण छै बहु ।।४४।।
(कुण्डलिया बावनी)

३. मोर और पंख

कहै पांखा सुणि केकि, कंत तुझ लागि केहै ।
करि कु मया तुं कांइ, फूस ज्युं अम्ह पां फेडै ।।
सुन्दर माहरे संग, कहै सहु तोने कलाधर ।
नहीं तर खुथड़ो निरखी, नेट निन्दा करसी नर ।।
अम्ह घणी ठाम बीजी अवर, धरमी आदर करि धरै ।
मांहरै सुगुण सोभा मुगट, श्रीपति पिण करसी सिरै ।।२२।।
(छप्पय बावनी)

४. दृष्टान्त

मोटां रे पिण कष्ट में, जतन नेह सहु जाय ।
रातं रमणी रांन में, नांखि गयौ नलराय ॥२२॥
राज लैण मांहे रहै, वडां तणी मति वक्र ।
भरतै मारण भ्रात नैं, चपल चलायौ चक्र ॥२३॥
दान अदान दुहूं दिसी, अधिक भाव री ओर।
नवल सेठ नै फल निबल, जीरण नै फल जोर ॥२४॥

(दृष्टान्त छतीसी)

५. काया

काया काचे कुंभ समान कहै ककौ ।
धांखै धेखी काल सही देसी धकौ ॥
करवत वहतां काठ ज्युं आउखो कटै ।
परिहां, न धरै तोइ धर्मसीख जीव नट ज्युं नटै ॥११॥

(परिहां बत्तीसी)

६. सीख

राजा मित्र म जाणे रंग, सुमाणस रो करिजे संग।
काया रखत तपस्या कीजै, दान वलै धन सारु दीजै ॥१०॥
जोरावर सुं मत रमे जुऔ, करिजे मत घर मांहे कुऔ ।
वैदां सुं मत करजे वैर, गालि बोले तो ही न कहै गैर ॥११॥

(सवासौ सीख)

७. शिक्षाकथन

सुगुरु कहै सुण प्राणिया, धरिजै धर्म वट्टा।
पूरब पुण्य प्रमाण तैं, मानव भव खट्टा।
हिव अहिलौ हारे मतां, भांजे भव भट्टा।
लालच में लागै रखै, करि कूड़ कपट्टा ॥२॥

उलझै नौं तु आप सुं, ज्युं जोगी जट्टा।
पाचिस पाप संताप मैं, ज्युं भोभरि भट्टा।
भमसी तुं भव नवा नवा, नाचै ज्युं नट्टा।
ऐ मंदिर ऐ मालिया, ऐ ऊचां अट्टा ॥३॥

हयवर गयवर हींसता, गौ महिषी थट्टा।
लाछ दु लीपी भूंबका, पलिंग सु घट्टा।
मांनिक मोति मूंदड़ा, परवाल प्रगट्टा।
आइ मिल्या है एकठा, जैसा चलवट्टा ॥४॥

(गुरु शिक्षा कथन निसाणी)

ऊपर के उदाहरणों से प्रकट होता है कि समर्थ-कवि धर्मवर्द्धन ने राजस्थान में प्रचलित प्रायः सभी काव्य शैलियों को अपनाया है और इस प्रकार की अपनी रचनाओं में वे पूरे सफल हुए हैं। राजस्थानी साहित्य में काव्यगत नामों के अनेक प्रकार हैं और उन सब में रचना शैली की दृष्टि से अपनी अपनी विशेषताएँ हैं। मुनि धर्मवर्द्धन ने उन सब को अपनी वाणी का सुफल भेंट किया है। ऊपर के उदाहरणों के अतिरिक्त अन्य काव्यशैलियों से सम्बंधित कवि की 'नेमि

'राजमती बारहमासा', 'श्री गौड़ी पार्श्वनाथ छन्द', 'शील रास' 'श्रीमती चौढालिया' एवं 'श्री दशार्णभद्र राजर्षि चौपई' आदि रचनाओं के नाम लिए जा सकते हैं। इतनी अधिक काव्यशैलियों में सफल रचनाएं प्रस्तुत करना कवि की सामर्थ्यका द्योतक है। राजस्थान के कवियों में मुनि धर्मवर्द्धन की यह विशेषता वस्तुतः ही अत्यंत गौरव का विषय है।

पुराने कवियों में चित्रकाव्य की रचना करने का चाव रहा है। कविवर धर्मवर्द्धन ने भी इस प्रकार की रचनाएँ की हैं। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं:—

साधु स्तुति (सर्व लघु अक्षर)

धरत धरम मग, हरत दुरित रग,
करत सुकृत मति हरत भरम सी।
गहत अमल गुन, दहत मदन वन,
रहत नगन तन सहत गरम सी।
कहत कथन सत, वहत अमल मन,
तहत करन गण महति परम सी।
रमत अमित हित सुमति जुगत जति,
चरन कमल नित नमत धरमसी।

देव गुरु वंदना (इकतीसा, तेवीसा सवैया)[1]

शोभ(त) घणी(जु) अति देह(की) वणी(है) दुति,
सूरि(ज) समा(न) जसु तेज(मा) वदा(य) जू।

१. इस पद्य के कोष्ठक वाले अक्षरो को छोड कर पढ़ने से यह 'तेवीसा' सवैया बन जाता है।

भूप)ति) नमै(है) नित नाम(कौ) प्रता(प) पहु,
देख(त) ताही(ही) दुख नाहि(है) कदा(य) जू।
पूर(ण) बडे(ई) गुण सेव(के) करैं(थैं) सुख,
वंद(त) त्रही(ही) बहु लोक (स)मुदा(य) जू।
देत(है) बहू(त) सुख देव (सु)गुरु(हि) नित,
दोऊ(कौ) नमै(है) ध्रमसीह(यौ) सदा(य) जू।

साथ ही एक हीयाली भी उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत की जाती है :—

हीयाली

चतुर कहौ तुम्है चुंप सुं, अरथ हीयाली एहो रे।
नारी एक प्रसिद्ध छै, सगला पास सनेहो रे ॥१॥
ओलै बैठा एकली, करै सगला ई कामो रे।
राती रस भीनी रहे, छोडै नहीं निज ठामो रे ॥२॥
चाकर चौकीदार ज्युं, बहुला राखै पासो रे।
काम करावै ते कन्हा, विलसै आप विलासो रे ॥३॥
जोड़े प्रीति जणै जणै, त्रोड़े पिण तिण वारो रे।
करिज्यो वस धर्मसी कहै, सुख वांछो जो सारो रे ॥४॥

(जीभ)

इसी प्रकार कवि समाज में 'समस्यापूर्त्ति' का भी विशेष प्रचलन रहा है। काव्यविनोद करने का यह एक सुन्दर तरीका है। समस्या की पूर्त्ति के लिए प्रसंगोद्भावना करनी पड़ती है। इसमें प्रखर कल्पना-शक्ति की आवश्यकता है।

कविवर धर्मवर्द्धन ने अनेक समस्याओं की सुन्दर एवं रोचक रूप में पूर्ति की है। उनमें से कई तो संस्कृत में हैं। आगे कुछ उदाहरण इस दिशा में प्रस्तुत किए जाते हैं, जो अतीव सरस एवं रोचक हैं :—

१. समस्या, भावी न टरे रे भैया, भावे कछु कर रे [*]।

श्रवण भरै तो नीर, मार्यो दशरथ तीर,
ऐसी होनहार कौण मेटि सके पर रे।
पांडव गये राज हार, कौरव भयौ संहार,
द्रौपदी कुदृष्टि मार्यो कीचक किचर रे।
केती धर्मसीख दइ, सीत विष वेलि वइ,
रावन न मानि लइ जावन कुं घर रे।
भावी को करनहार, सो भी भम्यौ दश वार,
भावी न टरत भैया, भावै कछु कर रे।

२. समस्या, नीली हरी विचि लाल ममोला।

एक समै वृषभान कुमारि,
सिंगार सजै मनि आनिइ लोला।
रंग हर्ये सब वेस बणाइ कै,
अंग लुकाइ लए तिहि ओला।
आए अचाण तहां घनश्याम,
लगाइ झरी करै केलि कलोला।
घुंघट में ए कर्यो अधरामनु,
नील हरी विचि लाल ममोला।

---

*. यह आणंदरामजी नाजर द्वारा दी हुई समस्या की पूर्ति है। ये उस समय बीकानेर के राज्यमंत्री थे।

३. समस्या, टेरण के मिस हेरण लागी।

चुंप सु ं च्यार सखी मिलि चौक में,

गीत विवाह के गावन लागी।
गौख तैं कान्ह कौ साद सुणे तैं,

भइ वृषभान सुता चित रागी।
जाइ नहीं चितयौ उत ओर,

सखीनि कै बीचि में बैठि सभागी।
उतैं कर कौ सुकराज उड़ाइ कै,

टेरण के मिसि हेरण लागी॥

४. समस्या, हरिसिद्धि हसे हरि यों न हसे।

हनुमान हरौल कियैं चढै राम

तर्यो निधि संनिधि लंक ध्वसे।
करि रौद्र संग्राम लंकेश कु ं मारि,

कियौ सुखवास की नास नसे॥
शिव चिंत्यो त्रिलोक कौ कंटक सोऊ,

नमावतौ मो पद सीस दसे।
उत दैत्य हसे उत देव हसे,

हरिसिद्धि हसे हर यौं न हसे।

इसी प्रसंग में 'कहावत' के साथ समाप्त होने वाले कविवर के अनेक पद्यों में से उदाहरण स्वरूप यहां एक पद्य प्रस्तुत किया जाता है :—

फूल अमूल दुराइ चुराइ,
लीए तौ सुगंध लुके न रहैंगे।
जो कछु आथि के साथ सु हाथ है,
ता तिन कुं सब ही सलहैंगे।
जो कछु आपन में गुन है,
जन चातुर आतुर होइ चहैंगे।
काहे कहो धर्मसी अपने गुण,
बूठे की बात बटाऊ कहैंगे।

महोपाध्याय धर्मवर्द्धन संस्कृत के विद्वान थे। उन्होंने संस्कृत के सुभाषित श्लोकों को अनूदित करके भी अपनी रचनाओंमें यत्रतत्र स्थान दिया है। इस विषयमें उदाहरण देखिए :—

रीस भयो कोइ रांक, वस्त्र विण चलीयौ बाटै।
तपियो अति तावड़ौ, टालतां मुसकल टाटै।
बील रुंख तलि बेसि, टालणो मांड्यो तड़कौ।
तरु हुंती फल त्रूटि, पड़यो सिर माहे पड़कौ।

आपदा साथि आगै लगी, जायै निरभागी जठे।
कर्मगति देख धर्मसी कहै, कहौ नाठो छुटै कठे ॥१३॥
(छप्पय बावनी)

खल्वाटो दिवसेश्वरस्य किरणैः सन्तापिते मस्तके,
गच्छन् देशमनातपं द्रुतगतिस्तालस्य मूलं गतः।
तत्राप्यस्य महाफलेन पतता भग्नं सशब्दं शिरः,
प्रायो गच्छति यत्र दैवहतकस्तत्रैव यान्त्यापदः॥
(नीतिशतकम्-६६)

पंकज मांझि दुरेफ रहै, जु गहै मकरंद चितै चित ऐसौ।
जाइ राति जु ह्वै हैं परभात, भयैं रवि दोत हसै कंज जैसो।
जाउंगो मैं तब ही गज नै जु, मृनाल मरोरि लयौ मुहि तैसो।
युं धर्मसीह रहै जोउ लोभित, ह्वै तिन की परि ताहिं अंदेसो।
(धर्म बावनी—४२)

रात्रिर्गमिष्यति भविष्यति सुप्रभातं
भास्वानुदेष्यति हसिष्यति पङ्कजश्रीः।
इत्थं विचिन्तयति कोशगते द्विरेफे
हा मूलतः कमलिनीं गज उज्जहार॥

इस प्रकार महोपाध्याय धर्मवर्द्धन के काव्य की विविधता पर विचार करने से वे एक समर्थ एवं सरस कवि के रूप में मूर्तिमान होते हैं। उनकी रचनाएं उनके जीवन के अनुरूप हैं और साथ ही रोचक तथा शिक्षाप्रद भी कम नहीं

है। उनके काव्य के सम्बंध में उन्हीं के शब्दों में इस प्रकार यथार्थ ही कहा जा सकता है :—

एक एक तैं विसेप पंडित बसैं असेष,
रात दिन ज्ञान की ही वात कुं धरतु है।
वैदक गणक ग्रन्थ जानैं ग्रह गणन पंथ,
और ठौर के प्रवीण पाइनि परतु है।
करत कवित सार काव्य की कला अपार,
श्लोक सब लोकनि के मन कुं हरतु है।
कहै ध्रमसीह भैया पंडिताई कहुं कैसी,
दोहरा हमारे देस छोहरा करतु है।

हिंदी विभाग,
आर. एन. रुइया कालेज,
रामगढ़, शेखावाटी
दि० २६-१०-६१

मनोहर शर्मा

महोपाध्याय धर्मवर्द्धन

राजस्थानी-साहित्य की जैन विद्वानों ने बहुत बड़ी सेवा की है। १३वीं शताब्दी से अब तक सैंकड़ों जैन कवि हो गये हैं जिनकी रचनाओं का प्रमाण कई लाख श्लोकों का है। गद्य और पद्य दोनों प्रकार का विविध विषयक राजस्थानी साहित्य जैन विद्वानों के रचित है। जैन विद्वानों में प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश, राजस्थानी, हिन्दी, सभी भाषाओं के विद्वान हो गये हैं। इनमें से कुछ विद्वानों ने इन सभी भाषाओं में रचनाएं की हैं कुछने केवल राजस्थानी में ही और कुछ ने राजस्थानी, हिन्दी, गुजराती भाषा में ही अपनी सारी रचनाएं की है। यहां उनमें से एक ऐसे कवि और उनकी रचनाओं का परिचय दिया जा रहा है जिन्होंने विशेषतः संस्कृत, राजस्थानी,हिन्दी इन भाषाओं में रचनाएं की हैं। वैसे उनके रचित षट-भाषामय स्तोत्र और सिन्धी भाषा के दो स्तवन भी प्राप्त हैं। अपने समय के वे महान् विद्वानों में से थे। अपने गच्छ में ही नहीं राज-दरबारों में भी इन्हें अच्छा सन्मान प्राप्त था। उन कविश्री का नाम है 'धर्मवर्द्धन'।

जन्म

कविवर धर्मवर्द्धन का मूल नाम धर्मसी था जो उनकी कई रचनाओं में भी प्रयुक्त है। जैनमुनि-दीक्षा के

अनंतर उनका नाम धर्मवर्द्धन रखा गया था। कवि के जन्मस्थान, तिथि, वंश, माता-पिता, आदि के संबंध में विशेष जानकारी तो प्राप्त नहीं होती पर हमारे संग्रह के एक पत्र में पं० धर्मसी के परिवार की विगत लिखा है उसमें उनका गोत्र ओसवाल-वंशीय—आंचलिया लिखा है। यद्यपि पं० धर्मसी नामक और भी कई यति-मुनि हो गये हैं, इसलिए उस पत्र में उल्लिखित धर्मसी आप ही हैं या अन्य कोई, यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता। आपकी भाषा राजस्थानी प्रधान है और दीक्षा भी मारवाड़ राज्यान्तर्गत साचोर में हुई थी, इसलिए आपका जन्मस्थान राजस्थान और विशेषतः मारवाड़ का ही कोई ग्राम होना चाहिये। धर्मसी या धर्मसिंह नामकरण उनके उच्चकुल का द्योतक है। उस समय ओसवाल जाति आदि में ऐसे और भी कई व्यक्तियों के नाम पाये जाते हैं। आपके जन्म की निश्चित तिथि तो ज्ञात नहीं हो सकी पर आपकी सर्व प्रथम रचना 'श्रेणिक चौपाई' संवत १७१६ चंदरीपुर † में रची गई थी और उसकी प्रशस्ति में आपने अपने को १६ वर्ष का बतलाया है। इससे आपका जन्म संवत् १७०० में हुआ प्रतीत होता है। यथा—

लघुवय में उगणीसवे वर्षे, कीधी जोड़ कहावे
आयो सरस वचन को इण में, सो सतगुरु सुपसाय रे ॥७॥

---

† सतरसें उगणी से वरसे 'चंदेरीपुर चावै।'

जैन मुनि-दीक्षा

आपकी रचनाओं में संवतोल्लेख वाली 'श्रेणिक चौपाई' संवत् १७१६ में रचित होने से आपकी शिक्षा दीक्षा लघुवय में ही हो चुकी थी; निश्चित होता है। खरतर गच्छ के आचार्य जिनरत्नसूरिजी के पट्टधर जिनचन्द्रसूरिजी ने जिन जिन मुनियों को दीक्षा दी थी, उस दीक्षा नंदी की नामावली के अनुसार आपकी दीक्षा संवत् १७१३ चेत्र बदी ६ साचोर में जिनचन्द्रसूरिजी के हाथ से हुई थी। उस समय आपका नाम परिवर्तन करके धर्मवर्द्धन रखा गया था और विजयहर्ष जी का शिष्य बनाया गया था।

गुरु-परम्परा

आपने अपनी रचनाओं की प्रशस्ति में जो गुरु-परम्परा के नाम दिये हैं, उसके अनुसार आप जिनभद्रसूरि शाखा के उपाध्याय साधुकीर्ति के शिष्य साधुसुन्दर शिष्य वाचक विमलकीर्ति के शिष्य विमलचन्द्र के शिष्य विजयहर्ष के शिष्य थे। यथा—

गरवो श्री खरतर गच्छ गाजे, श्री जिनचन्द्रसूरि राजे जी।
साखा जिनभद्रसूरि सहाजे, दौलति चढ़ी दिवाजे जी।
पाठक प्रवर प्रगट पुन्यायी, साधुकीरति सवाई जी।
साधुसुन्दर उवझाय सदाइ, विद्या जस वसाई जी।
वाचक विमलकीरति मतिमंता, विमलचन्द्र दुतिवंता जी।

विजयहर्ष जसु नाम बधंतां, विजयहर्ष गुण-व्यापी जी।
सद्गुरु वचन तणे अनुसारी, धर्म सीख मुनि धारी जी।
कहे धर्मवर्द्धन सुखकारी, चउपइ ए सुविचारी जी।

(अमरसेन वयरसेन चौपाई, संवत् १७२४, सरसा)

इस प्रशस्ति में उल्लिखित जिनचन्द्रसूरि तो आपके दीक्षा-गुरू थे और उस समय के गच्छनायक थे। जिनभद्रसूरि सुप्रसिद्ध जैसलमेर ज्ञानभंडार आदि के स्थापक हैं जिन्हें संवत् १४७५ में आचार्य पद प्राप्त हुआ था और १५१४ में जिनका स्वर्गवास हुआ। उनकी परम्परा के उपाध्याय साधुकीर्ति से धर्मवर्द्धनजी ने अपनी परम्परा जोड़ी है। साधुकीर्ति का समय संवत् १६११से १६४२ तक का है। ये बहुत अच्छे विद्वान थे। हमारे सम्पादित "ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह" में आपके जीवन से संबंधित ६ रचनाएं प्रकाशित हुई हैं। उनके अनुसार "ओशवाल वंशीय सचिंती गोत्र के शाह वस्तिग की पत्नी खेमलदे के आप पुत्र और दयाकलशजी के शिष्य अमरमाणिक्यजी के सुशिष्य थे। आप प्रकाण्ड विद्वान थे। संवत् १६२५ मि० व० १२ आगरे में अकबरकी सभा में तपागच्छीय बुद्धिसागरजी को पोषह की चर्चा में निरुत्तर किया था और विद्वानों ने आपकी बड़ी प्रशंसा की थी, संस्कृत में आपका भाषण बड़ा मनोहर होता था।

संवत १६३२ माधव (वैशाख) शुक्ला १५ को जिनचंद्रसूरिजी ने आपको उपाध्याय पद प्रदान किया था और अनेक स्थानों में विहार कर अनेक भव्यात्माओं को आपने सन्मार्ग-गामी बनाया था।

सवन् १६४६ में आपका शुभागमन जालोर हुआ, वहां माह कृष्ण-पक्ष में आयुष्य की अल्पता को ज्ञात कर अनशन उच्चारणपूर्वक आराधनाकी और चतुर्दशी को स्वर्ग सिधारे। आपके पुनीत गुणों की स्मृति में वहां स्तूप निर्माण कराया गया, उसे अनेकानेक जन समुदाय वन्दन करता है। साधुकीर्तिजी अमरमाणिक्य के शिष्य थे, जिनका समय संवन् १६०० के करीब का है अतः जिनभद्रसूरि और अमर-माणिक्यजी के बीच की परम्परा में तीन-चार नाम और होने चाहिये। साधुकीर्ति के आषाढ़भूति प्रबंध के अनुसार वा० मतिवर्द्धन शिष्य मेरुतिलक शिष्य दयाकलश के शिष्य अमरमाणिक्य थे। पर साधुकीर्तिजी बहुत प्रसिद्ध विद्वान हुए इसलिए धर्मवर्द्धनजी ने अपनी गुरु परम्परा के वे बीच के नाम नहीं देकर साधुकीर्तिजी से ही अपनी परम्परा मिला दी है। साधुकीर्तिजी की संस्कृत और राजस्थानी की कई रचनाएं मिलती हैं, उनमें से प्रधान रचनाओं की नामावली नीचे दी जा रही है।

(१) सप्तस्मरण बालावबोध-संवन् १६११ दीवाली, बीकानेर के मंत्री संग्रामसिंह के आग्रह से रचित।

(२) सतरेभेदी पूजा—सं० १६१८ श्रावणसुदि ५ पाटण।

(३) संघपट्टकवृत्ति—सं० १६१६।

(४) कायस्थिति बालावबोध सं० १६२३ महिम।

(५) आषाढ़भूति प्रबंध—संवत् १६२४ विजयादशमी, दिल्ली, श्रीमाल वंश पापड़ गोत्र साह तेजपाल कारित।

(६) मौन एकादशी स्तवन—संवत् १६३५ जेठसुदी ३, अलवर।

(७) नमि-राजर्षि चौपाई—संवत् १६३६ माघ सुदी ५, नागौर।

(८) शीतल जिन स्तवन—संवत् १६३८, अमरसर।

(९) भक्तामर स्तोत्रावचूंरि।

(१०) दोषावहार बालावबोध।

(११) विशेष नाममाला।

(१२) सव्वत्थ वेलि।

(१३) षट् कर्मग्रन्थ टब्बा।

(१४) गुणस्थान विचार चौपई।

(१५) स्थूलिभद्र रास।

(१६) अल्पाबहुत्त्व स्तवन आदि।

साधुकीर्तिजीके गुरुभ्राता वाचक कनकसोम भी अच्छे विद्वान थे, जिनकी संवत १६५५ तक की २१ रचनाएं प्राप्त हुई हैं। राजस्थानी भाषा के आप सुकवि थे।

साधुकीर्तिजी के शिष्य साधुसुन्दर भी बहुत अच्छे व्याकरणी थे। उनके रचित धातुरत्नाकर, क्रियाकल्पलता टीका (सं० १६८०, दीवाली) उक्तिरत्नाकर, और पार्श्व स्तुति (सं १६८३), शांतिनाथ स्तुति वृत्ति प्राप्त हैं। साधुसुन्दर के शिष्य उदयकीर्ति रचित पदव्यवस्था टीका (सं १६८१) और पंचमी स्तोत्र उपलब्ध हैं।

साधुकीर्तिजी के अन्य शिष्य विमलतिलक के शिष्य विमलकीर्ति भी अच्छे विद्वान् थे। उनके रचित चन्द्रदूत काव्य (सं० १६८१), आवश्यक बालावबोध, जीवविचार बा०, जयतिहुअण बा०, पक्खीसूत्र बा०, दशवैकालिक बा०, प्रतिक्रमण समाचारी टब्बा, गणधर सार्द्धशतक टब्बा, षष्टिशतक बा०, उपदेशमाला बा०, ईकीसठाणा टब्बा, एवं यशोधर रास, कल्पसूत्र समाचारी वृत्ति, और कई स्तवन, सज्झाय आदि प्राप्त हैं। इनके सतीर्थ्य विजयकीर्ति के शिष्य विमलरत्न रचित वीरचरित्र बालावबोध (संवत् १७०२ पोष सुदी १० साचोर) प्राप्त है। इन्हीं विमलकीर्ति के शिष्य विजयहर्ष हुए और उनके शिष्य धर्मवर्द्धन। विमलरत्न रचित विमलकीर्ति गुरू गीत के अनुसार विमलकीर्ति हुँबड़ गोत्रिय श्रीचन्द शाह की धर्मपत्नी गवरा की कुक्षि से जन्मे थे। संवत् १६५४ माघ सुदी ७ को उपाध्याय साधुसुन्दरजी ने आपको दीक्षित किया। गच्छनायक श्रीजिनराजसूरि ने इन्हें वाचक-पद प्रदान किया। संवत् १६९२ में आपने

मुलतान में चौमासा किया और सिन्धु देशके फिरहोर नगर में अनसन आराधनापूर्वक स्वर्ग सिधारे।

इस प्रकार हम देखते है कि कविवर धर्मवर्द्धनजी की गुरुपरम्परा में कई विद्वान् हो गये हैं और उस विद्वत् परम्परा में आपकी शिक्षा-दीक्षा होने से आपकी प्रतिभा भी चमक उठी और १६ वर्ष जैसी छोटी आयु में श्रेणिक रास की रचना करके आपने अपनी काव्य-प्रतिभा का परिचय दिया।

धर्मवर्द्धनजी ने १३ वर्ष की अल्पायु में ही जैन-दीक्षा ले ली थी इसलिए घर में रहते हुए तो साधारण अध्ययन ही हुआ होगा। दीक्षान्तर अपने गुरू श्रीविजयहर्षजी के पास थोड़े ही वर्षों में आपने व्याकरण, काव्य, न्याय, जैनागम, आदि में प्रवीणता प्राप्त करली। फिर अनेक ग्राम नगरों में विहार करके धर्म-प्रचार के साथ साथ अनुभव को बढ़ाया। आपका विहार बीकानेर, जैसलमेर, जोधपुर, चन्देरी, सरसा, देरावर, रिणी, लौद्रवा, बाड़मेर, सूरत, पाटण, खम्भात, अंजार, बेनातट, नवहर, फलौदी, मेड़ता, पाली, सोजत, उदयपुर, रतलाम, साचोर, राद्रह, पाटोदी, गारबदेसर, देशनोक, अहमदाबाद, पालीताणा, आदि अनेक ग्राम-नगरों में हुआ। शत्रुंजय, आबू, केसरियाजी, लौद्रवा जैसलमेर, संखेश्वर, गोड़ी-पार्श्वनाथ आदि अनेक जैन तीर्थों की आपने यात्रा की।

आपकी विद्वता की धवलकीर्ति कर्पूर के सुवास की भांति शीघ्र ही चारों ओर फैल गई। फलतः गच्छनायक जिनचन्द्र-सूरिजी ने सं० १७४० में इन्हें उपाध्याय पद से अलंकृत किया और अपने पास में ही इन्हें, रखा। जिनचन्द्रसूरिजी के स्वर्गवास के बाद जिनसुखसूरि गच्छनायक हुए उन्हें आपने विद्याध्ययन भी करवाया था और उनके साथ ही जब तक वे विद्यमान रहे, आप विहार करते रहे। सं० १७७६ में जिनसुखसूरिजी का स्वर्गवास रिणी में हुआ, उनके पट्टधर जिनभक्तिसूरि हुए। उन्हें भी विद्याध्ययन आपने करवाया था। उस समय जिनभक्तिसूरिजी केवल १० वर्ष के ही थे इसलिए गच्छ व्यवस्था भी विशेषतः आपकी देख रेख में, होती रही।

राज्य सम्मान

जैन आचार्यों और विद्वान् मुनियों का तत्कालीन राजाओं, मंत्रियों आदि पर विशेष प्रभाव रहा है। बीकानेर के महाराजा अनूपसिंह, सुजानसिंह, जैसलमेर के रावल अमरसिंह, जोधपुरनरेश जसवंतसिंह, सुप्रसिद्ध दुर्गादास राठोड़ और वीर शिवाजी संबंधी आपके पद्य भी मिले हैं। बीकानेर के महाराजा सुजानसिंहजी ने संवत् १७७५ के माघ सुदी में खरतर गच्छ के आचार्य जिनसुखसूरिजी को पत्र दिया था जो हमारे संग्रह में है. उसमें धर्मसिंहजी की प्रशंसा करते हुए इस प्रकार लिखा है :—
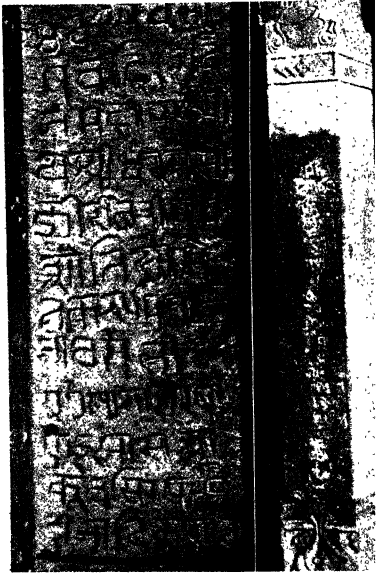
स्मारक स्तंभ, लेख रेलदादाजी, बीकानेर

संघ गुण ज्ञान विशेष विराजै, कविगण उपरि घन ज्यूं गाजै।
धर्मसिंह धरणीतल मांहि, पंडित योग्य प्रणती दल तांहि॥

बीकानेर के तत्कालीन मंत्री नाजर आणंदराम जो कि स्वयं अच्छे कवि और विद्वान थे, आपके प्रति बड़ी श्रद्धा रखते थे। कविवर ने उनकी प्रशंसा में एक सवैया भी रचा है और उनकी दी हुई कि समस्या की पूर्ति भी की है। वह सवैया और समस्यापूर्ति भी इसी ग्रन्थ में आगे छपी है। नाजर आणंदराम रचित 'भगवन् गीता भाषा', गीता महात्म्य' "अज्ञानबोधिनी भाषा-टीका' आदि ग्रन्थ उपलब्ध हैं।

स्वर्गवास :—

सम्वन् १७७६ में जिनसुखसुरिजी का स्वर्गवास और जिनभक्तिसूरिजी की पदस्थापना रिणी में हुई उस समय तो महोपाध्याय धर्मवर्द्धनजी वहीं थे। उसके बाद सम्भवतः बीकानेर पधारे और सम्वन् १७८३—८४ में आपका स्वर्गवास बीकानेर में हुआ। बीकानेर के रेलदादाजी (गुरू-मन्दिर) में एक छतड़ी बनी हुई है, जिसके अनुसार सं० १७८४ के वैशाख वदि १३ महोपाध्याय धर्म-वर्द्धन (धर्मसीजी) की इस छत्री का निर्माण उनके प्रशिष्य शांतिसोम ने करवाया था। छतड़ी के स्तम्भों पर निम्नोक्त दो लेख उत्कीर्णित हैं।

[१] १७८४ वर्षे वैशाख वदि १३ दिने महोपाध्याय श्री धरमसीजी री छतड़ी पं०शांतिसोमेन कारापिता छत्री छःथंभी

सदा २७ लागा। पाखाण इलाख श्री कु सिरपाव दीना वि अणाने।

[२] सं० १७८४ वर्षे मि० वैशाख वदि १३ दिने महो– पाध्याय श्री धर्मवर्द्धनजी री छतड़ी कारापिता शिष्य पं० साम...

शिष्य-परम्परा

कविवर धर्मवर्द्धन के गुरुभ्राता विजयवर्द्धन थे, जिनके रचित कई स्तवन उपलब्ध हैं। आप अधिकांश अपने गुरु विजयहर्षजी के साथ रहा करते थे। इनके शिष्य ज्ञानतिलक व्याकरण और काव्य शास्त्र के अच्छे ज्ञाता थे। इनके रचित 'सिद्धान्तचन्द्रिका वृत्ति' 'संस्कृत विज्ञप्ति लेखद्वय' और कई अष्टक आदि प्राप्त हैं। इनमें १०८ श्लोक का एक 'विज्ञप्ति लेख' मुनि जिनविजयजी सम्पादित 'विज्ञप्ति लेख संग्रह' में हमने प्रकाशित करवाया है। इसमें धर्मवर्द्धनजी सम्बन्धी निम्नोक्त श्लोक उल्लेखनीय है।

पठिता सद्विद्यानां सन्निधिरिव सन्निधौ मुनीशानाम्।
श्री धर्मवर्द्धनगणिः सत्कविरिव भासते स्वभाषा च ॥३४

अलालाटिका धाटिका पण्डितानां,
निराकारव श्चारवो ऽमीरवश्च।
धियो गर्द्धना धर्मतो वर्द्धनाद्या,
विभान्तूपकण्ठे सतां पाठका हि ॥१०१॥
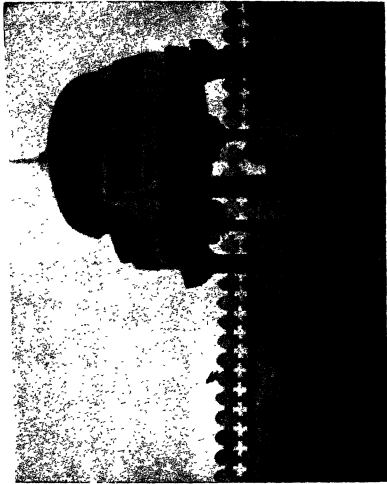
धर्मवर्द्धनजी का स्मारक स्तूप, रेलदादाजी, बीकानेर

भवत्पूर्वजैर्गन्धहस्तित्व मुक्तं,
तदेव क्रमादागतं पूर्वजेषु ।
सदा भावयन्तोऽधुनाविःसभावं,
भवत्सनिधि प्राप्त शोभाविशेषात् ॥१०२॥

पाठकाः सकलशास्त्र पाठकाः शब्दशास्त्रमुरूमध्य जीगपन् ।
ज्ञानतस्तिलकनामकं यकं पाणिनीय मत दर्पणार्पणम् ॥१०३॥

धर्मवर्द्धन के शिष्य कान्हजी जिनका दीक्षानाम कीर्ति-सुन्दर था। वह भी अच्छे कवि थे। इनके रचित निम्नोक्त ६ ग्रन्थ प्राप्त हैं।

[१] अवन्तिसुकमाल चौढालिया—सं० १७५७, मेड़ता ।

[२] मांकण रास सं० १७५७, मेड़ता ।

[३] अभयकुमारादि पांच साधु रास—सं० १७५६, जयतारण ।

[४] ज्ञान छत्तीसी—सं० १७५६ श्रावण २, जयतारण ।

[५] कौतुक बत्तीसी—सं० १७६१ आषाढ ।

[६] कल्पसूत्र-कल्पसुबोधिका वृत्ति—सं० १७६१ अक्षय-तृतीया (पत्र १६४ यति बालचन्दजी संग्रह-चित्तौड़ ।

[७] चौबोली चौपाई—सं० १७६२, थानलेनगर ।

१ इनका मूल नाम नाथा था, जैन दीक्षा सं० १७२६ वैशाख वदी ११ को हुई ।

[८] वाग्विलास कथा संग्रह।

[९] फलौदी पार्श्वनाथ छंद—गाथा १२१।

इनमें से मांकण रास 'मरु भारती' में और वाग्वि—लास कथा संग्रह 'वरदा' में प्रकाशित किया जा चुका है।

कीर्तिसुन्दर के अतिरिक्त धर्मवर्द्धनजी के जयसुन्दर ज्ञान-वल्लभ (गङ्गाराम) आदि और भी कई शिष्य थे। कीर्तिसुन्दर के शिष्य शान्तिसोम और सभारत्न की लिखी हुई कई प्रतियां बीकानेर बृहद्ज्ञानभंडार में हैं। १९ वीं शताब्दी तक धर्म-वर्द्धनजी की शिष्य-परम्परा विद्यमान थी।

कविवर के प्रकाशित ग्रन्थ

प्रस्तुत ग्रन्थ में आपकी जितनी भी लघु रचनाए संस्कृत, राजस्थानी हिन्दी में प्राप्त हुईं, उन्हें प्रकाशित किया जा रहा है। उनकी नामावली अनुक्रमणिका में दी हुईं है इसलिए यहां उसका उल्लेख नहीं किया जा रहा है। यहां केवल उन्हीं रचनाओं का परिचय दिया जा रहा है, जो इस ग्रन्थ के बड़े हो जाने के कारण इसमें सम्मिलित नहीं की जा सकी।

(१) श्रेणिक चौपई

राजगृह के महाराजा श्रेणिक जो भगवान् महावीर के भक्त थे, उनका चरित्र इस ग्रन्थ में दिया गया है। कथा प्रसंग बड़ा रोचक है साथ ही बुद्धिवर्द्धक भी। कवि ने ३२ ढाल

और ७३१ गाथाओं में इसे सं० १७१६ चंदेरीपुर में बनाया। जैसा कि पहले कहा जा चुका है यह कवि की सर्व प्रथम रचना है, जो केवल १६ वर्ष की आयु में बनाई गई थी। इसकी प्रतियाँ बीकानेर के जिनचारित्रसूरि एवं उपाध्याय जयचंदजी आदि के संग्रह में है।

(२) अमरसेन वयरसेन चौपई

सं० १७२४, सरसा में इस राजस्थानी चरित्र काव्य की रचना हुई है। इसकी कई प्रतियां बीकानेर के ज्ञानभण्डारों में है।

(३) सुरसुन्दरी रास

कवि ने इस रास में नवकार मंत्र और शील के महात्म्य संबन्धी अमरकुमार सुरसुन्दरी की कथा चार-खण्डों में गुंफित की है। प्रथम खण्ड में आठ, द्वितीय में ग्यारह तृतीय में आठ, चतुर्थ में बारह ढ़ालें हैं। कुल ६३२ गाथाएं हैं। श्लोक संख्या ९०० है। अन्य प्रति में गाथाओं की संख्या ६१६ भी बतलाई गई है। इस कथा का मूल आधार 'शीलतरंगिणी' नामक ग्रन्थ का कवि ने उल्लेख किया है। सं० १७३६ श्रावण सुदी १५ बेनातटपुर (बिलाड़ा) में इसकी रचना हुई है।

[४] परमात्म-प्रकाश हिन्दी टीका

खण्डेलवाल रेखजी के पुत्र जीवराजके पुत्रके लिये दिगम्बर

'परमात्म प्रकाश' की हिन्दी भाषा टीका सं० १७६२ में कवि ने बनाई है। इसकी ३५ पत्रों की प्रति अजमेर के दिगम्बर भट्टारक भण्डार में है।

[५] वीरभक्तामर स्वोपज्ञ वृत्ति

प्रस्तुत ग्रन्थ में वीर—भक्तामर मूल छपा है। इससे पहले भी यह संस्कृत भक्तामर का पादपूर्ति काव्य आगमोदय समिति प्रकाशित काव्य संग्रह प्रथम भागमें छप चुका है। पर इसकी स्वोपज्ञवृत्ति अभी अप्रकाशित है जिसे भीनासर के यति सुमेरमलजी के संग्रह में हमने कई वर्ष पूर्व देखी थी।

कवि धर्मवर्द्धन की रचनाओं से मेरा परिचय बाल्यकाल से है। उनके रचित "जिनकुशलसूरि का सवैया" में जब ८—१० वर्ष का था तभी सुनने को मिला था फिर इनके रचित कई स्तवन और सज्झाय मेरे ज्येष्ठ भ्राता स्वर्गीय अभयराजजी की स्मृति में मेरे पिताजी के प्रकाशित 'अभयरत्नसार' में सन्-१९२७ में प्रकाशित हुए तबसे कवि का परिचय और भी बढ़ा और सं० १९८६ में जब कविवर समयसुन्दर की रचनाओं की खोज करने के लिये बीकानेर के बड़े ज्ञानभण्डार आदि की हस्तलिखित प्रतियां देखनी प्रारम्भ की तो 'महिमाभक्ति भण्डार' में ९६ पत्रों की एक ऐसी प्रति मिली, जिसमें कवि की समस्त छोटी छोटी रचनाओं का संग्रह था। इसकी प्रति की मैंने राजस्थानी रचनाओं की प्रेसकापी तो स्वयं उसी समय तैयार करली और संस्कृत स्तोत्रादि की प्रेस कापी

पण्डित शोभाचन्दजी भारिल्ल से करवा ली जो उस समय बीकानेर के सेठिया विद्यालय में काम करते थे। कविवर की जीवनी और अन्य रचनाओं की यथासम्भव खोज करके 'राजस्थानी साहित्य और कविवर धर्मवर्द्धन' नामक एक विस्तृत लेख तैयार किया जो कलकत्ते की राजस्थानरिसर्च सोसाइटी के त्रैमासिक शोधपत्र में 'राजस्थान के वर्ष २ अङ्क संख्या २ के २२ पृष्ठों में सं० १९९३ के भाद्रपद के अङ्क में प्रकाशित हुआ। उस लेख में मैंने लिखा था "आपके जीवनचरित्र और कृतियों की खोज लगभग ७-८ वर्षों से चालू है। जिसके फलस्वरूप बहुत सी सामग्री संगृहीत की गई है। और उसके आधार पर विस्तृत जीवनचरित्र, आपकी लघुकृतियों के साथ प्रकाशित करने का विचार है।" अपने ३०—३२ वर्ष पहले के किये हुए प्रयास को आज सफल हुआ देख कर मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है। इस ग्रन्थ में कविवर की समस्त लघु रचनाओं को प्रकाशित किया जा रहा है। पांच बड़ी रचनाएं जो इस ग्रन्थ के बड़े हो जाने के कारण इसमें सम्मिलित नहीं की जा सकी, उनका विवरण ऊपर दिया जा चुका है। कवि का चित्र तो नहीं प्राप्त हो सका अतः उनके हस्ताक्षरों की एवं स्मारक स्तूप छत्री प्रतिकृति देकर सन्तोष करना पड़ता है।

अनुक्रमणिका

—०◡०—

कविवर धर्मवर्द्धन ग्रन्थावली

धर्म बावनी

ॐकार महिमा

सवैया तेवीसा

ॐकार उदार अगम्म अपार, संसार में सार पदारथ नामी।
सिद्ध समृद्ध सरूप अनूप, भयो सबही सिरि भूप सुधामी॥
मंत्र में यंत्र में ग्रन्थ के पंथ में, जाकुं कियो धुरि अंतरयामी।
पंच ही इष्ट वसै परमिष्ट, सदा धर्मसी करै ताही सलामी॥१॥
नमो निसदीस नमाइ कै सीस, जपौ जगदीस सही सुख दाता।
जाकी जगत में कीरति जागत, भागति है सब ईति असाता॥
इन्द नरिंद दिणिन्द फुणिन्द, नमाए हैं वृन्द आणंद विधाता।
धोरी धरम को धीर धरा धर, ध्यान धरे धर्मसी गुण ध्याता॥२॥

गुरु महिमा

महिमा तिनकी महिमें महिमें, जिन दीनो महा इक ज्ञान नगीनो।
दूर भग्यो भ्रम सौ तम देखत, पूर जग्यो परकास नवीनो।
देत ही देत ही दूनो बधैं, अरु खायो ही खूटत नांहि खजीनों।
एसो पसाउ कीयो गुरुराउ, तिन्है धर्मसी पद पंकज लीनो॥३॥

कविवर धर्मवर्द्धन की स्वहस्त लिखित संग्रह प्रति का आदिपत्र।

सर्व गुरु अक्षर सरस्वतीकी स्तुति.

सवैया इकतीसा

सिद्धा रूपी साची देवा, सारै जीकी नीकी सेवा ;
राग़ैं आए लागैं पाए, जागे मोटी माई है।
चंगी रंगी वीणा वावै, राग़ैं सारैं राग़ैं गावैं ;
हाव भाव सोभा पावें, ज्ञाता जाकुं गाई हैं।
हंसी कैंसी चाली चालैं, पूजी वंदी पीड़ा टालैं ;
लीला सेती लालैं पालैं, शुद्ध बुद्धिदाई है।
सो हैं वांनी नीकी वानी, जाकुं ज्ञानी प्राणी जानी ;
ऐसी माता सातादानी, धर्मसीह ध्याई है ॥४॥

सर्व लघु अक्षर साधुकी स्तुति

भमरा की चालि

धरत धरम मग, हरत दुरित रग
करत सुकृत मति हरत भरमसी।
गहत अमल गुन, दहत मदन वन
रहत नगन तन सहत गरम सी।
कहत कथन सन बहत अमल मन
तहत करन गण महति परमसी।
रमत अमित हित सुमति जुगते जति
चरन कमल नित नमत धरमसी ॥५॥

मैत्रीया प्रीति

सवैया तेवीसा

अपने गुण दूध दीये जल कुं, तिनकी जल मैं फुनि प्रीतिफलाई ।
दूध के दाह कुं दूर कराइ, तहां जल आपनी देह जलाई ।
नीर विछोह भी खीर सहै नहीं, ऊफणि आवत हैं अकुलाई ।
सैंन मिल्यैं फुनि चैंन लह्यो तिण, ऐसी धर्म्मसी प्रीति भलाई ॥६॥
आपही जो गुन की गति जानत, सोई गुनीनि कौ संग गहैं हैं ।
जो धर्मसि गुण भेद अवेद, गुमार कहा सु गुनी कुं चहैं हैं ।
दूर सुं दौर्यो ही आवें दुरेफ, जहां कछु वारिज वास वहैं हैं ।
एक निवास पैं पास न आवत, मैंडकु कीच कैं बीचि रहैं हैं ॥७॥
इणै भव आइ, जिणै धन पाइ, रख्यो है लुकाइ, भख्यो नहीदीनौं।
हाइ धंधै ही मैं धाइ रह्यो नित, काइ नही कृति लोभ सुं लीनौ ।
कोल्हु के बैल ज्युं कोइ नहीं सुख, भूरि भयौ दुख चित्त सुचीनो।
जेण धर्मसी धर्म धर्यो न, कहा तिण मानस होइ कैं कीनो ॥८॥
ईदृति हैं जिण कुं सबही जन, आस धरैं सब पास रहैया ।
पंडित आइ प्रणाम करै, फुनि सेवत है सबने समभैया ।
आइ गरज्ज अरज करै, जु धरै सिरि आण भले भले भैया ।
साच की वाच यहैं धर्मसी जग, सोइ बड़ौ जाकी गांठ रुपैया ॥९॥
उमंगि उमंगि कर्यो धर्म कारिज, आरिज खेत में वित्त ही वायौ ।
देव की सेव सजी नितमेव, धर्यो गुरु को उपदेस सवायौ ।
आचरतैं उपगार अपार, जिणै जश सौं दिगमंडल छायो ।
ऐसी करतूत करी धर्मसीह, भलैं तिण मानव को भव पायौ ॥१०॥

सवैया इकतीसा

ऊपर सुं मीठे मुख अंतर सुं राखत रोष,
देखन के सोभादार भादुं कैसी चीभ हैं।
गुनियनि के गुन ठारि, औगुन अधिक धारि,
जौलुं न कहत कहुं तौलुं मन डीभ हैं।
तजि के भी प्राण आप और सुं करै संताप,
ऐसो खलको सुभाउ मच्छिका सनीभ हैं।
धर्मसी कहत यार मंडै जिण वासुं प्यार,
मानस के रूप मानुं दूसरो दुजीभ हैं ॥११॥

सवैया तेवीसा

ऋद्धि समृद्धि रहैं इक राजी सुं, एक करै है ह हांजी हांजी।
एक सदा पकवान अरोगत, एक न पावत भूको (खो) भी भाजी।
एक कूं दावतवाजी सदा, अरु एक फिरैं हैं पईसै के प्याजी।
युं धर्मसीह प्रगट्ट प्रगट्ट ही देखो, बे देखो बखत की बाजी ।१२।
रीस सुं वीस उदेग वधै, अरु रीस सुं सीस फटै नितही को।
रीस सुं मित भी दांत कुं पीसत, आवत मांनु खईस कही को।
रीस सुं दीखत दुर्गति के दुख, चीस करंत तहां दिन ही को।
युं धर्मसीह कहैं निसदीह, करै नहीं रीस सोइ नर नीको ॥१३॥

सवैया इकतीसा

लीयौ नहीं कछु लाज, संचे पाप ही कौ साज,
नरक नगर काज, गैंल रुप गणिका।
अंतर की बात ओर, ठगिवैं की ठकैं ठौर,

नित की करै निहोर, जाहि ताहि जनका।
जूअनि को जालौ अंग कोढ़ी महाकालौ रंग;
ताही सुं बनावै संग, धारैं लोभ धनका।
ऐसो कहे धर्मसीह, रहैं वासुं राति दीह;
सो तौ भैया चाक हुं, बड़ा रोझ वन का ॥ १४ ॥

सवैया तेवीसा

लीजत ही जल कूप को निर्मल, सैंथि धर्यो दुर्गंध ही ह्वै हैं।
फूलिनि को परै भोग भलो, पुनि राति रहै कोई हाथि न लैहै।
दूर तजो चित की तृष्णा नर, जौ लुं कोऊ दिन पुन्य उदै है।
युं धर्मसीह कहे कछु देहु,
दिलाउरे गाडि धर्यो धन धूरि हू जै है ॥ १५ ॥

एक कै पाइ अनेक परै फुनि एक अनेक के पाइ परै है।
एक अनेक की चिंत हरैं, अरु एक न आपनो पेट भरै है।
एक खुस्याल सुवै सुख साल में, एककुं खंथ न खाट जुरै है।
देखो बे यार कहै धर्मसी जग,
पुन्यरु पाप परतिक्ष फुरै है ॥ १६ ॥

ऐ ऐ देखो दइ गतिया, वतिया कछु ही न कही सी परै है।
रंक कुं राज (उ) रु राउ को रंक, पलक में ऐसी हलक करै है।
एक विचित्र ही चित्र बनावत, एक कुं भांजत एक घरै हैं।
बात धरम्मसी वाही कै हाथ,
है टार्यो न काहु कौ ईस टरै है ॥ १७ ॥

ओ जगि भूपति जिनकी दग,आद्र सकैं उपमान कही है।
दर्पण में प्रगटे सब रूप त्युं, मूढ़ में द्रव्य दशा उमही है।
सम्यगवंत सुदादि सिला सम, और की छाह सुं काज नहीं है।
दीसत एक मयूर ही नृत्यत,
त्युं चितवंतके आत्तम ही है ॥ १८ ॥

ऊत को गेह, कुपात को नेह, रू भंखर मेह जूआर को नाणो।
ठार कौ तेहरू छारकौ लिपन, जार को सुख अनीति को राणो।
काटि कडंबर जीरण अंबर, मूढ़ सुं गूढ़ टक्यो न पिछांणौ।
यु धर्मसीह कहै सुणि सज्जन,
आथि इ नांहीं' की साथि न जानो ॥ १६ ॥

अंग मरोरत तोरत हैं तृण, मोरत है करका अविच्छन।
राति रहै डरतौ घर भीतरि, भी फिरतो फिरतो करै भच्छन।
भूमि लिखैं भिसलैं पग सुं, जु अट्ट हसं मसलै पुनि अच्छन।
सोइ रहै न गहै धर्मसीख कुं,
लच्छि कहां जहां ऐसे कुलच्छन ॥ २० ॥

अनूप ही रूप कलाविद कोविद, हैं सिरदार सबै सुमति कौ।
साहसगीर महा वडवीर, सुधीर करूर करारी छती कौ।
सार उदार अपार विचार, सबै गुण धारि अचार सती को।
एती सयान हैं धर्मसी पुनि,
एक रती विनु एक रती कौं ॥२१॥

काकसी कोकिल श्याम सरीर है, क्रोध गभीर धरै मन मांहि।
और कैं बालक सुं धरै दोष, पैं पोखत आपहीके सुत नांहि।

एसो सुभाऊ बुरौ उनको पुनि, एक भलौ गुन है तिन पाहीं।
बोले धर्मसी बैन सुधारस,
तातें सुहात जहां ही तहां ही ॥ २२ ॥

खोदि कुदाल सुं आनी है रासभ, भूं पटकी छटकी जल धारैं।
लातन मारे कैं चाक चहोरी हैं, डोरी सुं फासी सी देह उतारै।
कूट टिपल्ल जलाइ है आगि मैं, तो भी लोगाइयां टाकर मारै।
यूं धर्मसी सगरी गगरी भैया,
कोउ न काहू की पीर विचारैं ॥ २३ ॥

गुण रीति गहे हठ मैं न रहै, कोऊ काज कहै तसु लाज वहैं।
कछु रीस न है सब बोल सहै, अपनैं सबही कुं लियै निवहै।
चित्त हेत चहे पर पीर लहैं, न चलैं कबहुं पथ में अव है।
धर्मसीह कहैं जगि सोऊ बहडौ,
जिनके घट में गुण ए सब है ॥ २४ ॥

घुरराटि करे घर द्वारहि तैं, घुरकै घर के पति सूं घर रानी।
सासु को सास ही सोखि लयो, पुनि जोर कहा धुं करैंगी जिठानी।
धूजत है घर को जु धनी, फुनि पाथर मारत मांगत पानी।
देखो धरमसी दूठी है झूठी है,
नारि किधुं घर नाहरि व्यानी ॥ २५ ॥

डान मैं काहु कुं आनत नांहि, गुमांन सुं गात चलावत गोबूं।
सोझैं घरी घरी पाघरी पेच कुं, पेखत आरसी में प्रतिबिंबूं।
झूठो सरब्ब गरब धरावत, जौलुं न काल कहुं अजगीबूं।

आज धरौ नहीं हो धर्मशील पै,
ल्यौगे घणे जु तिसै दिन लीबूं ॥ २६ ॥

सवैया इकतीसा

चाहत अनेक चित्त (चीत), पाले नहीं पूरी प्रीत ;
केते ही करैं हैं मीत, सोदौं जैसे हाट को ।
छोरि जगदीस देव, सारैं ओर ही की सेवु ;
एक ठोर ना रहै, ज्यूं भोगल-कपाट को ।
जाणे नहीं भेद मूढ़, ताणे आप ही की रूढ़ ;
ह्वै रह्यो मदोन्मत, जैसे भैंसों ठाट कौ ।
धर्मसी कहैं रे सैंन, ताकों कबहुं न चैन ;
धोबी कैसौ कूकरा है, घर को न घाट कौ ॥ २७ ॥

सवैया तेवीसा

छोरि गरब्ब जु आवत देखि कैं, आदर देइ कै आसन दीजे ।
प्रीति ही के रुख की सुख की, सुखकी दुखकी मिलि बात वहीजैं ।
दूर रहैं नित मीठी ही मीठी ही, चीज रु चीठी तहां पठइजे ।
साच यहै धर्मसीउ कहैं भैया,
चाह करैं ताकी चाकरी कीजैं ॥ २८ ॥

जो तप रूप सदा अपकै, अपनो वपु पूत पखार करैंगो ।
जो तप की खप पूर करैं, नर पाप कैं कूप में सो न परेगो ।
मोक्षपुरी तसु पंथ प्रयान कुं, पुन्य पकान की पोटि भरैंगो ।
धर्म कहै सब मर्म यहै,
तप तैं निज कर्म को भर्म हरेगो ॥२९॥

झगरा उलटा ही गहैं कुलटा, कबहुं न रहैं कुल की वट में।
वहु लोकनि में निकसै करि लाजरू, यार कुं घेरत घुंघट में।
लहिहुं कब घात करू वह बात, यही घटना जु घटै घट में।
उनकी धर्मसीह गहैं जोऊ लीह,
मिटैं तसु माम चट्टा पट में ॥ ३० ॥

नैन सुं काहू सुं सैंन दिखावत, बैन की काहु सौ बात बनावै।
पति की चित्त में परवाह नहीं, नित की जन और सुं नेह जणावै।
सासूकौ सास जिठ्ठानीको जीउ, दिरानीकी देह दुखै ही दहावै।
कहै धर्मसीह तजो वह लीह,
लराइ कौ मूल लुगाइ कहावैं ।३१।

टेंटि धरै मन में तन में न नमै, नही मेलत मीटि ही ऐसी।
काहिकुं आपनौ जानियै ताहिकुं,आनीयै चित्त मैं को परदेसी।
ताको न नाम ठाम न लीजियै, कीजियैं आप ही तैंसैं तैंसी।
साच यहै धर्मसीउ कहैं,
भैया चाह नहीं ताकी चाकरी कैसी ॥ ३२ ॥

ठीककी बात सबै चित्तकी, हितकी नितकी तिन सोज कहीजैं।
सो पुनि आपनसों मिलिकै दिलकैं सुध जो कहै सोउ कीजैं।
कोउ कुपात परैं उलटो, कुलटौ करि चीत कुं मीतसौं खीजैं।
जो धर्मसीह तजैं हित लीह तिन्है,
मुखि छार दे छार ही दीजैं ॥ ३३ ॥

सवैया इकतीसा

डौलैं परवार लार बैंन कहै वार वार,
हाल सेती माल ल्याहु ढीलन पलक है।

भोजन कुं नाज साज, लाज काज चीर ल्याह जाहु,
जाहु ल्याहु देहु ऐसी ही गलक है।
व्याहुनिकी पाहुनिकी कहा करूं भैया मोहि,
ऐतें हैं जंजाल जेते सीस न अलक है।
धर्मसी कहै रे मीत, काहे कुं रहै सचीत,
दैवै कुं है एक देव खैवै कुं खलक है ॥ ३४ ॥

सवैया तेवीसा

ढीठ उल्लूक न चाहत सूरिज, तैं सैं मिथ्याती सिद्धंत न ध्यावैं।
कूकर कुंजर देखि भसैं, पुनि त्युं जड़ पंडित सुं घुररावैं।
सूकर जैसैं भली गली नावत, पापी त्युं साधु के संग न आवैं।
लंपट चाहत नां धर्मसीखकुं,
चोरकुं चांदणों नांहि सुहावै ॥ ३५ ॥

नहीं कोउ पाहुणो नां कछु लांहणो, नांहि उराणो कहू को होवौ।
गरज्ज परैं ही अरज्ज कै कारण, काहुं सुं नां कर जोरि कैं जोवो।
घर की जर की पुनि बाहिर की, डर की परवाह न काहू कूं रोवो।
कहै धर्मसीह वड़ो सुख है भैया,
मांग कै खाइ मसीत में सोवो ॥३६॥

तीछण क्रोध सुं होई विरोध रु, क्रोध सुं बोध की सोध न होई।
क्रोध सो पावैं अधोगति जाल कुं क्रोध चंडाल कहै सब कोई।
क्रोध सुं गालि कढै वढै वैढ, करोध सुं सजन दुज्जण होइ।
यु धर्मसीह कहै निसदीह सुणो,
भैया क्रोध करो मति कोई ॥३७॥

थान प्रधान लहै नर दान तैं, दान तैं मान जहां जहां पावै।
दान तैं ह्वै दुख खानि की हानि, जु रान मसान कहुं डर नावैं।
दान सु भानु विमान लुं कीरति, दान विद्वान कुं आनि नमावै।
दान प्रधान कहै धर्मसी सिख-

सुन्दरि सौं पहिचान बनावैं ॥३८॥

सवैया इकतीसा

देखत खुस्याल देह नैन ही में धरे नेह,

करत बहुत भांति आदर कै देवैं की।
नीके ही पधारे राज, कहो हम जैसो काज,

पूछै फुनि बात-चीत पानी और पैंवै की।
ऐसी जहां प्रीति रीति चाहे हम सोइ चीत,

और हैं प्रवाह हम कहा कछु खैवैं की।
धर्मसी कहत वैन, सबही सुणेज्यो सैंन,

मैंलपोहि देखैं तहा सोहि हम जैवै की ॥३९॥

सवैया तेवीसा

धंध ही में नित धावत धावत, टूटि रह्यो ज्युं सराहि को टट्टू।
पारकैं काज पचैं नित पापमें, होइ रह्यो जैसे हांडी को चट्टू।
छारे नहीं कब ही धर्मसीख कुं, मुझि रह्यो हैं अज्ञान मखट्टू।
चित ही मांझि फिरैं निस बासर,

जैसैं सजोर की डोर को लट्टू ॥ ४० ॥

नाचत वंश कैं ऊपर ही नर, अंग भुजग ज्युं कल तल पेटा।
जोरह प्यार की ठौर परै जहां, सोइ सहै रण मांहि रपेटा।

संकट कोटि विकट्ट सहैं नर, पूरण कुं अपनै रह पेटा।
देखो धर्मसीह जोर पखावज,
चूण कै काज सहैज चपेटा ॥४१॥

पंकज मांझि दुरेफ रहै जुगहै मकरंद चितैं चित ऐसौ।
जाइ राति जु ह्वै हैं प्रभात, भयैं रवि दोत हसै कज्ज जैसो।
जाउंगो मैं तब ही गज नैं जु, मृनाल मरोरि लयौ मुहि तैसौ।
यु धर्मसीह रहैं जोउ लोभित,
ह्वै तिनकी परि ताहिं अंदेशो ॥ ४२ ॥

फूल अमूल दुराइ चुराइ, लीए तौ सुगन्ध लुके न रहेंगे।
जो कछु आथि कैं साथ सु हाथ हैं, तो तिनकुं सबही सलहैंगें।
जो कछु आपन में गुन है, जन चातुर आतुर होइ चहैंगे।
काहे कहो धर्मसी अपने गुण,
बूठे की बात वटाऊ कहेंगे ॥४३॥

बोल कैं बोल सु बोभल बात, भइतौ गइ करूं जानैंन ऐसौ।
फोज अनी अनी आइ बनीतौ, लुकावैं कहा जब जोर ह्वै जैसौ।
प्रीति तुटै पुनि चीत फटै, तौं कहा धर्मसी अब कीजैं अंदेसौ।
देखण काज जुरे सबही जन,
नाचत पैंठी तो घुंघट कैसौ ॥४४॥

भाव संसार समुद्र की नाव है, भाव बिना करणी सब फीकी।
भाव क्रिया ही कौ राव कहावत, भाव ही तैं सब बात है नीकी।
दान करौ बहुध्यान धरौं, तप जप्प की खप्प करौ दिन ही की।
बातको सार यहै धर्मसी इक,
भाव बिना नहीं सिद्धि कहीं की ॥४५॥

सवैया इकतीसा

मैरो वैंन मान यार, कहत हुं बारबार,
हित की ही बात चेत काहे न गहातु है।
नीकैं दिल दान देहु, लोकनि मैं सोभ लेहु,
सुंबकी बिसात भैया मोहिं नां सुहात है।
खाना सुलतान राउ राना भी कहाना सब,
बातनि की बात जगि कोऊ न रहात है।
ऐसौं कहै धर्मसीह, धर्म की ही गहौ लीह,
काया माया बादर की छाया सी कहात है ॥४६॥

सवैया तेवीसा

यह खेह कैं खंभ सी देह असार, विसार नहीं खिनका-खिनका।
जबही कछु दक्षिण वाउ बग्यौ, तब ही हुइगी कनका कनका।
कबहु तुम यार करौ उपकार, कहै धर्मसी दिन का दिन का।
कर के मणिके तजि कैं कछु ही अब,
फेरहु रे मनका मनका ॥ ४७ ॥

रन्न में रूदन्न जैसैं, अंधक कुं दरपन्न जैसैं,
थल भूमि में मृनाल काहू बौयौ है।
जैसैं मुरदा की देह, भूषन कीए अछेह,
जैसैं कौआ कौ शरीर, गंगनीर धोयौ है।
जैसैं बहिरा के कान, कोरि कीए गीत गांन,
जैसै कूकरा कैं काजु खीर घीउ ढोयो है।

तैसें कहै धर्मसीह याही बात राति दीह,
मूरख कुं सीख दे कें युं ही वैन खोयी है ।४८।

लंक कलंक कुं बंक लगाइ हैं, रावन की रिधि जावनहारी ।
नीर भर्यौ हरिचंद नरिंद हि, कंस को वंश गयो निरधारी ।
मुंज पर्यौ दुख पुंज के कुंज, गयो सब राज भयो हैं भिखारी ।
मीनरू मेख कहैं भ्रम देख पैं,
कर्म की रेख टरै नहीं टारी ।४६।

विनय विनु ज्ञानकी प्राप्ति नाहीं रू, ज्ञान बिना नहीं ध्यान कही कौं ।
ध्यान बिना नहीं मोक्ष जगत में, मोक्ष बिना नहीं सुख सही कौं ।
तातैं विनय ही धरौ निस दीह, करौ सफली नरदेह लही कौ ।
यार ही वार कहै धर्मसी अब,
मान रे मान तुं मेरी कही कौ ।।५०।।

शील तैं लील लहैं नर लोक में, शील तैं जाय सबै दुख दूरै ।
शील तैं आपइ ईलति भाजत, शील सदा सुख सम्पति पूरै ।
कोरि कलंक मिटै कुल कुल के, कलि में बहु कीरति होइ सनूरैं ।
सार यहै धर्मसीउ कहै भैया,
शील ही तैं सुर होत हजूरैं ।। ५१ ।।

ख्याल खलक में देखो सनिसर, तात सूरिज सों दुज्जन ताइ ।
बाप निसापति ही सौं टरै नहीं, बुद्ध विरुद्ध धरैं हैं सदाइ ।
केसव को सुत काम कहावत, तात सुं नांहि टर्यो दुखदाइ ।
मानस की धर्मसीह कहा कहैं,
देवहुं कैं घर मांहि लराइ ।।५२।।

संत की संगति नांहि करी, न धरी चित में हित सीख कही कूं।
प्रीति अनीति की रीत भजी न, तजी पुनि मूढ़ मैं रूढ़ि गही कुं।
या जमवार में आइ गवार मैं, मारी इता दिन भार मही कुं।
रे सुन जीउ कहे धर्मसीउ,

गइसो गइ अब राख रही कुं ॥५३॥

हाथ घसैं अरू आथि नसैं, जु वसैं चित्त में उद्वेग क्रोधू आ।
सगे सुनि कूर कियो घर दूर, दिखाइ न मूंह दीयो यह दूआ।
ढुकै लहणात सुकै मन मांहि, तकै मरिवेकुं वावरी कुआ।
कहै धर्मसीह गहै सुख लीह तौ,

भूलि ही चूक रमो मत जूआ ॥ ५४ ॥

लंछन चंद मैं ताप दिणंद में, चंदन मांझि फणिंद कौ वासो।
पंडित निर्द्धन सद्धन हैं सठ, नारि महा हठ को घर वासौ।
हीम हिमाचल खार है वारिधि, केतक कंटक कोटि कौ पासौ।
देखो धर्मसी है सबकुं दुःख,

कोउ करो मत काहू को हासौ ॥५५॥

क्षमाही को खङ्ग धर्यो जिण धीर, करी है तयार सुज्ञानकी गोली।
सुमति कवाण सुवेंण ही वाण, हलक ही सुं भरि मुठि हिलोली।
ऐसो सज्यो ही रहै धर्मसीउ, कहा करै ताको दुरजन कोलि।
सदा जगि जैत निसान घुरैं,

गृदधुं गृदधुं करि कोडि कलोली ॥५६॥

ज्ञान के महा निधान, बावन वरन जान,

कीनी ताकी जोरि यह ज्ञान की जगावनी।

पाठत पठत जोइ, संत सुख पावै सोइ,
विमल कीरति होई सारै ही सुहावनी।
संवत् सतरै पचीस, काती बदि नौमि दीस,
वार है विमलचन्द, आनंद वधावनी।
नैर ग्नि कौ निरख नित्त ही विजै हरष,
कीनी तहां धर्मसीह नाम धर्म बावनी ॥ ५७ ॥

—:※:०:※:—

कुण्डलिया बावनी

ॐ नमो कहि आद थी, अक्षर रै अधिकार।
पहली थी करता पुरष, कीधौं ॐकार।
कीधो ॐकार सार, तत जाणे साचौ।
मंत्र जंत्रे मूल, वेद वायक धुरि वाचौ।
सहु काम धर्मसीह दीयै रिद्धि सिद्धि औ दोऊँ।
बावन आखर बीज, आदि प्रणमीजे ओ ऊँ ॥ॐन०।१।

नमीयै मस्तक नामि नें, नमो गुरु कहि नित्त।
बहु हितकारी जिण बगसीयो विद्या रूपी वित्त।
विद्या रूपी वित्त, चित जिण कीधो चोखो।
दावै तिम दीजता जलण जल चोर न जोखौ।
सुगरा रे सहु सिद्धि ज्ञान गुण निगुरैं गमियें।
सीख कहैं धर्मसीह नामि मस्तक गुरु नमीयै ॥ न. म. ।२।

तृष्णा

मन री तिष्णा नहु मिटै, प्रगट जोइ पतवाण।
लाभ थकी बहु लोभ ह्वै, हैं तृष्णा हैं राण।
है तृष्णा है राण, जाण नर पिण नवि जाणें।
पास जुड़्या पंचास, आस सौ उपरि आणें।
सौ जुड़िया तब सहस, धरै इच्छा लख धन री।
धापैं किम धर्मसीह, मिटै नहीं तृष्णा मन री ॥ म.तृ. ॥३॥

कर्म

सिरजित मेट न कौ सकैं, करौ कोडि विधि कोई।
एहवी हिज बुद्धि उपजैं, होणहार जिम होई।
होणहार जिम होई, जोइ धर्मसी इण जग्गे।
चल्यौ सुभूम चक्कवैं, उदधि जल बूडि अथग्गे।
सोल सहस सुर साथ, हुंता सेवक करता हित।
ए वालै कीयो अंध, सही ब्रह्मदत्त मैं सिरजित। सि० । ४ ।

धंधै करि करि जोड़ि धन, संचे राखै सुं'ब।
भागवसैं केइ भोगवैं, वले न बाहर बुं'ब।
वले न बाहर बुं'ब, लुंबि रहैं माखी लालची।
कण कण ले कीड़ीया, पुंज मैं ले पीतैं पचे।
मेल्यो नंदे माल, कोई न गयौ लंक धे।
कलि में कीधो कुजस, धरम विण करि करि धंधै। ध० । ५।

अति हितकरि चित्त एकथौ सु विटक्यो किणहिक वार।
मिलिया वले मनावतां, पिण ते न मिलैं तिण वार।
ते न मिलैं तिण वार, ठार ओन्हो जल ठामैं।
जीयैंतो इ पहिल रौ, पुरुष ते स्वाद न पामैं।
तोडे सांधो तुरत, गांठि रहै डोरे गुम्फित।
धरि ले ते धर्मसीह हे, वैंन हुवै ते अति हित ॥ अ० । ६ ।

आरलि मीठी अप्पणी, आइ नमै सहु आप।
गढा ने गांमंतरै, बोलावैं कहि बाप।
बोलवैं कहि बाप, आपणी आरति आवें।

पड़ीइ मांदे पूत, बाप कहि वैद बुलावै ।
श्रावण में धर्मसीह, नटै कहै छासां नीठी ।
दूध जेठ में दीयै, मानि निज आरति मीठी । अ० ॥७॥

इतरौ में पिण अटकल्यो, सोचे सारौ दीह ।
निंदा जिहां पर नी नहीं, धरम तठै धर्मसीह ।
धरम तठै धर्मसीह, जीह निज अवगुण जंपै ।
त्रेवड़ि इण में तत्त, कांइ कसटें तन कंपै ।
तप जप निंदा तठै, हुवै नही कोइ हितरौ ।
निंदा हुंती नरक, अम्हे अटकलीयो इतरौ । इतरो०।८।

परउपगार

ईख कनक उत्तम अगर, चावा ए जगि च्यार ।
निज सुभाउ मेटै नहीं, आवै पर उपगार ।
आवै पर उपगार, सार रस ईख समप्पे ।
छोलतां छेदतां दुगुण, दुति सोवन दीपे ।
अग्नि प्रजाल्यो अगर, सुरभि द्यै सहु सरीखै ।
अवगुण टालि अलग्ग, एक उत्तम गुण ईखै । ईख० । ६ ।

उत्पति सांभल आपरी, गरवै पछै गमार ।
उपजेतैं तैं उदर में, अशुचि लीयो अहार ।
अशुचि लीयो अहार, वार तिण हीज ऋतु वीरिज ।
मुख ऊंधे मल मांहि, दुख सहीया दिलगीरज ।
तुं पछताणो तरैं, कीया नहीं पूरब सुकृत ।
सांभलि तुं धर्मसीह, एह थारी छै उत्पति ।उत्प०।१०।

कर्म

आदर ऊंचे कुल अधिक, ऋद्धि घणो नीरोग।
धरम थकी हूै धरमसी, सैंणां रो संयोग।
सैंणां रो संयोग, सोग री बात न सुणिजैं।
महिपति द्यै बहुमान, गाम में पहिलो गिणीजैं।
सहु को बोले सुजस, फलै पुण्य वृक्ष इसा फूल।
मनवांछित सहु मिलैं, आइ उपजैं ऊंचे कुल। आदर ।११।

गर्व

ऋद्धि त्यागौ रन मैं रहो, रहो परीसा सर्व।
तत्त सधै नहीं कौ तिणैं, गयो नहीं जां गर्व।
गयो नहीं जां गर्व, सर्व तप निफल सधीया।
जोइ बाहुबल जती, वप्पु उपरि खड वधीया।
गरब तज्यो तब ज्ञान, तुरत हिज उपज्यो तन मैं।
धर्ये गर्व नहीं धर्म, ऋद्धि त्यागौ रहो रन मैं। ऋ ।१२।

रीस दमन

रीस दबट्टे राखीजैं, तिण उपजतैं तागि।
पलैं नहीं प्रगटी पछै, उन्हालै री आगि।
उन्हालै री आगि, सही जाये नहीं सहणी।
हुवैं घणी जिण हानि, देह पिण दुखैं दहणी।
सैंण हुवै सहु सत्तु, फिरै जायै मन फट्टे।
सुणै सैंण धर्मसीख, राखिजै रीस दबट्टे। रीस ।१३।

कर्म

लिखिया ब्रह्म लिलाट में, लोक सकै कुण लोप ।
भायै सुख दुख भोगवै, किसुं किया ह्वै कोप ।
किसुं किया ह्वै कोप, रोप कांठलि घण वरसै ।
बाबीहीयौ बापड़ो, तोइ जल काजे तरसै ।
देखे सहु को दिने, अंध ह्वै घूघू अंखीयां ।
धोखो तजि धर्मसीह, लाभिजै सुख दुख लिखिया ।लि०।१४।

लीजै च्यारे तुरत लगि, द्यूत द्रव्य नृपदान ।
गुरू शिक्षा प्रस्ताव गुण, न करो ढील निदान ।
न करो ढील निदान, जाय धन हारे जुआरी ।
चुंगल मिलै चौ तरै, रहै बगसीस राजारी ।
गुरू पिण न दीयै ज्ञान, कह्यो जौं तुरत न कीजै ।
सुभ प्रस्ताव सिलोक, गिनै तुरतज लीजै । ली० ।१५।

एको ह्वै जो आप मै, कजीयै काम कुटंव ।
तौ को न सकै तेहनै, झगड़ै झाटै झुंब ।
झगडै झाटे झुंब, बुंब पिण लागै बहुनी ।
बोली एकण बध, साच माजै मा जैनी ।
सहुनी जिण रै फट जू जूआ, न ह्वै सु धन रहै नेकौ ।
धुरि हुंती धर्मसीह, आप में कीजै एकौ । एको ।१६।

ऐ देखौ ब्रहमंड इण, इक इक बड़ौ अचंभ ।
धरा भार इवड़ौ धरै, सु थंभी किण विध थंभ ।
थंभी किण विध थंभ, दंभ पिण कौ नवि दीसै ।

मंड्यो किम करि मेह, दडड पांड्या निस दीसै ।
अंबर विण आधार, सूर शशि भमै सपेखौ ।
सागी कहै धर्मसीह, ए ए अचरिज देखौ । ए० ।१७।
ओहिज भूतल ओहिज जल, वाया एकण वेर ।
अंब निंब पात्रैं इसौं, फल में पड़ीयो फेर ।
फल में पड़ीयौ फेर, मेर सरसव जिम मोटौ ।
स्वाति बिन्दु सीप में, आइ पड़्यो अण चोटौ ।
मोती हुवै बहु मोल, सरप मुखि विष हुवै सोइज ।
पात्रैं अन्तर पड्यो, उदक कहै धर्मसी औ हिज ।ओ०।१८।

अन्न

औषध मोटो अन्न इक, भांजै जिण थी भूख ।
सालैं अन विण सांमठा, देही माहिलां दूख ।
देहि मांहिला दूख, ऊख हुवै सहु नै अन्न री ।
उदर पड़ै जां अन्न, मौज तां लगि तन मन री ।
आखर अन्न रैं अंश, पलै पूरा व्रत पौषध ।
धीरज हुवै धर्मसीह, अन्न इक मौटौ औषध । ओ० ।१६।

स्वभाव

अंब कौऔ निंब कोइला, लुब्ध्या किहां इक लागि ।
काग भणी कहै कोइला, कोइल नै कहै काग ।
कोइल नै कहै काग, जाइगा कारण जांणै ।
भूलैं माणस भमर, अंग सरिखे अहिनाणै ।
बिहुं जब बोलिया, अगुण गुण लीधा अटकल ।
न रहै छांना नेट, अंब कौऔ निंब कोकिल । अ० ।२०।

पर स्त्री गमन निषेध

अपणी तिय थी अवर नै, माने घणु मसंद ।
लखमीजी नै तजि लख्यौ, गोपीयां सूं गौविंद ।
गौपियां सूं गौविन्द, इन्द्र पण तजि इन्द्राणी ।
अहिल्या नैं आदरी, जगत सगलै ए जांणी ।
अतिघन हूं उन्मान, जाय नहीं वातां जपणी ।
प्रायें परतिय प्रीति, अधिक हूं न हुवै अपणी । अ० ।२१।

आठ अंधे

क्रोधी कामी कृपण नर, मानी अमैं मदंध ।
चोर जुआरी नै चुगल, आठौं देखत अंध ।
आठे देखत अंध, धंध रस लागा धावै ।
तन धन री हाणि, मेटि तौड़ मजरै नावै ।
कुकरम कुजस कुमीचि, सौइ देखै नहीं सोधी ।
धरमसीख नहिं धरै, करै इम कामी क्रोधी । क्रो० ।२२।

कपूत

खाए मै खेरूं करै, सगलै घर रौ सूत ।
कूत न काइ कमाइवा, कहियै एम कपूत ।
कहियै एम कपूत, भूत जिम बोले भड़की ।
सखरी देतां सीख, तुरत कहै पाछौ तड़की ।
साच कहै धर्मसीह, उणै सुत सदा अंधेरूं ।
म खट्ट मौजी मन्न, करै खाए धन खेरूं । खा० ।२३।

सपूत

गुरु जण सेवे तज गरब, कम्मावैं घरि कूत ।
निबलां नै ले निरवहै, साचा तिकै सपूत ।
साचा तिके सपूत, दूत जिम दौड़ें ढुकै ।
खरा द्रव्य खाटि नै, मात पित आगलि मूकैं ।
मुखि मीठा सुभ मना, देखि सारा हैं दुरजण ।
सुपूत्र तिकै धर्मसीह, गरब तजि सेवैं गुरुजण । गु० ।२४।

सात सुख और दुख

घट नीरोग शुभ घरणि, बलि नहीं रिण भय बात ।
सुपूत्र सुराज कटुंब सुख, धर्मसीह कहै सात ।
धर्मसीह कहै सात, सात दुःख जाय न सहणा ।
दीसै घरि में दलिद्द, लोक बलि मांगै लहणा ।
कलहणि नारी कुपुत्र, फिरण परदेस सगे फट ।
सबलै दुख सातमौ. घणौ वलि रोग रहैं घट । घट० ।२५।

पाडोस

न रहे पाड़ोसैं निखर, करैं मतां घरि कूप ।
दुइ विढ़ता मत देखिजै, भूंडौ न कहै भूप ।
भूंडौ न कहे भूप, जूप मत मोटां जोड़ी ।
झगड़ौ न करैं झूठ, आल न रमे धन ओड़ी ।
वैरी न करै वैद, गरथ पर नौ मत गर है ।
सुणे सैंण धर्मसीख, निखर पाडोसैं न रहे । न रहै । २६ ।

बुढ़ापा

च्यार जणा नैं सुणि चतुर, सोहै जरा सिंगार।
राजा मुहतौ वैद्य दिष्ठि, गरढ पणै गुणकार।
गरढ पणै गुणकार, क्षार बहु बुद्धि रसायण।
विणसै मल्ल वेसीया, गिणौ तिम चाकर गायन।
करें घणी जौ कला, मन्न तोइ किणैं न माने।
कहै धर्मसी यु करै, जरा आइ च्यार जणा नै।च्यार०।२७।

बाप

छत्र करै ज्यु छाहडी, तुरत हरै सहु ताप।
छोरू नै गुणकार छै, वूढा ही मा-बाप।
बूढा ही मा-बाप, आप जीवै ता अमृत।
सखरी आखै सीख, साचवै घर मे सुकृत।
लाज काणि करै लोक, तरुण तिय सोह रहै तिम।
धरैं हित धर्मसीह, जतन बहु छत्र करै जिम। छ० ।२८।

जूआ

जूअैं सो कीधी जिका, कही न जायें काय।
नल पाडव सिरखा नृपति, मूक्या हार मनाय।
मूक्या हार मनाय, हार करि अलगा होवौ।
कलह सोग बहु कुजस, जूए साम्है मत जोओ।
हांसो मै घर हाणि, सुख पिण कदे न सूवै।
सुणज्यो कहै धर्मसीह, जिका कीधी छै जआै। जु० ।२६।

मांस

झामै मल मूत्र झरै, अन्न तणा सहु अंश।
तौ पिण खावा तरसीया, माणस पापी मंस।
माणस पापी मंस, अंस पिण सूग न आणें।
परगट्ट जीवां पिंड, जीभ स्वादै नवि जाणें।
दुरगति लहिस्यै दुःख, सबल आ करणी सामे।
अधरम महा असुचि, मरै मल मूत्रे झामे। झा० ।३०।

मदिरा

न हुवे सुधि बुद्धि नजर में, जायैं लक्षण लाज।
परगट मदिरा पान थी, एहा होई अकाज।
एहा होइ अकाज, खाज अखज पिण खावै।
नावैं कोई नजीक, अन्ध री ओपम आवे।
इण कीधा अनरत्थ, द्वारिका नगरी दहवैं।
सुणें नहीं धर्मसीख, नजर में सुद्धि बुद्धि न हवै। न० ।३१।

वैश्यागमन

टिपस करैं लेवा टका, नहीं मन माहे नेह।
राग करे इण सुं रखे, गणिका अवगुण गेह।
गणिका अवगुण गेह, छेह दिन दाखैं छिन में।
सिल धोवी री सही, ओपमा छाजै इण में।
गया बहु लाज गमाइ, विहल हुआ वैश्या वसि।
जाति कुजाति न जौअैं, टका लेवा करैटिप्पस। टि० ।३२।

शिकार

ठग बगला जिम पग ठवैं, पाडैं जीवां पास।
कुविसन रौ बाह्यो करै, आहेड़ा अभ्यास।
आहेड़ा अभ्यास, प्यास भूखैं तनु पीडैं।
मार्यो श्रेणिक मृग, नरक गयो न रह्यो नीडैं।
कहे धर्मसी इण कर्म, सुकृति ह्वै निःफल सगला।
रहैं तकता दिन राति, बहैं जीवां ठग बगला। ठग० ।३३।

डाका चोरी

डाकै पर घर डारि डर, कूकरम करैं कठोर।
मन में नांहि दया मया, चाहैं पर धन चोर।
चाहैं पर धन चोर, जोर कुविसन ए जांणी।
मुसक बंधि मारिजै, घणी वेदन करि घांणी।
फल बीजां सम फले, अंब लागै नाहीं आकै।
धरम किहां धरमसीह, डारि डर पर घर डाकै। डा० ।३४।

पर स्त्री गमन

ढुंढ़ा कीधा ढ़ाहि गढ़, लंक तणी गइ लाज।
पर त्रीरे कुविसन पड़्यां, रावण गमीयो राज।
रावण गमियो राज, साज तौ हुंता सबला।
परत्रीय कुविसन पड़्यां, पाप केइ लागा प्रबला।
अपयश जीव उदेग, मान तौ नहीं छै मूढ़ा।
सुणि भारथ धर्मसीह, ढ़ाहि गढ़ कीधा ढुंढ़ा। ढु० ।३५।

सप्त व्यसन

नरक रा भाई निरखि, साते कुविसन सोई।
इण हुंती रहिज्यो अलग, करौ रखे संग कोइ।
करै रखे संग कोई, जोइ तिहां पहली जुऔ।
मांस खाण मद पान, संग दारी मत सूओ।
आहेड़ौ धन अदत्त, संग पर त्रीय सातां रा।
इण में महा अधर्म, निरखि भाई नरकां रा। न० ।३६।

तू कारा

तुंकारो काढ़ै तुरत, मुंह मुलाजौ मेट।
कुल उत्तम जन्म्यां किसुं, नीच कहीजै नेट।
नीच कहीजै नेट, पेट रो खोटो पापी।
तुरत बैंण तोछड़ो, सैंण नैं कहै संतापी।
बाप तणो नहीं बीज, बीज किणहिक बीजां रो।
धिग तिण नर धर्मसीह, तुरत काढ़ै तुंकारो। तु० ।३७।
थाका भूखा ही थका, धोरी नर धर्मसीह।
निज भुज भार निवाहि ल्यै, लोपे नहीं शुद्ध लीह।
लोपे नहीं शुद्ध लीह, दीह ल्यै ऊंचा दावै।
सींह होइ संचरैं, जीह नहु भेद जणावैं।
आखर ते आपणा, जस्स खाटैं हुइ जाका।
धुरा भार ले धींग, थेट तांइ आणै थाका। था० ।३८।

सज्जनदर्शन

देखो सैंणा रो दरस, मौटौ छै कोइ माल।
दूर थकी पिण देखतां, नयणां हुवै निहाल।

नयणां हुवै निहाल, हाल दे हीयो हरखैं ।
वरषैं अमृत बैंण, प्रीति अति ही चित्त परखैं ।
बि घड़ी मिलि वेसता, लहै सुख नहीं ते लेखौ ।
धन दिन गिण धरमसीह, दरस सैंणा रो देखौ । दे० ।३६।

धनवान

धनवंता री धर्मसी, आवै सहु धरि आस ।
सरवर भरीयो देख सहु, पंखी बेसैं पास ।
पंखी बेसैं पास, आस पिण पुगइ इण थी ।
मूको सरवर सेवतां, तृषा कांइ भांजे तिण थी ।
दीयै किसु दलदरी, सबल रीझवीयौ संता ।
सगलौ ही संसार, धरै आस धनवंता । ध० ।४०।

कृपणदान

न दीयै कांइ कृपण नर, सहु इम कहै संसार ।
सात थोक कहै धर्मसी, द्यै ओहिज दातार ।
द्यै ओहिज दातार, बार[1] द्यै काठा बीडी ।
द्यै उतर द्यै कुमति, पूठ द्यै पात्रां पीड़ी ।
धरि द्यै लछि नै घोर, कटुक गाल्यां दे कदीये ।
आडौ पग द्यै आइ, निपट किम कहो छो न दीयै ।न०।४१।
पर हुंती तप पामिनै, निपट दीये दुःख नीच ।
सूरिज तपतां सोहिलौ, पिण वेलू बालैं बीच ।
वेलू बालैं बीच, नीच नर है बहु बोलो ।
उत्तम नर रहै अटक, गालि द्यै तुरत ज गोलो ।

१ पाठान्तर-द्वार

अक्ल हीणौ पद ऊंच, पीढ थी तोइ पचुंती ।
धरै उत्तम नर धर्म, पापिनै तप पर हुंती । प० ।४२।

यमराज

फोजां मैं मौजां फिरै, गाहण गढ़ा गइंद ।
फुंकै काल फणिंद री, उडि गया नर इन्द ।
उडि गया नर इन्द, चंद दिणंद चकीसर ।
साथ न को धर्मसीह, कित वाल्हा गया वीसर ।
सगला तांलगि सूर, जम्म आवै नहीं ओ जां ।
है चोटी पर हाथ, मांन मत खोटी मौजां । फौजा० ।४३।

मिष्ट वचन

बहु आदर सूं बोलियैं, वारु मीठा वैण ।
धन विण लागां धर्मसी, सगला ही हुवै सैंण ।
सगला ही हुवै सैंण, वैंण अमृत वदीजैं ।
आदर दीजै अधिक, कदे मनि गर्व न कीजैं ।
इणा वातै आपणा, सैंण हुइ सोभ वदै महु ।
मानैं निसचै मीत, बोल मीठो गुण छै बहु । बहु० ।४४।

भारी कर्मा

भारी करमा दुरभवी, जग में जे छै जीव ।
सीख न मानैं सर्बथा, सहज मिटै न सदीव ।
सहज मिटै न सदीव, टेव थी जाइ न टलीयै ।
स्वान पुंछि न हुवै समी, नित भरि राखौ नलीयैं ।
कासुं हुवै बहु कह्यां, वदै नहीं कदे विसरमा ।
सुगुरु तणी धर्म सीख, करै नहीं भारी करमा । भा० ।४५।

मन वश की दुष्करता

मयमत्ता मैंगल महा, मणिधरि केहरि मल्ल ।
सगला दमता सोहिला, मन दमणी मुसकल्ल ।
मन दमणी मुसकल्ल, चल्ल जिणरी अति चंचल ।
रहैं नहीं थिर दिन राति, अधिक वायैं ध्वज अंचल ।
खिण दिलगीर खुस्याल, तुरत कैं सीला तत्ता ।
कहै धर्मसी मुसकल्ल, मन्न दमणा मयमत्ता । म०॥४६॥

दान

योजन बारै जाणियैं, आवैं गाज अवाज ।
दुनियां मैं दात्तार रौ, सगलैं जस सिरताज ।
सगलै जस सिरताज, आज लगि वलीयौ आवैं ।
अरवक[1] सदा उगतां, करण रौ पहुर कहावै ।
साधु सुपात्रे सैंण, भगित करि दीजै भोजन ।
धरम अनैं धर्मसीह, जस ह्वै केइ जोयन ।

शील

राखीजैं जतने रतन, खड़्यां ह्वै बहु खोड ।
सील तणा तिम धर्मसी, कीजै जतन करोड़ ।
कीजै जतन करोड़, होड़ इणरी किण होवैं ।
सीलै सुर सेवक, जगत जस कहि मुख जोवै ।
नित सतीयां रा नांम, उठि परभात अखीजै[2] ।
सीलै लहीजैं लील, रतन जतन राखीजै । रा०॥४८॥

---

१ सूर्य २ कहने में आता है।

तप

लहियै शोभा लोक मैं, तप करि कसतां तन्न ।
परतखि वीर प्रशंसियौ, धन्नौ मुनिवर धन्न ।
धन्नो मुनिवर धन्न, मन शुद्ध जास भली मति ।
पहिलौ फल ए प्रगट, कन्न सुणीयैं निज कीरति ।
रहीयै तप सुं राचि, दूठ आठे कर्म दहीयैं ।
धरतां इम धर्मसीख, लच्छि सिवपुर नी लहियैं । ल०॥४६॥

भाव

वपु शोभे नहीं जीवविण, जल विन सरवर जेम ।
विन पति त्रिय गृह दीप विण, तरवर फल विण तेम ।
तरवर फल विण जेम, प्रेम विण जेम सखापण ।
प्रतिमा विन प्रासाद, कहौ तुस जेम विना कण ।
भण इण परि विणभाव, खोट सगली तप जप खपु ।
सोभैं नहीं धर्मसीह, भाव विण जीव विना वपु । व०॥५०॥

सीखो दाखौ शास्त्र सहु, आगम ज्ञान अछेह ।
सांइ रे हाथे सही, मीच रिजक नै मेह ।
मीच रिजक नै मेह, एह छै वातां ऊँडी ।
कासुं भूटैं कह्यां, हाथ परमेसर हुंडी ।
जोइ धर्मसीह जोतिष, सोचि करि करौ सवीखो ।
आखर जाणैं ईस, शास्त्र सहु दाखौ सीखौ । सी०॥५१॥

कर्म

खटवानैं सहु को खपै, उद्यम करै अनेक ।
लिख्यौ ह्वै सो लाभिजै, अधिकौ रंच न एक ।

अधिकौ रंच न एक, देखि मथीयौ दधि दोऊ ।
लाधि गोंविद लाछि, शंभु लाधो विष सोऊ ।
वखत तणी सहु वात, लाख करैं केइ लटुवा ।
कोइ मांटीपण करै, खपैं सहु करिवा खटवा । ख० ।५२।

सूम की सम्पदा

सुंबा केरी सम्पदा, नपुंसक री नारि ।
नां धर्मसील धरै सकै, न भोगवैं भरतारि ।
न भोगवैं भरतारि, कीया था पातिक केइ ।
इण घरवासैं आइ, बोइ नांख्यां भव बेइ ।
कर फरसैं रस करैं, आस नहु फलैं अनेरी ।
धर्मसी कहै धिग स, संपदा सुंबा केरी । सुंबा०।५३।

घट बढ़

हयवर जिण घर हीसतां, गज करता गरजार ।
किण हिक दिन तिण घर करैं, पडीया स्याल पुकार ।
पडीया स्याल पुकार, वार नहीं सरखी वरतैं ।
चढ़त पड़त हिज चलै, चंद जिम बिहु पखि चरतैं ।
चौपड़ केरै चाव, घटत बढ़ती हुै घर घर ।
सुणि तिण विध धर्मसीह, हिंसता जिण घर हयवर।ह०।५४।

मर्यादा

लंघीजे नहीं लोक में, लाज मर्यादा लीक ।
जायैं पाणी जू जूओ, न करीजैं जो नीक ।
न करीजैं जो नीक, लीक नहु सायर लंघै ।

मरयादा मेटतां, सदा टालीजै संघै ।
वरतीजैं विवहार, कदे निज रूढ़ि न कीजे ।
सदाचार धर्मसीह, लीह कहो केम लंघीजै । ल० ।५५।
क्षमा करंता कोइ खरच, लागै नहीं लगार ।
मिटै कदा यह मूल थी, सैंण हुवै संसार ।
सैंण हुवै संसार, सार सहु मैं ए साचो ।
किण सारू करै क्रोध, कुह्यो काया घट काचौ ।
सफल हुवै धर्मसीह, धरम इण सीख धरंता ।
लहै सोह लोक में, कहै सहु क्षमा करंता । क्षमा० ।५६।
अक्षर बावन आदि दे, कवित्त कुंडलिया किद्ध ।
धरम करम सहु में धुरा, प्रस्ताविक प्रसिद्ध ।
प्रस्ताविक प्रसिद्ध, शहर जोधाण सल्हीजै ।
सतरेंसे चोतीस, भलै दिवसै भा बीजै ।
विजयहर्ष वाचक्क, शिष्य धर्मवर्द्धन साखर ।
कीधा बावन कवित्त, आदि दे बावन आखर । ॥ ५७ ॥

इति कुंडलिया बावनी ।

—:०:※:०:—

छप्पय बावनी

गुरु गुरु दिन मणि हस, मेघ मेरहि मुगतागण ।
मति दुति गति अति सोभ, वाणि मणि गुण जाकै तण ।
सुरग पुव्वसर राज, गयणधर धुरि वारिधि थिति ।
वासव ग्रह अति चतुर, जगत सुर पारिख सेवित ।
प्रभात पकति सहित, गरजित निरमल ग्रथित गुण ।
बहु ज्ञान तेज केली वरिष, धरि पवित्र धर्मसीह गुण ॥१॥

गुरु वर्णन रूप ३६ विधानीक कवित —

ऊकार वलि अरक, उदयगिरि उपर ऊगो ।
अलग गयौ अन्धार, पार इणरै कुण पूगौ ।
चाहे सहुजग चक्खु, उदय पूरै सहु आसा ।
सुर नर माने सर्व प्रसिद्ध सगलै परकासा ।
ससार सार परतिख समै, सिद्धि रिद्धि दायक सासता ।
धरि ज्ञान ध्यान धर्मसीह धुरे, अधिक इणरी आसता ॥१॥

नम्रता

नम्या चढ गुण नेट, नम्या विण गुण ह्वै निःफल ।
तरवर नमै तिकोज, साखि फल फूलै सफल ।
नमता वाधै नेह, नमै सो मोख नजीकी ।
नमै सुजाणों नीति, नम्या सहु बाता नीकी ।

तुरत हिज परखि धर्मसी, तुला धडी जणावै सीस धुणि ।
हलकौ तिकोज ओछो हुवै, गरुओ कहिजैं नमण गुण ॥२॥

मन में न धरै मैल वदै वलि मीठा वायक ।
देह आपसुं दमैं, गरव विण सहु गुण ज्ञायक ।
आदर पर उपगार, सत्यवादी सन्तोषी ।
न करैं निंदा मेट, चलैं निज कुलवट चोखी ।
न्याय रीति तिण दिसि नजर, देखे नहीं स्वारथ दिसा ।
धर्म सील विनय सूधौ धरै इण जुग के विरला इसा ॥३॥

सिला सेज सूवणें, वले वन धगहने वासा ।
नगन गगन गुण मगन, अगनि जग ने अभ्यासा ।
जटा धरै केई जूटा, मुंड के धुरड मुंडावै ।
बहुली केइ बभूत, लेइ अंगे लपटावै ।
जिण जिणैं रूढि झाली जिका, तपौ तपावौ कष्ट तन ।
साच ह्वैं मन्न धर्मसी सफल, मन झूठै सहु झूठ मन ॥ ४ ॥

धंध धरे करि द्वेष, वात में हेत वितौड़ै ।
आप कियौ ते अवल, वले पर किया विखौड़ै ।
छता गुण छावरै, अगुण अछता ही आखैं ।
कोइ हितरी कहैं, रीस मन मांहै राखैं ।
वलि लहै सुख परकैं विघन, काम पगे पग कूड रौ ।
धर्मसीय कहैं तिण रैं धरम, बोल्यो खातौ बूड रौ ॥ ५ ॥

अटकलि कुल आचार, शोभ अटकलि सक जाइ ।
विद्या अटकलि वित्त, देह अटकलि दे खांइ ।

त्रिय अटकलि सुविशेष, आठ गुण वीदह अटकल ।
परणा पुत्रिका इतैं, मावी तउ सिंकल ।
वल ती जिकाइ सम्पति विपति, निवलैं सवलैं नखतरी ।
किण ही न दोस धर्मसी कहै, बात पछै सहु बखतरी ॥ ६ ॥

धर्मलाभ

आ खां जौ बहु आऊ काउ, चिरजीव कहिजैं ।
पुत्र बधौं परिवार स्वान शूकर सलिहिजैं ।
दाखां बहुलो द्रव्य हुवै अधिकौ कुल हीणो ।
बल पामौ अति बहुल प्रबल हुइ सरपे पीणो ।
सुत वित्त जोर जीवित सकल आशा पूरै धरम इण ।
असीस एक सहु मैं अधिक भलौं वैण धर्मलाभ भण ॥ ७ ॥

विद्या बुद्धि

इक नीरोगी अङ्ग वले, गुण बुद्धि वखाणो ।
वलि साचविज विनय अधिक गुण उद्यम आणो ।
शास्त्र राग सुविशेप पिड थी ए गुण पांचै ।
पांचे वलि परतख सही बाहिज गुण सन्चे ।
पंडित प्रथम पुस्तक पछै, सुथिर वास साथी सधे ।
तिम नहीं चित भोजन तणी, विद्या दस थोके वधै ॥ ८ ॥

ईहै स्वाद अनेक आलसू, जे वलि अंगे ।
दुहरी न करे देह, सुखी विषयारस संगे ।
नित रोगी बहु नींद, रंग वातां रो रसीयौ ।
रामति में मन रहै, ताकिल्यैं सहु रौ तसियौ ।

लालचै दाम खाटण लुब्ध, दुसमन शास्त्रारां दसै ।
कर इता दूर धर्मसी कहै, विद्या भणिवा ने वसै ॥ ६ ॥

अष्ट मद

उच्च जाति मद एक महा कुल मद सूं मातौ ।
लाभ तणैं मद लोल, तेम तप मद सु तातौ ।
रूप मदै वलि रसिक, बहुल बल मद पिण वाहे ।
विद्या मद वलि विविध, अधिक अधिकार उच्छाहे ।
मद आठ ईयै मत छकै मसत, अस्त उदय रवि अटकली ।
आविया देखि करीवा अमल, प्यादा जमराएं पली ॥१०॥

कुपात्रप्रीति

ऊगतं अरकरी मंडी तब छाया मोटी ।
दोइ पहुर मै देखि, छीजती छिण छिण छोटी ।
त्युं कुपात्र की प्रीति, आदि बहु आगे ओछी ।
सजन प्रीति सुरीति, सही धुरि होइ सकोछी ।
वधता विशेष धर्मसी वधे, वलत छांह जिम विस्तरै ।
दृष्टांत एण सज्जण दुज्जण, परखी देख पटंतरै ॥११॥

कर्मगति

ऋतु ग्रीष्म रान में, तृपो मृग दव थी त्राठो ।
पंडियो पासी पाउ नेट साइ तोडै नाठै ।
ओ दौ कुडि उलंघि, आयो जिण दिसि आहेड़ी ।
तेण चलायो तीर, फाल मांहि टाल फंफेड़ी ।
नासतां कूप आयौ निजर, तिस मेटण पड़ियौ तठै ।
कर्म गति देखि धर्मसी कहै, कहौ नाठौ छूटै कठै ॥ १२ ॥

कर्म

रीस भर्यो कोइ रांक, वस्त्र विण चलीयौ बाटे ।
तपियौ अति तावड़ौ, टालतां मुसकल टाटैं ।
बील रुंख तलि बैसि, टालणो माडयो तड़कौ ।
तरु हुंती फल त्रूटि, पडयो सिर माहे पड़कौ ।
आपदा साथि आगैं लगी, जायै निरभागी जठे ।
कर्मगति देख धर्मसी कहै, कहौ नाठो छुटै कठे ॥ १३ ॥

लक्ष्मी किणहीक लाभि, खरची दीधी वली खाधी ।
कहौं नहीं कारण किणै, बहसि किए के बाधी ।
दातारै धुरि देखि, दान रो लाधो दहो ।
सुंब ननौ संग्रहै, माहरै इण सुं सुहो ।
दातार घरै दिन दिन ददौ, नित सुंबा घर ननौ ।
बिहुं जणा जाणि बहसे बहसि, पालैं इण परि पडवनो ।१४।

लीजैं पर गुण लागि, लागि नें अन्त न दीजै ।
दीजैं ऊंचौ दाव, दोष अणहुंत न दीजै ।
कीजै पर उपगार, कार निज लोप न कीजै ।
खरैं हित खोज जैं, खोट बाते मत खोजै ।
भीजै सुसांम (?) धीजै भला, पीजै जल छांण्या पछै ।
धर्मसीख सुबुद्धि मनमें धरैं, इतरा थोके अवगुण अछै ।।१५।।

एक एक थी अधिक सबल सूरा संग्रामे ।
एक एक थी अधिक नकल ने ठाहे नामे ।

एक एक थी अधिक चुंप सगली चतुराइ।
एक एक थी अधिक कला विद्या कविताइ।
व्याकरण वेद वैदक विविध, भला उदर सहुको भरै।
धर्मसीह रतन बहुला धरणी, कोई गरब रखे करै॥ १६॥

ऐ वेलि एकरा, उपना तुंबा आवै।
साधु तणी संगते, पात्र री ओपम पावै।
विलगा जिके सुवंश, गुणी संगि मीठो गावै।
गुण सुं जे गुंथिया, तरैं निज अवर तरावै।
एक एक माहि बलती अगनि, चेढंता लोही चुसै।
उपजै बुद्धि धर्मसी इसी, वास आइ जेहवै वसै॥ ७॥

ओछो नर ओहिज, नजरि तलि बीजां नाणै।
" " " ओछौ वलै आप वखाणै।
" " " रूडा दाक्षिण्य न राखै।
" " " आप म्हे परन्तु आखै।
दूहवैं कवण मुख कहि दुरस, आचरणैं सहु अटकलै।
पारखा देखि जल घट प्रगट, ओछो ते हिज अलै॥ १८॥

अवगुण ह्वै आलसू, अवल थिरता गुन आणै।
चपल होई चल वित्त, वडौ उद्यमी वखाणै।
महा मुंक ह्वै मुखे तौ मनैं नहीं घोल म घोला।
क्युं कहतां क्युं कहैं, भला छै मन रा भोला।
पात्रे कुपात्र धन द्यै प्रगट, वड दाता धन ज्युं वरै।
धर्मसीह देखि परसाद धन, अवगुण ही गुण आचरै॥ १६॥

आज के मित्र

आंखि लाज करि आज, रीति रस री रुख राखैं।
हसते लातैं सहीयै, भेद सुख दुख रा भाखै।
अलगा हुवा अंस, नेह तिल मात न आंणै।
जुदा न गिणता जीव, जीव परदेशी जांणै।
आज रा मीत बहुला इसा, कोइ गिणैं नहीं हित कीयौ।
कहौ इसै मित्र धर्मसीह कहै, हेजैं किम विकसैहियौ ॥२०॥

स्वार्थ

अफल रुंख अटकले, परा उड जाये पंखी।
सर सूको संपेख, कोइ न हुवै तसु कंखी।
वले पुहप विणवास, भमर मन मांहि न भावै।
दव दाधो वन देखि, जीव सहु छोडि जावै।
निरधनां वेस नांणे नजरि, किणरौ वलभ कवण कहि।
स्वारथै आवी सेवे सहु, स्वारथ रौ संसार सही ॥ २१ ॥

कहै पांखा सुणि केकि, कंत तुझ लागि केडे।
करि कु मया तु कांइ, फूस ज्यु अम्ह पां फेडै।
सुन्दर माहरे सङ्ग, कहै सहु तोने कलाधर।
नहीं तर खुथड़ो निरखी, नेट निन्दा करसी नर।
अम्ह घणी ठाम बीजी अवर, धरमी आदर करि धरै।
मांहरै सुगुण सोभा मुगट, श्रीपति पिण करसी सिरैं ॥२२॥

खिसतां निज खाण थी, रयण कहै सांभलि रोहण।
अठै अम्हें उपना, महिर थारी मन मोहण।
करिजे तु कल्याण, इसौ मन मैं मत आणे।
ठांम चूकवे ठिक्क, ठहरसी किसे ठिकाणे।
वास में जाइ जिण रे वसां, घर री पुण्य दशाघिरै।
मांह रै सुगुण शोभा मुगट, श्रीपति पिण करसी सिरै ॥२३॥

धन गर्व निषेध

गरथ तणैं गारवे, हुऔ गहिलौ विण होली।
नेट करैं निबलरी ठेक हासी ठकठोली।
मन ही मन जांणे मूढ़, मूल ए किण री माया।
साच कहैं धर्मसीह, छती छवि बादल छाया।
उलटी सुलट्ट सुलटी उलट, ए थिति आदि अनादिरी।
घडी माहि देखि अरहट्ट घड़ी भरि ठाली ठाली भरी ॥ २४ ॥

परोपकार

घडी घडी घड़ियाल, प्रगट सद एम पुकारैं।
अवर भवैं ऊंघतां, जगिज्यो मनुष्य जमारै।
दुखिया रै सिर दंड, घड़ि घड़ि आयु घटंता।
काठ सिरै करवती, किती इक वार कटंता।
तिण हेत चेत चेतन चतुर, धर्म सीख सविशेष घर।
सहु बात सार संसार में, कोइक पर उपगार कर। २५।

ड़ड़िया जिम गुंछलौ, खाइ बैठो मन खौटे।
गिल ढ़ी हीया गोढ, छेहडै आदर छोटै।

मुंहडै सु पिण मिलै, नाक सुं अधिकै नाते ।
बिहुं मुहड़ौ बोलतौ, खत्त पत्त गिणै न खाते ।
व्यवहार शुद्ध व्यापार थी, तजियो सहु लोके तिणै ।
बोलैं न कोइ इण सुं बहुत, इड़ियो फल सरिखा गिणैं ॥ २६ ॥

चातक नुं छै चतुर, सीख सुणि वयणे साचे ।
पिउ पिउ करे पोकार, जलद सगला मत याचे ।
के जल थल इक करैं, उणां थी पूगै आसा ।
मरड फरड केइ गरजि, नेटि उडिजाइ निरासा ।
लहणीये जोग आफे लहिसि, पुरालब्धे पुन्य पापरी ।
धर्मसीउ कहैं धीरज धरे, ओ ही मत ग्यै आपरी ॥ २७ ॥

छात्र तिकौ छावरै, दोष गुरु निजरां देखे ।
पांचा माहे प्रसिद्ध, सुजस बोले सुविशेषै ।
छाप धरै सिर छती, ग्राहकी होइ गुणांरो ।
विद्या तसु वरदायी, उदय वलि होइ उणांरो ।
छल छिद्र ताकिल्यें छीटका, छांनो कहै अछती छती ।
पांचमै तास ऊंधी पडैं, गुर लोपी सो दुरगति ॥ २८ ॥

जो हालाहल जर्यो, जोइ मन्मथ रिपु तैं ।
भाल नैत्र महि भर्यो, वले वन अनल वदीतै ।
शंकर ऐही शकति, होइ तोइ रजवट हालण ।
ससि गिरजा सुर सरित, पासै राखै तिहुं पालण ।
तिण रीति सु बुद्धि धर्मसी तिकौ, धुरा दृष्टि ऊंडी धरै ।
जल वालि पालि बांधै जरु, काज रजनीति हि करै ॥ २९ ॥

झडी पडी झुंपडी, किया दर उंदर कोले।
गंधीला गूदड़ा, खाटपिण बंधण खोले।
कांमणि सोइ कुहाड़, कलहणी काली कांणी।
करती जीमण करै, धान सगलौ धूड धाणी।
रोगियो आप माथै रिणो, रोज दुख सुख नहीं रती।
मोहनी देखि धर्मसी महा, जांणै तोइ न हुजैं जती ॥ ३० ॥

ञ्चीयौ कहै हुं निवल, नाम किण ही में न पडुं।
छिप्पो वरग रैं छेह, देखि तोइ कहै मुझ दुपडुं।
झगड़ा झाटा झांझ झझौ सहु बाते झूठौ।
पहिली ते हुं पछे, एह किम न्याय अपूठौ।
दीसैं न न्याय भोगवि दसा पड़छो सुदि वदि पख रौ।
देखे नैं साच दाखैं दुनी, खांड़ो चांदौ ए खरौ।

गर्व

टीटोडी निज टांग, सही ऊंची करि सोवें।
औ पड़तो आकास, दुनी नैं रखें दु खोवैं।
थांभसि हुं विण थंभि, इसो मन गारब आण।
कूअति मो मैं किसी, जीउ में इतो न जाणैं।
मोहनी छाक परबसि मगन, संसारी ऐ जीव सहु।
ओछो न कोइ मन आपरैं,
किण किण नैं नहीं गरब कहु ॥ ३२ ।

ठिक्क वचन ताहरौ भलौ हितकारी भाखैं।
प्रसिद्ध वधै परतीत जास सहु कोइ राखै।

मर कह्यौं कोइन मरैं, जीव कहै कोइ न जीवै ।
तोइ खारो जल तजै, प्यार करि अमृत पीवै ।
गांठि रो कोइन लगैं गरथ, सिगला हुइ जिण थी सयण ।
धर्म नैं कर्म सहु में धुरा, बडी वस्तु मीठौ वयण ॥ ३३ ।

डाह्यो हुइ सो डरैं कोइ मत भूंडौ कहसी ।
घर डर कुल डर घणो, सुगुरु डर डाकर कहसी ।
माण तणैं डर मुदै लाज डर करणो लेखें ।
मावी तां डर मानि, सांमि डरकर सुविशेषे ।
दुरगत दुख परभव डरैं, जाण करैं डर नव जिको ।
धर्मसींह कहै सहु धर्म को, तत्व सार जाणे जिको ॥ ३४ ।

ढीली बात मढाहि पुण्य रो कारिज पडतां ।
" " " न्याय सुधो नीवडतां ।
ढीली बात मढाहि बहस सुं पडियै बोले ।
" " " ढमकीए वाहर ढ़ोले ।
सहु करै पूछि आगे सुजस, ढीली तठै न ढाहिजै ।
आवियै दाव औठंभतां, कुल धर्मसीह कहाइजै ॥ ३५ ॥

अपनी अपनी

नर मांदौ निरखि नें, वैद कफ वात वतावे ।
जो पूछै जोतसी, लार ग्रह केइ लगावैं ।
भोपो कहै भूत छै, लोभ वीभासणि लीधौ ।
जंत्र मंत्र रा जांण, कहै कोइ कामण कीधौ ।

मंदवाड़ एक नव नव मता, मूल न जाणे को मरम ।
कहै साधु अशुभ पूर्व करम, धरि सुखकारी इक धरम ।३६।

तीन कोडि तरु जाति, आंणि वलि लाख इक्यासी ।
सहस वार एकसौ, भार इक संख्या भासी ।
आठ भार ते इसा, फल्या लाभै फल फूलै ।
भार च्यार विण फले, भार षट लता म भुल्लै ।
करि शास्त्र साखि धर्मसी कहै, भार अढ़ार *वनस्पती ।
विणलीयां सुंस खाधां बिगर, छहु ॠतु में हिंसा छती ।३७।

थिर दीसैं थि गति, अलग आकाशैं उड्डि ।
पिण पल पल पवन सुं, गुडथला खायें गुड्डि ।
जिण रो न चलै जोर, डोर परहत्थ दबाणी ।
पर सिद्ध कीध पुकार, नेट किण ही मन नांणी ।
तूटैं न डोर छुटैं न तिम, ऊंची तलफै आफलैं ।
प्राणीयैं इम परवस पड्यां, गमियौ नर भव गाफिलैं ।।३८।।

उद्यम

दूहिजै उद्यम दूध, जतन करि दही जमावै ।
वलि परभात विलोइ, उदिम सेती घृत आवै ।
करि उद्यम सहु कोइ, भला नित जिमैं भोजन ।
खबरि आणैं खेपीयौ, जाइ नै केइ भोजन ।

* अडसट्ठि कोडि सट्ठि लख सतरै वलि सहस्स ।
उपरि मेलौ आठ सौ भार अठार वणस्स । १ ।

व्यापारि विणज विद्या विभव,
ज्ञान ध्यान धर्मसीख गिण ।
सहु काज करण उद्यम सिरैं,
विणसैं सहु इक उद्यम विण ॥ ३६ ॥

धरिजें मन धीरज्ज हांणि ह्वै म करे हा हा ।
लागा वहैं ज लार, हांणि दुख त्रोटा लाहा ।
भांति अनैं ऊभत्ति प्रगट दिन राति पटंतर ।
ऊगें वलि आथमै निरखि रवि चंद निरन्तर ।
ग्रह राह परब आयो ग्रसै, परगट देखि पारिखा ।
किण हीक देइ धर्मसी कहै, सहु दिन न हुवै सारिखा ।४०।

नारी विरहणी निरखि ताम कोकिल कुहकी घन ।
चंद त्रिविध पुनि पौंन, मदन अति व्यापि लयौ मन ।
वायस राहु भुयंग रुद्र च्यारु अरि लखै ।
तिन कौ करि हैं नास बहुरि इक बात विशेषैं ।
कोकिला कंठ शशधर बदन पौंन स्वास पुनि मदन मन ।
मेरेहु गृहं जिन ज्यान हुइ, लिखि-२ मेटण इण जतन ॥ ४१ ॥

पुण्य पाप पातिसाह चाउ सहु दिसि पग चल्ले ।
साच झूठ हुइ सचिव, हुंस आछुं दिसि हल्ले ।
ज्ञान ध्यान भ्रम गरब, पील चल्लें चिहुं पट्टे ।
शम दम छल बल अश्व, अढी पग फिरै उवट्टे ।
चखु चलण ऊंठ कोणे चलैं,
प्यादा गुण मद पग्ग पगि ।

सतरंज सजण दुज्जण सजें,
जोइ ख्याल धर्मसीह जगि ॥ ४२ ॥

फल किहां थी विण फूल, गाम बिना सीम न गिणजै ।
गुरु विण न हुवैं ज्ञान, विगर पूंजी किम विणजैं ।
पिया विना नहीं पुत्र, बुद्धि विण शास्त्र न बूझै ।
भींत विना नहीं चित्र, सुदृष्टि बिन वस्त न सूझै ।
विण भाव सिद्धि न हुवैं, रस विण न करै कोई रुख ।
शोभा न कांइ धर्मशील विण, संतोषह विण नहीं सुख ॥ ४३ ॥

१० वर्ण

ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शुद्र, चिहुं वरण संभाली ।
कंदोई कुम्भार कठी मरदनीया माली ।
तंबोली सुथार ठीक भैंसात ठंठारू ।
नव नारु इण नाम कहै हिव पांचे कारु ।
गांछा सुनार छीपा गिणौं, मोंची घांची इण महि ।
धर्मसीह कहैं निज निज धरम, समझौ वरण अढार सहि ॥४४॥

धन को सार्थकता

भायां भीड़ भाजतां, पोखतां उत्तम पात्रे ।
प्रिया हुंस पूरतां जावतां तीरथ यात्रे ।
वीवाहे विलसतां दुजण जड़ काढण दावैं ।
संतोष तां सैंण कविय मुख सुजस कहावैं ।
इण आठ ठाम खरच्यो उत्तम, मत चीहा पैं आप मन ।
साधिजै काज मुं क्रियार था, धन धन धर्मसीह सोइज धन ॥४५॥

मित्र

मिलतां मुहां मुंह, हेज हियै मिले हीसै ।
पल एक फेरयां पूठ, नेह तिल मात न दीसै ।
आरीसा जिम आज, मीत बहुला जग मांहे ।
कलि चातक जिम कोइ, नेह राखैं निरवाहे ।
मेह नै देखि पिउ पिउ मगन पिउ पिउ कहै पर पूठ पिण ।
कीजीयं मीत धर्मसी कहैं, गुणवंतौ कोइक गिण ॥ ४६ ॥

याचना

यश रस सिद्धि बुद्धि सिरी, सदा ए पांच सनूरैं ।
देह वसैं देवता, दे कह्यां नासैं दूरैं ।
शोक अने सन्ताप, पिंड आवैं परसेवो ।
भय कंपणि गति भंग, निसत निज लाज न सेवो ।
तांणतौ मांण ताकै तिको, ऊंधै मुख सु आंगणो ।
लेखवौ दुरस सगले लखण, मरण सरीखो मांगणो ॥ ४७ ॥

दान

राजा राखैं रजा वाणिया प्रसिद्ध वधारैं ।
वैरी न करैं बुरो, सेवक सहु काम सुधारैं ।
भाइ सहु ह्वैं भीर, गुणी जन कीरति गावैं ।
स्वासणि द्यै आसीस, सासरै रह्यौ सुहावैं ।
सहु भूत प्रेत ग्रह ह्वै समा, सुपात्रे ह्वै धर्मसी सही ।
देखिज्यो दान दीधौ थकौ, नेट कठे निष्फल नहीं ॥ ४८ ॥

बुढापा

ल्ये हाथ लकडी, लाल मुखि पड अलेखे ।
लिच पिचती कडि लाक, लाज मन माहि न लेखे ।
साभलता धर्मसीख, वीर्य विण माथो धुण ।
को न गिणै कायदो, खाटले पडियो खुण ।
लघुनीति लोभ लिग लिग लहरि, लाल लीख वलि लाल्हरा ।
ले आइ साथि माते लला, जिका काइ कीधी जरा ॥ ४६ ॥

बढना बुरा

वेर वध्यो हिज बुरौ, अधिक उपद्रो ह्व आग ।
वध्यो बुरौ वासदे, लाय जिण सेती लाग ।
व्याधि वधी हिज बुरी, छिज देही जिण छिण छिण ।
वाद वध्यो हिज बुरौ, खमा खेधौ ह्व खिण खिण ।
वधियो बुरो ज सगलौ विसन, धर्मसीख धरिजो जुग ।
करिज्यो विवेक ज्यु ह्वै कुशल, वधा पाच वधिया बुरा ॥ ५० ॥

नीति

सँ मुख गुरु र मुजस प्रसिद्ध कीज परससा ।
सगा सणेजा सैण, वरणवो पठा वासा ।
सेवक री परसस, काम सिर चढया केडे ।
सह भाइ परसस, छिद्र कहावण केट छेटे ।
पूत री परसस न कर प्रगट, प्रगस त्रिय धकिया पछ ।
धर्मसीह राजनीति हि धरे न्याय विना वाता न छ ॥ ५१ ॥

खल

खल न तजे मन खार, जरा हुई बूढ़ौ जोइ ।
पीलो हुवो पाकि, तूस खारौ फल तोइ ।
बूढ़ौ हुओ विलाड़, मूषकां तौ पिण मारे ।
सखरी द्यां धर्मशीख, धेख जे अधिको धारे ।
विष में मिठास न हुवै वली, दूधां ही सूं पुट दीयां ।
हठ ताणि आप न गिणे हितू कासूं तिण सूं हित कियां ॥ ५२ ॥

बहू

मांवटि सीरख सेज, पुंजि घर आणैं पाणी ।
धोइ सहु वासण धरै, रूडां चूल्हैं रंधानी ।
पीसण खांडण प्रसिद्ध वले गो दूहि विलोवे ।
जीमण रांधि जिमाव लाज सुं जिमैं लुकोवै ।
सिर गुंथि विनय संतोषणी, सासू जिठाणी सहू ।
कुल धर्मशील शाभा करण, बड़े कष्ट जीवैं बहू ॥ ५३ ॥

जल

हुवै पिंड जल हुता, बेल जल ही ज वधारै ।
जल सहु रो जीवन्न, सहु ब्रह्मंड सुधारै ।
नीर तहां ही ज नूर, आब तिहां आवादानी ।
सरस सुभिक्ष सुकाल, प्रबल बरसे जिहां पाणी ।
धर्मसीह सरब कारण धुरा, अम्बर पृथ्वी पवन अगि ।
पंचभूत मांहि अधिको प्रगट, जल उपरांत न कोइ जगि ॥ ५४ ॥

गृह प्रवेश निषेध

लंपट तजि प्रौलीयौ निगुण प्रभु नीलज नारी।
चौकीदार ज चोर, जोर वर जोध जुआरी।
ठिक विण बांभण ठोठ भ्रमी मित्र कायथ भोलौ।
वलि रीसट वाणीयो, दूत बोले डमडोलौ।
विन सिद्धि वैद जोसी जडौ, धर्मसीख विण धारणैं।
मांनि जो वैंण आणौं मतां, बारै ही घर बारणैं॥ ५५॥

क्षमावंत सौ खरो, सकज हुइ गाल्यां सांसैं।
नेही तेहिज नेट, विछड़यां भूरै वांसैं।
पंडित तेहिज परखि, शास्त्र अरथ समझावै।
ज्ञानी तेहिज गिणौं, वस्तु पहिली ज बताव।
सांकड़े आइ पडिया सही, सैंण सोइ राखै सरम।
दातार छतें ऊतर न द्यै, धीर सोइ न तजें धरम॥ ५६॥

सतरैं से संवत, वरस तेपनौ वखाणौं।
श्रावण सुदि तेरसैं, जोग तिथि शुभ दिन जाणां।
राजैं बीकानेर, सूरि जिणचन्द सवाइ।
भट्टारक वडभाग, गच्छ खरतर गरवाइ।
श्री विजयहर्ष वाचक सुगुरु पाठक श्री धर्मसी पवर।
बावनी एह प्रस्ताव बहु, कीधी छप्पय कवित्त कर॥ ५७॥

—:ॐ:०:ॐ:—

दृष्टान्त छतीसी

श्रीगुरू को शिक्षा वचन, दिल सुध धरि निरदंभ ।
हितकारण सबकुं हुवैं, अड़वडताँ औठंभ ॥ १ ॥

हितूआं हितकारी हुवै, वांकौ ही कोइ वैण ।
पारिख रतन परीखतां, निरखैं वांकी नैण ॥ २ ॥

दूषण दीधैं दुरजणे, ओपै कवित असह्य ।
लूअ झलक्के लागतैं, आंबै स्वाद अवह्य ॥ ३ ॥

दूजां नै सुख देखिनै, निपट दुखी ह्वै नीच ।
सूकैं जव्वासो सही, वरिषा जलरइ वीचि ॥ ४ ॥

ध्रमसी कहै वधतैं धनैं, त्रिसना वधै अथाग ।
धुरथी अधिकी धग-धगइ, इंधन मिलियां आगि ॥ ५ ॥

स्वारथ अंपणौ नां सधैं, मित्र धरंता मेलि ।
माली फल पाम्यां पछै, काटे पर ही केलि ॥ ६ ॥

मोटां री पिण पांति मै, नान्हैं काज कराय ।
काम पड्यें क्युं कोडियां, नाणां में न गिणाय ॥ ७ ॥

बल इकवीस विश्वा-वधइ, एका बीयैं आइ ।
पांतैं बैसै पाधरा, तौइ बारां बल बोलाय ॥ ८ ॥

मुखी सलांमत पांतिमै, तौ सकजा बोलैं सर्व ।
तिण ठांमै ह्वै सून्यथा, तौ गयौ महूनौ गर्व ॥ ९ ॥

पग मेल्हीजैं पाधरा, वधीयौ जौ बहु वित्त ।
निज निंदा थी कीध नृप, चीतारी दृढ़ चित्त ॥ १० ॥

गुरू निंदा करणी नहीं, माठौ देखे मग्ग ।
सेलग गुरू मदवसि सूअं, पंथग चांपै पग्ग ॥ ११ ॥

पाप किया जायै परा, जौं पछतावै जोइ ।
गौसालौ स्वर्ग गयौ, अंत समै आलोय ॥ १२ ॥

दूजा दिपावै दीप ज्यूं, आप धरै अंधार ।
पहुचाया शिवपांचसै, खंदक पोतैं ख्वार ॥ १३ ॥

बल सगलौ बैठौ रहै, देव हुवै दुख देण ।
बारवती नगरी बलै, निरखै केसव नैंण ॥ १४ ॥

करि हितनै पीडा करै, ते तौ पुण्य तरक्क ।
स्वर्ग गयौ श्री वीररा, खीला काढि खरक्क ॥ १५ ॥

अवसर सभा अटकले, वायक वंद्यां संवाद ।
दूहा दे जीतउ जती, वृद्धोवादी वाद ॥ १६ ॥

सबलां री हूं पूठि सिरि, निबलां रौ रहै नीर ।
चमर शक्र सांम्हौ चढ़यौ, वांसौ राखण वीर ॥ १७ ॥

कोप वसै कारिज करैं, वलि सोचैं मतिवंत ।
इन्द्र दौड़ि लीधौ उररौ, वज्र भगति भगवंत ॥ १८ ॥

धरम्यांनै पिण तजि धरैं, सहु वखतावर सीर ।
इन्द्र चेडा नै अवगिणी, भयौ कोणिक री भीर ॥ १९ ॥

जतन करें जो देवता, क्रूर मिटैं नहि कर्म ।
वीर श्रवण मैं कील कै, महापीड हुइ मर्म ॥ २० ॥

मोटा ही ध्रम काम में, अधिकौ करैं अदेख ।
दसारण री रिधि देख नै, शक्र संज्यों सुविसेष ॥ २१ ॥

मोटां रैं पिण कष्ट में, जतन नेह सहु जाय ।
रातें रमणी रांन में, नांखि गयौ नलराय ॥ २२ ॥

राज लैंण मांहे रहैं, वडां तणी मति वक्र ।
भरत मारण भ्रात ने, चपल चलायौ चक्र ॥ २३ ॥

दांन अदान दुहूं दिसी, अधिक भाव री ओर ।
नवल-सेठ नें फल निबल, जीरण नै फल जोर ॥ २४ ॥

धरमी जे धरमैं धरें, निसचौ न तजै नेट ।
चंद्रवतंसक नां चल्यौ, थिर दिवालगि थेट ॥ २५ ॥

दिढता धरमे देखिनें, भलौ करें सुर भाव ।
हित जंबू देवी हण्यौ, प्रभवा तणौ प्रभाव ॥ २६ ॥

प्रापति होवैं पुण्यरी, बखत खुलै तिण वेल ।
संगम पायस संग में, मुनिवर संगम मेल ॥ २७ ॥

दान सराहै देवता, चेला दीध विशेष ।
मूलदेव नें राजपद, देवैं दीधो देखि ॥ २८ ॥

पापी नै दुख पाडिजै, तो इ पाप न तजंत ।
कालकसूरे कूप मैं, मन सौ मारे जंत ॥ २९ ॥

आप कष्ट अंग आंगमै, पंडित टालै पाप ।
सुलस दया पाली सही, पग पोता रो काप ॥ ३० ॥

मुनीसरां सिरि मोहरा, ताजा वाजैं तूर ।
अंगज मृति आख्यां भरी, श्री शय्यंभवसूरि ॥ ३१ ॥

पण अपणौ नहि पालटै, धरमी धीरिज धार ।
लाडू हरि लबधइ लह्या, तजिया ढंढण त्यार ॥ ३२ ॥

वृत लीधौ ही हुै वृथा, करम उदय अधिकार ।
वरस चौवीस गृहे वस्यो, मुनिवर आद्रकुमार ॥ ३३ ॥

पतित थका ही परभणी, गुणी करै उपगार ।
नर दश दश नंदषेण नित, बोधै वेश्या बार ॥ ३४ ॥

काम विषम न सधै किम्ही, सो ल्यैं शील सुधार ।
चालणीयै करि सीचीयौ, नीर सुभद्रा नारि ॥ ३५ ॥

रे कलियुग गज मत गरज, हुं हिज आज अबीह ।
तुझ मद उत्तारण तपै, सकजौ जिन <u>ध्रमसीह</u> ॥ ३६ ॥

इति श्रीसदगुरु शिक्षा दृष्टांत षट्त्रिंशिका ।

—:o:—

परिहां (अक्षर बतीसी) बतीसी

काया काचे कुंभ समान कहैं क कौ ।
धांखै वेखी काल सही देसी धको ।
करवट वहतां काठ ज्युं आउखो कटै ।
परिहां न धरै तोइ धर्मसीख जीव नट ज्युं नटै ॥ १ ॥

खमिजैं गालि हितूनी इम कहै ख खौ ।
रीस करी कहैं तेह कहीजे हित रखो ।
आणा सैंणा वैण सुं आख्यां उपरैं ।
परिहां धर्म कहै सुख होइ धूअें ही धूप रैं ॥ २ ॥

गरथ पामी गुण कीजे इम कहे गगो ।
साहमी माधु सुपात्र संतोपीजै सगौ ।
लाधि छै जो लाछि कहैं धर्म लाहल्यौ ।
परिहां संची राख्या मैंण अपांनै स्वाद सौ ॥ ३ ॥

घड़ि मांहे घड़िजाहे, आयु कहै घ घो ।
अमर न दीठौ कोई जीव अठा अघौ ।
पहिली को दिन च्यार दिन को पछै ।
परिहां आखर कहै धर्मसीह मही चालणो अछै ॥ ४ ॥

नेह वधै नहीं नेट, हुए अंगुल ढीहीयै ।
लुलि नमीयौ तो का सुं लोक लजा लीयै ।

गाठि हीयै धर्मसी कहै सुख मता गिणौ।
परिहा औ गुण इणहिज छंडियो आमण दूमणौ ॥ ५ ॥

चकवा ज्यु चल चित्त, न हुजे कहे चचो।
पर वसि प्रीति लगाइ तलफि नें क्यु पचो।
सिरज्यो है सम्बध किसु हा हा किये।
परिहा धीरज धर धर्मसीह रखे हारे हीये ॥ ६ ॥

छक देखि खेलीज गम कहो छछे।
पछतावो जिण काज लही न हुवे पछै।
आखर जे धर्मसीह हुवे उतावला।
परिहा विणसाडे निज काज सही ते बाउला॥ ७ ॥

जोबन जोर गिणे नहीं केहन कहै ज जो।
गरब चले ता सीम हुवे देही गजौ।
धीरो रहे धमसी कहे हासी होइसी।
परिहा जोबन बीते कोइ न साम्हो जोवसी ॥ ८ ॥

झगड म झग झूठ कह छें यु झ में।
न्याय नहीं कोइ मागि दुखे देही दमें।
कूडे की परतीत न, साचो ही कहें।
परिहा रागा बिना धर्मसी कह चेजो क्यु रह ॥ ९ ॥

न धरो तिण सु नेह मिले नहीं जे मुखै।
टुपडौ दीसै टर, अनै बोले दुखै।
आखर एह अछें जो इणहिज बेतरो।
परिहा चीतारै नहीं कोइ ञ्चयो भाट चुलेतरो ॥ १० ॥

टलिये नहीं विवहार, ग्रही निज टेक रे।
बात सहु नौ दीसे एह विवेक रे।
निखरौ ही धर्मसी कहै ल्यो निरवाह रे।
परिहां महादेव विष राख्यो ज्युं गल मांहि रे॥ ११ ॥

ठांम देखि उपगार करो कहियौ ठठै।
तत्त तणी तूं बात म नाखि जठे तठै।
कीजैं नहीं धर्मसी उपगार कुजायगा।
परिहां सींह नी आखि उघाड़्यां सीह ज खायगा ॥ १२ ॥

डेरा आइ दीया दिन च्यार कहे डडौ।
गयो हंस तब काय बलों भावैं गडौ।
वाय वाय मिल जायें, मट्टी मट्टीयां।
परिहां खूब किया धर्मसीह, जिणें जस खट्टीयां ॥ १३ ॥

ढुँढ़ो ढ़ाढ़स लागि, दोस मिस कहै ढ ढो।
पारद गोली पाक करौ पोथा पढ़ो।
जंत्र मंत्र बहु तंत्र जोवो जोतिष जड़ी।
परिहां घाट बाध धर्मसीह न होइ तिका घड़ी ॥ १४ ॥

नहु लंघीजै लीह, एक मावीत री।
राखीजै वलि लीह सदा रज रीति री।
ईस तणी इक लीह धरो धर्मसीह अखी।
परिहां राणें आखर न्याय त्रिणे रेखा रखी ॥ १५ ॥

तत्त जाणी इक बात तिका कहै छै त तो।
माया संचै सुंब तिको खोटौ मतो।

खाडि गाडि राखी ते कोइ खायसी ।
परिहां थेट नेट धरती में धूड़ ज थायसी ॥ १६ ॥

थिर न रहीं जगि कोइ इसो बोले थ थो ।
फोगट फिरि फिरि कांइ माया जालें फथो ।
टले केम धर्मसीह कहै आयौ टांकड़ौ ।
परिहां मांडी आप जंजाल उलूधौ माकडौ ॥ १७ ॥

देइ आदर दीजैं दान कहै द दौ ।
माणस रैं धर्मसी कहै आदर सु मुदौ ।
पाणी ते पिण दूध गिणो हित पारखी ।
परिहां आदर विण साकर ही काकर सारिखी ॥ १८ ॥

धरौ सीख मोटांनी एम कह्यो ध धै ।
बालक जीव्या हंस पड्या धाजै बधै ।
शुकै दीधी सीख कढ़ी कानां तलै ।
परिहां राज गमाइ गयो बलिराइ रसातलै ॥ १९ ॥

न करो मन में रीस कह छै यु न नौ ।
मानी छै जो रीस तोइ वइगा मनो ।
तांण्या अति धर्मसीह कहै नूटै तणी ।
परिहां राइ पड्यां मन मोती जाइ न रेहणी ॥ २० ॥

परदेसी सुं प्रीति म करि कहीयो प पे ।
जोरै उठी जाय तठा सुं तन तपै ।
बार बार चीतारैं धर्मसी बत्तियां ।
परिहां छूटै नयणां तीर भरायैं छत्तियां ॥ २१ ॥

फल दीधै फल होइ कहै छै यु ंफ फौ ।
निफल पहिली हाथ किसुं आणै नफो ।
सेवा कीधां ही ज सही कारिज सरै ।
परिहां दाखै धर्मसीह दिल्ल ठरैं तो ढाफुरै ॥ २२ ॥

बोल्यां मोटा बोल किसुं कहियो बबे ।
दीसैं आयौ दाव तठै नचो दबै ।
साच नहीं जिणरें मन तिणसुं सरम सी ।
परिहां धैठे माणस सुं हित केहो धर्मसी ॥ २३ ॥

भलपण कीजैं कांइक एम कहो भ भौ ।
लोकां माहे जेम भली शोभा लभौ ।
जीव्या रौ पिण सार इतौ हिज जाणीयै ।
परिहां उपगारें धर्मसी कहै काया आणीयै ॥ २४ ॥

मित्राइ रो मूल कहै धर्मसी म मौ ।
नयणे देखौ मित्र तरै पहिली नमौ ।
दीजे लीजे कहीजे सुणीजे दिल्ल री ।
परिहां खावै तेम खवावै प्रीति तिका खरी ॥ २५ ॥

या यौ कहै यारी करि तिण हीज यार सुं ।
पडीयां आपद माँहि बुलावै प्यार सुं ।
पूरौ प्रीतो ते जे तलफै तिण पगा ।
परिहां सुख में तो धर्मसी हुवे सहु को सगा ॥ २६ ॥

रंक राउ इक राह चलै बोले र रौ ।
द्वेष राग धर्मसी कहै एता क्युं धरौ ।

एता नव नव रंग बणावै अंग सु ।
परिहां राख सहुनी होस्यै एकण रंग सु ॥ २७ ॥

लोभ गमावै शोभ कहै छै यु ं ल लौ ।
भाखै लोक सहु को लोभी नहीं भलौ ।
लालच वसि धर्मसी कहै थोडो लग्गीयै ।
परिहां मान महातम मोह रहै नहीं मग्गीयै ॥ २८ ॥

वात घणी वणसाड हुवै कहै छै व वो ।
निखरी नीकलि जाइ उदेग हुवैं भवो ।
बहु गुण छै धर्मसी कहै थोडो बोलीयै ।
परिहां थोडी वस्तु सदाइ मुंहगी तोलीयै ॥ २९ ॥

शीख न मानें सुंआलागी को मही ।
कलियुग मांहे ग्वैडैं री पृथ्वी कही ।
आंकत्रीयो ते लाठी ले ने उरडियौ ।
परिहां मान्यो अखरां में पिण शशियो कोठा मुरडियौ ॥३०॥

क्षेत्र महे खण धार खरं रिण नांखिसे ।
खेले खीले वांस ग्वले खेत्रे खसै ।
पेट काज धर्मसीह इता दुख पाडीयै ।
परिहां फाड्यो पेट सुन्यायै ख खें फाडीयै ॥ ३१ ॥

सत्त म छाडौ मैंण कह्यो छै यु ं समै ।
कष्ट पडे ते ईस कसोटी में कसै ।
जोवो सत्तो सिद्धि हुइ विक्रम जिसी ।
परिहां साकौ राखैं सोइ सही कहै धर्मसी ॥ ३२ ॥

हरखै हियो जिण नै देखि कहै ह हौ ।
पूरव भव री प्रीति कंइ तिणसें कहौ ।
हेत कहै धर्मसीह छिपायौ नां छिपै ।
परिहां चुंबक मिलिया लोह तुरत आवी चिपै ।। ३३ ।।

संवत सतरैसार वरस पेंत्रीस (१७३५) में ।
जोड़ी अखर बतीसी श्री जोर में ।
विजयहरष जसवास सुं लोकां में लहै ।
परिहां करि कंठ प्रस्तावी, धर्मसी जे कहै ।। ३४ ।।

—:०:—

सवासो सीख

श्री सद्गुरु उपदेश संभारो, धर्मसीख ए सुबुद्धि धारो ।
विधि सहु मांहि विवेक विचारौ, सगला कारिज जेम सुधारो ।।१।
प्रथम प्रभाते शुभ परिणाम, नित लीजे श्री भगवंत ना नाम ।
धणी रा स्वामिधरम में रहिजैं, कथन न मुख थी झूठ कहिजै ।२।
धरम दया मन मांहे धार, अधिको सहु मैं पर उपगार ।
बात म करि जिहां बसिवौं वास, वैरी नौ म करे विश्वास ।।३।।
वरजे सन स ठामि व्यापार, चालें अपणें कुल आचार ।
माइतांरी आण म खंडै, मोटां सेती हठ म मंडै ।।४।।
झगडे साख म देजे झूठी, आप वडाइ न करि अपूठी ।
म लडे पाडोसीसु मूल, अपणां सु होजे अनुकूल ।।५।।
सजि व्यापार तु पुंजी सारू, अटकलि ठाम देइ उधारू ।
रखे बधारे ऋण नै रोग, लखण लीजैं ज्यु हसै न लोग ।।६।।
वसती छेह म करिजे वास, पापी रै मत रहिजै पास ।
ऊंचौ मत सूए आकाश, वित्त छतैं म करै देखास ।।७।।
दिल रौ स्त्री नैं भेद न दीजैं, कदे ही सांझै पंथ न कीजे ।
सुत भणावे डर डाकर साथे, म चाढे लाड म मारै माथै ।।८।।
नांन्हा ते मत जाणे नांन्हा, छिद्र पराया राखे छांना ।
अधिकारी म करे अदिखाइ, भंभेरे मत भूप भखाइ ।।९।।

राजा मित्र म जाणे रंग, सुमाणस रो करिजे संग ।
काया रखत तपस्या कीजै, दान वलै धन सारु दीजै ॥१०॥

जोरावर सु मत रमे जुऔ, करिजे मत घर मांहे कुऔ ।
वैदां सु मत करजे वैर, गालि बोले तो ही न कहै गैर ॥११॥

नारि कुलक्षण नै धन नास, हलकौ पडीयो पाम्यो हास ।
अति पछतावैं चित्त उदास, पंच में पांचे मत परकास ॥१२॥

अमल न कीजै होडैं अधिका, दरा करीजै घर में विधिका ।
गरथ परायौ तु मत गरहे, निखरैं पाडोसैं पिण न रहे ॥१३॥

दोइ विढ़ता एकलौ मत देखे, धणीनैं बुरौ म कहिजे धेखे ।
जूपे मत मोटां नी जोड़, छोकरवाद री रामत छोड़े ॥१४॥

गांम चलंता सुकन गिणीजे, हणतौ विण किणही न हणीजे ।
विण ग्रहणैं दीजे मत व्याज, निश्चै वरस नो राखे नाज ॥१५॥

दुसमण ने दुसमण मत दाखै, रीस हुवे तोही मन राखै
खत्त लिखावै मत विण साखे, मांण पोता नौ गालि म नांखे ।१६।

लाज न कीजै नामे लेखे, वद्धारै परतीत विशेषे ।
धरिजे मेल ज गांम धणी सु, इकतारी कर अपणी स्त्री सु ॥१७॥

चलतां वसतां सहु ची चीतारे, वाल्हा सैण मतां वीसारे ।
जबाव करतौ रातै जागै, न हु सुइजैं अंगे नागे ॥१८॥

जे करतो हुवै चोरी जारी, उण सु अति नहीं कीजै यारी ।
वसत न लीजैं चोरी वाली, लूंबै मत तु निबली डाली ॥१९॥

दे फुंका म बुझावै दीवौ, पाणी अणछाण्या मत पीवौ ।
छीक कीयां कहिजे चिरंजीवो, रुस्यौ मनावे फाटो सीवौ ॥२०॥

म करे रवि साम्हो मल मूत्र, लखण म करिजे लावा छत्र ।
पाप तजे तुं सकजै पूत्र, सांभलिजे शुभ शास्त्र सूत्र ॥२१॥
भुंडा सुं पिण करे भलाइ, परिहरि पांचे जेह पलाइ ।
बैठां बात करैं बेइ जौ, तेड्या विण तिहां म हुवे तीजौ ॥२२॥
कारिज सोच विचारी कीजैं, खता पड्या ही अति मन खीजैं ।
सुधर्ये काम कहे सावास, न करे याचक निपट निरास ॥२३॥
न करे मूल किण हि री निंदा, छावीजैं वलि गुरु रा छंदा ।
नांम लोपी नैं न हुजै निगरा, नवि थांपीजै कीड़ी नगरौ ॥२४॥
आदर दीजे माणम आये, जिहां नहीं आदर तिहां मत जाये ।
हसजै मत विण कारण हेत, कपड़ौ पिण म करे कुवेत ॥२५॥
बहु विषमें आसण मत बेसें, परघल अणजाण्यां मत पेसे ।
पाणी अति ताणीय न पीजै, सारौ ही दिन सोइ न रहीजे ॥२६॥
बांधे मत मल मूत्र अवाधा, खाजे मत फल जीवां खाधां ।
वसत पराइ मतिय विछोड़, छानी पर नी गांठ म छोड़े ॥२७॥
जिमिजै अगले भोजन जरीयै, शत्रु न हुजै कारज सरीयै ।
पेसे मत अण कलीयै पांणी, तोडे प्रीति अतां मति ताणी ॥२८॥
घर में मत खा फिरतो धिरतो, न कहे मरम वोलीजे निर तौ ।
तारुं सुं मत तोड़ तिरतौ, बडां रै काम म थाए विरतौ ॥२९॥
पंथ टलै तब लीजै पूछ, मोटां साम्ही म मौडे मुंछ ।
तुच्छ वचन म कहै तुंकार, मत बेसे वलि ठांसणी मार ॥३०॥
भोजन उपमा म कहे मुंडी, अपणी जाति विचारे ऊंडी ।
जिण सांभलतां उपजे लाज, एहो म कहे वेंण अकाज ॥३१॥

कीजे नहीं पग पग कचाट, अणहुंतौ उपजे ऊचाट।
मांहिला सु न हुजे मन मट्ठ, हाणि न कीजे अपणे हट्ट ॥३२॥
टेढ़ा न हुजे जंगी टट्टू, ललचाये मत थाए लट्टू।
पंडित मूरख कीजैं परिखा, सगलां नै मत कहिजै सरखा ॥३३॥
न कहें फिर फिर अपणो नांम, ठिक सुं बेसे देखी ठांम।
सुंब नो नाम न लेइ सवारौ, कोई हुसी अणहुंतौ कारौ ॥३४॥
वरजे पर ही वेट बेगार, आप वसे जिहां हु अधिकार।
दुटपी बात कहे दरबार, सहु नौ समझीजैं तत सार ॥३५॥
सीख सवासो (१२५) कही समझाय, साचवतां सहुनै सुखदाय।
थिर नित विजयहर्ष जस थाय, इम कहै श्री धर्मसी उवझाय ॥३६॥

गुरू शिक्षा कथन निसाणी

इण संसार समुद्र कौ ताकैं पेलौ तट्ट।
सुगुरू कहै सुण प्राणीयां तु धरिजै धर्म वट्ट ॥ १ ॥
सुगुरू कहै सुणप्राणिया, धरिजै धर्म वट्टा।
पूरव पुण्य प्रमाण तैं मानव भव खट्टा ॥
हिव अहिलौ हारे मतां, भांजे भव भट्टा।
लालच में लागै रखै, करि कूड़ कपट्टा ॥ २ ॥

उलझैं नौं तु आप सुं ज्युं जोगी जट्टा ।
पाचिस पाप संताप में ज्युं भोभरि भट्टा ।
भमसी तुं भव नवा नवा नाचें ज्युं नट्टा ।
ऐ मंदिर ऐ मालिया ऐ ऊंचा अट्टा ॥ ३ ॥

हयवर गयवर हींसता, गौ महिषी थट्टा ।
लाछ दु लीपी झूंबका पहिग सु घट्टा ।
मांनिक मोति मूंदड़ा परवाल प्रगट्टा ।
आइ मिल्या है एकट्ठा जैंसा थलवट्टा ॥ ४ ॥

लोभे ललचाणा थकौ, मत लागि लपट्टा ।
काल तकै सिर उपरैं करमी चटपट्टा ।
ले जासी इक पल में ज्युं वाउ छलट्टा ।
राहगीर संध्या समें सोवैं इक हट्टा ॥ ५ ॥

दिन उगो निज कारिजे जायें दहवट्टा ।
त्युं ही कुटंब सबै मिल्यौ मत जांणि उलट्टा ।
एहिज तो कुं काढिसी करि वेस पलट्टा ।
साथि जलैंगे वपड़े दुइ चार लकुट्टा ॥ ६ ॥

स्वारथ का संसार है विण स्वारथ खट्टा ।
रोग ही सोग वियोग का सबला संकट्टा ।
दान दया दिल में धरो दुख जाइ दहट्टा ।
धरम करौ कहै धरमसी सुख होइ सुलट्टा ॥ ७ ॥

—:०:०:—

वैराग्य निसाणी

काया माया कारिमी, चिहुं दिन तणी चट्टकि,
इण माहे तुं आत्मा, उलझै रखे अटक्कि ॥ १ ॥

इण माहे तुं आतमा उलझै न अटक्कि,
पहिली तौ पोता तणी, करि शोध घटक्की।
कूड़ धूड़ री कोथली मद मैल मटक्की,
झाली मूढे पंडिते, झंझेडि झटक्की ॥ २ ॥

जोध विरोध वृथा करैं, कन्है काल कटक्की,
मांन मछर मन जांणि मत, मृति नैण मटक्की।
ठग माया झूठी ठटैं खल रूप खटक्की,
फोगट जाइस फुंकि तुस जाइ फटक्की ॥ ३ ॥

एकणि लोभैं आवतां छुए जाय छटक्की,
धरम सरम हित धीरता गुण ज्ञान गटक्की।
मन मातैं मृग ज्युं भमै, व्रग साथि वटक्की,
पर निंदा क्षेत्रे पडैं हिव राखि हटक्की ॥ ४ ॥

नाच्यो वेसे नव नवे धरि रीति नटक्की,
पुण्यैं नर भव पामियौ भवे भव भटक्की।
सुगुरू वचन सहकार री लुलि लुंबि लटक्की,
इण विलग्यां सुख फल अवल त्रुटे न टक्की ॥ ५ ॥

नंदे माया मेलवी पिण नेट न टिक्की,
वाविसु क्षेत्रै ज्युं वले वधै रीत्ति वटक्की।
श्रीधर्मसी कहै ज्ञान री अमृत गुटक्कि,
पीयां दुख जायें परा, सुख होई सटक्की ॥ ६ ॥

—:※:०:※:—

उपदेश निसाणी

मोह वसै केइ मानवी, मांड्या घोलमघोल,
गमियो नर भव गाफिलै, वयविन धरम विटोल ॥१॥
विण धरमे ते जीवड़ा, वग्र सर्व विटोली,
दस मासां थिति उदर री, बहु दुख में बोली।
कोडि अठावीस कष्ट तें खमिया इण खोली,
जनम्यां दुख हुंता जिके, भूल्या भ्रम भोली ॥ २ ॥
माता धोतां त्रमल, भुलरायौ भोली,
हालरि हुलरावियौ, हीडोल हिचोली।
वलि रमीयौ अठ दस बरस तुं बालक टोली,
परणावौ तुं नइ पछैं दयिता हुइ दोली ॥ ३ ॥
मगर पचीसी मांणतौ, करै काम कल्लोली,
गाहड में घुमे घणुं, गिलि मफग गोली।

धन खाटन धपटै धरा, धंधै धमरोली,
लेतां देतां लालचे लुब्धों लपचोली ॥ ४ ॥
मावीतां ही नां मनै दुख द्यै दंदोली,
गरढ़ैं न सरैं का गरज नाणें विण नौली।
परहा सडिया पांन ज्युं तजीया तंबोली,
पूता नवा नव पांन ज्युं पाले पंपोली ॥ ५ ॥
छहु रितु मद मातौ छिलै, छवि छाका छोली,
अफल गमावै आउखो, ठाली ठग ठौली।
उडिसी सास अचांणरौ डिगसी डमडोली,
आभ्रण सगलां ले उरा करै काया अडोली ॥ ६ ॥
फूक्यौं लकड़ फूस में, होइ जांणे होली,
विण भानें इण जीव री, वय सगली बोली।
आदर पर उपगार हिव मन आणि इलोली,
सुखदाइ धर्म सीख सुणि तत लीजै तोली ॥ ७ ॥

वैराग्य सझाय

ढाल—मुरली बजावै जी आवो प्यारो कान्ह—
जोबनीयो जायै छै जी लेज्यो कांइक लाह।
परबत थी उतरतौ पाणी, कहौ फिर चढ़ै न काह जो० ॥ १ ॥

चित्त धरज्यो धर्म चाह, यौबनीयौ ।।आंकणी।।
च्यार दिनां री एह चटक छै नेट नहीं निरवाह ।।जो०।।
यौवन रूप अथिर ए जाणौ, ज्यु' बीजली जल वाह ।।जो०।।२।।
भव इण जो तु' करिस कमाइ, (भलाइ) तौ सहु करिस्यै सराह ।
बल चलिस्यै नहीं आये बूढ़ापा, रोकै चंद ज्युं राह ।।जो०।।३।।
पाको पीलौ पान पीपल नो, थिर न रहै इक थाह ।।जो०।।
ज्यु' आया त्यौ सगला जास्यैं, सिरखा रंक पतिसाह ।।जो०।।४।।
रंग पतंग तणै मत राचौ, काचौ घट कलि माहि ।।जो०।।
कहै धर्मसी भलपण करिवा, आदर करज्यो उमाह ।।जो०।।५।।

वैराग्य सझाय

करिज्यो मत अहंकार ए तन धन कारिमा,
हिव लही नर अवतार तु' आलै हारि मा ।
बावरीयउ नहीं हाथ जिणइ इण वार मां,
माणस हुइ दस मासे मारी भार मां ।। १ ।।
आचरिज्यो उपगार तरुण वय आज री,
दिन दिन जास्ये देह जरा ये जाजरी ।
उठणन हुस्यै आय काय किण काजरी,
सत्त नही नही स्वाद ज्यु' बोदी बाजरी ।।२।।

ठगै काल आउ धन किम करि ठाहरै,
सिंहा री जिम छानो माखण साहरैं।
कोइ जाणे नहीं ले जास्यै काहरैं,
वैंगा होइ चढ़ो हिव किण हिक बाहरै ॥ ३ ॥

दोइ दोइ तरवार कटारि दावता,
जोरावर जोधा करैं जे जावता।
करतां मौजां फौजां मांहि फाबता,
सुभट तिकौ पिण काल न राख्या सावता ॥४॥

जड़ीयउ कुविसन जीवज्युं तणीए ताकड़ी,
फैलैं लोकां माहि कुजसनी फाकडी।
पापैं तो पिण राचि रह्यौ हठ पाकड़ी,
पीतौ दूध बिलाड़ मिणै नहीं लाकड़ी ॥ ५ ॥

जीव जंजाले उलझ्यो ज्युं जोगी जटा,
पाचैं पाम मंझार ज्युं भोभर में भटा।
नाणैं मन में धरम करै साटा नटा,
घेरी जास्यैं काल जेम वाउलि घटा ॥ ६ ॥

भव भव भमते परवसि प्राणी बापडें,
कोडि सह्या जो कष्ट सूजी वसि कापडै।
विलवै जीव घणुं ही तलफैं तापडै,
आखर अपणी कीध कमाइ आपडै ॥ ७ ॥

परनै वंचै संचै पोते पापरो,
ए तुं पोखे पिंड नहीं ते आपरौ।

खोटो चोर वसैं जिण मैं मन खापरौ,
तप हथियारे तोडि तुं तिण रो टापरौ ॥ ८ ॥

सुहिणां माहे रांक हुऔ राजा सही,
मन माहे खुसीयाल हरष मावै नहीं ॥
मोजै पहिर्‌यां मांणिक मोती मुंदडा,
जागी जोवै गोढ़े घर रा गूदड़ा ॥ ६ ॥

जुड़ियौ तिम संबंध सहु सुहिणा जिसौ,
वीखरतां नहीं वार गरथ गारव किसौ ॥
देइस जोतुं कांन सुगुरू वचनां दिसौ,
तौ दुख नहीं जिण ठाम लहिस थानकतिसो १०

क्रोध मान माया वलि लोभ मतां करौ,
दान शील तप भाव अमल मन में धरौ।
विजयहरप जसवास मु लोका में वगे,
धरमसीह कहै एक धर्म मन में धरो ॥ ११ ॥

—:—

हितोपदेश स्वाध्याय

राग सामेरी

चेतन चेत रे चलि मां चपलाइ, सुगुरु कहै छै साचौ।
संबल काइंक लेजो साथे, काया घट छै काचौ। चेतन। १।

पूर्व पुन्यइ नर भव पायौ, उत्तम कुल पिण आयौ।
सगली बात विशेषे समझ्यौ, सुकृत संच सवायो। चे०। २।
बहे जीव वलि झूठौ बोले, राखैं पर धन राचैं।
मैथुन सेवे परिग्रह मेले, परिहरि आश्रव पांचे। चे० ३।
च्यार कषाय तिके चकचूरौ, बंधन त्रोडो बेही।
कलह कलंक न करि तु निंदा, करै अरति रति केही। चे०। ४।
परिहरि तु परही पिसुनाइ, माया मोस म धारै।
मन मांहे मिथ्यात न आणै, ए छै पाप अढारै। चे०। ५।
म रमे जूऐ आमिष मदिरा, वलि वेश्या नी वाते।
आहौडौ चोरी पर स्त्री, सबला कुविसन साते। चे०। ६।
बाइ माइ आई बाबउ, सहु संसार सगाई।
स्वारथ काज मिल्या छै सगला, साथै धरम सखाइ। चे०। ७।
सांझइ भेला आइ सराहइ, हेकण हाटइ हूया।
परभाते पौताने पंथे, जाय सहु को जूआ। चे०। ७।
जोरैं रीस रहै छे जलतौ, तल तौ छाती ताती।
जोतां जोतां में जलि जासी, वीतइ तेलइ बाती। चे०। ६।
सींग मांडइ छइ सहु सु साम्हा, ऊँचौ रहै छै ऊडो।
तूटी भोरि किहां ही पडसी, गुडथल खाती गूडी। चे०। १०।
मोसै लोक घणा करि माया, बगलौ होइ अबोलो।
दोलै ताकि रह्यौ छै दुस्मण, सीधे हाथ गिलोलौ। चे०। ११।
लोभै लागौ खाय नै खरचै, रांक मनै लछि राखी।
घाटौ मिलीयां हाथ घसेलौ, मह्रु त्रुटै जिम माखी। चे०। १२।

जतने राखीजै जीवाणी, पाणी छांणे पीजै।
सहु ठामै परिणांम दयारां, रूडी विधि राखीजै। चे०। १३।
दया धरै ते न हुवै दुखीया, विनय कियां जस वारू।
सद्गुरू सीख कहै छै सखरी, साचवणीं तुम्ह सारू। चे०। १४।
सहु संसार अथिर समझी नैं, कोई प्रमाद म करिजो।
विजयहरष सुख साता वंछो, धरम सीख चित्त धरिज्यो।चे०।१५।

:—:—:

सप्त व्यसन त्याग सझाय

ढाल-चतुर विहारी रे आतमा

सात विसन नौ संग रखे करौ,
सुणि तेहनो सु विचार। विवेकी।
सात नरक ना भाइ सातए,
आपइ दुख अपार। विवेकी सा०॥ १॥
प्रथम जूआ नै विसन पड्यां थकां,
पांडव पांच प्रसिद्ध। विवेकी।
नल राजा पिण इण विसने पड्यां,
खोइ सहु राज ऋद्धि। विवेकी सा०॥ २॥
बीजैं मास भखण अवगुण घणा,
करि पर जीव संहार। विवेकी।

महाशतकनी नारि रेंवती,
नरक गइ निरधार। विवेकी सा० ॥ ३ ॥
तीजौ मदिरापान व्यसन तजि,
चित्त धरी वलि चाहि। विवेकी सा०।
दीपायन ऋषि दूहव्यौ जादवै,
द्वारिका नो थयौ दाह। विवेकी सा० ॥ ४ ॥
चौथे विसने वैश्या नै वसै,
लोक में न रहे लाज विवेकी।
कयवन्नादिक नौ गयौ कायदौ,
कुविसन विणशै काज। विवेकी सा० ॥ ५ ॥
पाप आहेडे कुविसन पांचमै,
प्राणी हणिय प्रहार। विवेकी।
मारी मृगली श्रेणिक नृप गयौ,
पहिली नरक मंझार वि० सा० ॥ ६ ॥
छठै चौरी नै कुविसन करी,
जीव लहै दुख जोर। वि०।
मूलदेव राजाये मारीयौ,
चावौ मंडक चौर। वि०। श० ॥ ७ ॥
परत्रिय संगत कुविसन सातमै,
हाणि कुजस बहु होइ। वि०।
राणै रावण सीता अपहरी,
नास लंका नो रे जोय। वि०। सा०।८।

इम जाणी भव्य प्राणी आदरो,
सीख सुगुरू नी रे सार। वि०।
इण भव पावइ आणंद अति घणा,
कहै धर्मसी सुखकार । वि० । सा० ॥६॥

—:०:—

तम्बाकु त्याग सझाय

ढाल-आज निहेजो दीसै

तुरत चतुर नर तम्बाकू तजौ, इण में दोप अनेक।
विरती करौ पाछौ मन वालिनै, वारू धरिय विवक ।१। तुरत०
स्वाद नहीं इण मांहे सर्वथा, मांहे नहींय मिठास।
दूपण देखे तो पिण नवि तजै, पडियौ विसन नै पास ।२। तुरत०
कुटउ एह अंछौ छकायनौ, मुंस करौ मन शुद्ध।
पोतै पुण्य हुवै तो तुम पियौ, दही घृत साकर दूध ।३। तुरत०
होठ बिन्हेइ दांत काला हुवै, वलि मुखि भुंडी वास।
बलैं तम्याकू तिम छाती बलै, सोषायै तिम स्वास ।४। तुरत०
नइ एंठी मुख घालै नविगिणै, काइ जात कुजात।
पर नौ थूक तिकौ मुंह में पडै, विलन तणी ए बात ।५। तुरत०

ढाल (२) कर्म परिक्षा करण कुंवर चल्यौ। एहनी।

सूक्ष्म पांचै काय संसार में रे, ठावा सगली ठाम।
धुअैं करि नै तेह धुखाइयै रे, अधिकी हिंसा छै आंम ।६। तुरत०

वनस्पति फुलणि वरसात में, उत्पति जीव अपार।
पाणी तम्बाकू नौ जिहां पडैरे, सहुनो होइ संहार ।७। तुरत०
चिलम भरै हाथा सु चोली नै रे, अंधारा में आइ।
केइ कीड़ा माखी कंथूआ रे, मांहि घणा मसलाइ ।८। तुरत०
जांणै नहीं छै तु हिव जीवड़ा रे, प्रकट करै छै पाप।
वैर पौतानौ ए सहु वालिस्यै रे, ए दुख सहिस तु आप ।६। तु०
तोबाकू छे नामैं तेहनै रे, तंबाखू वलि तेम।
नाम तणौ पिण अरथ भलौ नहीं रे, कहौ पीवे गुण केम ।१०। तु०
वजर पीयै ते बजर हीयौ हुवै रे, बज्र करमी कहिवाय।
बज्रलेप लेपायै ते वली रे, नाम दियौ वज्र न्याय ।११। तु०
पर नै आदर करि नै पावतां रे, पापै भरियै रे पिंड।
आरंभ ते पिण लागै आपनै रे, पछइ अनरथ दंड ।१२। तु०
पुन्य संयोगे नर भव पांमियौ रे, श्रावक नौ कुलसार।
विसन तम्बाकू नो तुम्है वारज्यौ रे, इण में पाप अपार ।१३।तु०
एसांभलि नै कांइक ओसरै रे, जेह हुवै भव्य जीव।
धर्मनी सीख धरौ कहै धर्मसी रे, ज्यु सुख लहौ रे सदीव ।१४।तु०

—:०:&:०:—

रात्रिभोजन सझाय

ढाल-केसरीयों हाली हल खड़े हो

कर जौडि कामण कहे हो, कंत भणो सुखकार।
भोजन रात्रि नहीं भलौ, इण मांहे हो इण में दोष अपार।
पिउ रात्रिभोजन परिहरौ हो,
सहु मांहे हो सहु में ए धर्म सार।पि०।
वलि मन सुं हो मन सुं जोइ विचार। पिउ॥ १।

आहार मांहे आवतां हो, जीव इता दिन ज्यांन।
कीड़ी तो निरबुद्धि करें,
वलि माखी हो माखी वमन विधान। पि० ॥२।

कोढ करें कुलियातड़ो हो, जुंअ जलोदर जेह।
काटौ फांटौ काकरौ, तिम वींधे वींधे हो तालुओ तेह।पि०॥३।
आवी वाल गलैं अडे हो, साद रहे ग्रहैं सोष।
जोवौ थे निस जीमतां, ए तो दीसे हो दीसे
परतिख दोष । पि० ॥ ४।

पंच महाव्रत पालतो हो, ए छट्ठो व्रत अंन।
पालें जेह भली परें, जगि जांणो हो जांणो ते शुद्ध जैन।पि०॥५।
शिव पिण ते चौमास में हो, जीमें नहीं निशि जांण।
इण व्रत लाभ घणो अछें, इम अधिकें हो अधिको हिज
फल आण। पि० ॥ ६।

सांभलियै शिव शासनै हो, सहु मान्या नहीं सुंस।
वनमाला लखमण भणी,
इण सुंसै हो दीध विदा भली हूंस। पि०। ७।
सूरज आथमियै ही हो, अभख समौ अनपांन।
व्रत पालै मन वालि नै सुख पामै मोक्ष प्रधान। पि०। ८।
हितकारी सहु में हुवे हो, एह भलौ उपदेस।
श्रीधर्मसी कहै सांभलौ,
ग्रहि लेज्यो हो लेज्यो ज्युं गुरू सेस।पि०। ९।

:—:—:

औपदेशिक पद

(१)

राग—भैरवी

ज्ञान गुण चाहै तो सेवा कर गुर की,
· घृत नाली जैसी जाकी गाली घुरकी।
· कोउ पढौ हिन्दुगी को कोऊपढौ तुरकी,
इक गुरू संगकुलफ खुलै उर की। १। ज्ञा०।
जानतौ न अच्छर सो जानै वानी सुर की,
प्रगट वचनसिद्धि सिद्धि शिवपुर की। २। ज्ञा०

दिन सुध भजि तजि सुर का दुर की।
धर हित धारि धरमसीख धुर की। ३। ज्ञा०।

(२)

राग—वेलाउल

सुग ग्यानी संभाल तु अव अप्पा अप्पणा,
निसनेही सु नेह सो विनु त्रेहैं वपणा।
स्वारथ को संसार है सुख जैसा सपना,
च्यार घड़ी की चटक है ज्यु तिलका तपना। २। सु०।
धीरज आऊ छिन छिनै ज्यु करवत कपना;
धरि सुबुद्धि श्रीधरमसी थिर शिव पद थपना।३। सु०।

(३)

राग—वलाउल

गुणग्राहक सो अधिको ज्ञानी, अवगुण ग्रहिवो सोइ अग्यानी;
अवगुण गुण रहइ एकहि आश्रय,
पिण विष तजि करि अमृपान। १। गु०।
परनिंदा करिकै तु प्राणी, मल सु सुख क्यों करे मलान;
अपनी करणी पार उतरणी,
तु क्यु फोगट करैय तोफान। २। गु०।
दूर सु डूंगर बलती देखै, पग तल जलती क्यु न पिछान;
धर्मसीख जौ इतनी धारै, तौ हुइ तेरै कोड़ि कल्याण। ३। गु०।

(४)

राग वेलाउल, भलहीयउ

मूढ मन करत है ममता केती।
जासु तु अपणी करि जाणत, साइ चलै नहीं सेती। १। मू०।
माया करि करि मेलत माया, काणी करत कुवेती।
देखत देखत आए परदल, खाइ गए सब खेती। २। मू०।
पल पल पवन सु उलट पलटसी, रहत न थिर ज्यु रेती।
धर तु रिद्धि घरमवरधन को, या सुखकारक जेती। ३। मू०।

(५)

राग—रामकला

मेरे मन मानी साहिब सेवा।
मीठी और न कोइ मिठाइ, मीठा और न मेवा। मे०। १।
आत(म) राम कली ज्युं उलसे, देखण दिनपति देवा।
लगन हमारी यों सों लागी, रागी ज्यु गज रेवा। मे०। २।
दूर न करिहुं पल भर दिल तें, थिरयु मुंहरी थेवा।
श्रीधर्मसी कहै पारस परसैं, लोह कनक करि लेवा। मे०।३।

(६)

राग—ललित

करहुं वश सजन मन वन्द काया।
और मसकीन हो, वश की न होवत कहा,
ए महा मत गज कवज नाया। १। क०।

तुरग ज्युं चपल अति उरग ज्युं वक्रगति,
ठगत जिन जगत आया ठगाया ।
वचन बहु वंचन सत्य जहाँ रंच न,
कंचन कामिनी लोभ लाया । २ । क० ।
खह की गेह इण देह सु नेह खिण,
छिन ही बदलात ज्युं बदल छाया ।
आप प्रभात प्रभात प्रगट्यो प्रगट,
उदय धर्म-शील उपदेश आया । ३ । क० ।

(७)

राग—वसंत

वह सजन मेरे मन वसंत,
उनके गुण मुनि अंग उलसंत । व० ।
तजि क्रोध विरोध हितै त्रसंत,
पर निंदाने परहा नसंत । १ । व० ।
खलता करि कोऊ कैसे खसंत,
हठता शठता तजि कहै संत । व० ।
प्रभुता अपणी नही प्रशंसत फंतु,
आफि सीयाद मैंना फसंत ।२।व०।
शुभ ध्यान विज्ञान मांहे धसंत,
वाणी अमृत रस वरसंत । व० ।
करि विनय विवेक काया कसंत,
साचा श्रीधर्मसी उहिज संत ।३।व०।

(८)

राग—प्रभाति जाति

प्रणमीजे गुरु देव प्रभाते,
बोलें मत दिन विकथा बाते। १। प्र०।
मूके मत त्युं पंच पंच मिथ्याते,
समकित धर गुण पंच संघाते। २। प्र०।
दिल शुद्ध धरि धर्म-शील दयाते,
सहु विध थाय सदा सुख साते। ३। प्र०।

(६)

राग जैतश्री

सब में अधिकी रे याकी जैतसिरि,
काहू और न होड करि। १। स०।
आठौ अंग योग की ओटें
उद्धते मार्यो मोह अरी। स०।
अंतर बहि तपतेज आरोवे,
जोर मदन की फौज जरी। २। स०।
ज्ञानी हनी ज्ञान गुरजा सुं,
ममता पुरजा होइ परी। स०।
अनुभौ बलसुं भव दल भागे,
फाल फते करि फौज फिरी। ३। स०।
श्री धर्मसी आतम नृप दाता,
देत सदाना मुक्तिपुरी। ४। स०।

(१०)

राग—आशा

आतम तेरा अजब तमासा।
खलक सुं खेल बणावे खोटा,
खिण तोला पुनि खिण में मासा ।१।आ०।
परणी अपनी तजि प्यारी,
और सुं अधिकी आसा।
पद्मनी छोर संखनी परचैं,
एक तो दुःख अरु दूजा हासा ।२।आ०।
दीपक बुझाइ अंधेरे दोडें,
फंद विचे पग फासा। आ०।
परत्र्या धर्म-शील सुं पावे,
अविचल सुख लील विलासा ।३।आ०।

(११)

राग—आशा

कबहु में धर्म को ध्यान न कीनो।
आर्त रौद्र विचार अहोनिश,
दुर्गति घर करिवें थर दीनो। क०। १।
दीप ज्युं और न पंथ बतायो,
आप ही लागि रह्यो तमसीनौ।
मेरे तन धन कहि सुख मान्यो,
मणि परखे पिण अंतर मीनौ। क०। २।

परमारथ पथ नाहिं पिछान्यो,
स्वार्थ अपनो मानी सगीनो।
सुगरु कहे धर्मसीख न धारी,
निष्फल गयो नर जन्म नगीनो। क०। ३।

(१२)

राग—तोडी

तु करे गर्व सो सर्व व्यथारी।
स्थिर न रहे सुर-नर विद्याधर,
ता पर तेरी कौन कथारी। तु०। १।
कोरिक जोरि दाम किये इक ते,
जाकैं पास विदाम न थारी।
उठि चल्यो जब आप अचानक,
परिय रही सब धरिय पथारी। तु०। २।
संपद आपद दुंहु सोकनि के,
फिकरी होइ फंद में फथारी।
सुधर्म शील धरें सोउ सुखिया,
मुखिया राचत मुक्ति मथारी। तु०। १३।

(१३)

राग—मारू

वारू वारू हो करणी वारू हो।
पांमै सुख दुख प्राणीयो, सहु करणी सारू हो। क०। १।

एका रै धन मिलै, मोटा थल मारू हो।
एक एकही टंक नै, अन्न आणें उधारू हो। क०। २।
मोटा माणस इक मुदै, एक कांजर कारू हो।
के नीरोगी काय के, नित रीवै नारू हो। क०। ३।
दौलति लहीये दान, सील सद्‌गति सारू हो।
जागे तख की जाम की, उड जायै दारू हो। क०। ४।
भावना मन शुद्ध भावियै, सहु बात सुधारू हो।
धन धर्म-सील जिके धरै, ते भव जल तारू हौ। क०। ५।

(१४)

राग—नट्ट

नट बाजी री नट बाजी, संसार सबही नट बाजी।
अपने स्वार्थ कितने उजरत, रस लुब्धो देखन राजी। सं०। १।
छिकरी ककरी के करत रुपयै, वह कूदत काठ को बाजी।
पंख ते तुरत ही करत परेवा, सबही कहत हाजी हाजी। सं०।२।
ज्ञानी कहै क्या देखे गमारा, सबही भगल विद्या साजी।
मगन भयो धर्मसीख न मांनन,
जो मन राजी तो क्या करे काजी। सं०। ३।

(१५)

राग—केदारगउ

ठग ज्युं इहु घरियाल ठगे।
घरि घरि जातु है रहट घरी ज्युं, लेखे न कोइ लगैं।१। ठग ज्यु०।

इण खिण पिण न मिले आउखो, मोल दये मुंह मंगे।
खैरु होत है औसौं खजीनो, जीवन तौहि जगे। २। ठग०।
ठग काल सुं जोर नहीं काहुको, देत ही सबहिं दगै।
धर्मसीख कहै इक ध्यान धर्म को, भय सब दूर भगे। ३। ठग०।

(१६)

राग केदारौ

कलि में काहु को नहीं कोइ।
तामें मूरख अधिक तृसना, तजै नाही तोइ। १। कलि०।
काहू सो उपगार करिवो, सार जग में सोइ।
जीव रे तुं चेत जोलुं, दैखवै की दोइ। २। कलि०।
काल दुस्मन लग्यो केरैं, जागि के तुं जोइ।
धर्मसी इक धर्म सबकुं, हित हित को होइ। ३। कलि०।

(१७)

राग—गौडी

जीव तुं करि रे कछु शुभ करणी।
और जंजाल आल तजि जो तुं,मुक्ति गौरी चाहे परणी। १। जी०।
मात तात सुत भ्रात सकल तजि, तज दूरे घरणी।
जास संग पापाग्नि प्रकटत, आक अनै ज्युं अरणी। २। जी०।
जौ लुं स्वार्थ तौलुं सगपण, नहीं तर आवत लरणि।
ऐसो जाणी पाप गजभंजण, धर्म सिंह धरौ सरणी। ३। जी०।

(१८)

राग—गौडी

कछु कही जात नहीं गति मन की।
पल पल होत नई नइ परणति, घटना संध्या घनकी। क०। १।
अगम अथग मग तुं अवगाहत, पवन के धज प्रवहण की।
विधि विधि बंध कितेही बांधत, ज्युं खलता खल जनकी।क०।२।
कबहु विकसत फुनि कमलावत, उपमा है उपवन की।
कहै धर्मसीह इन्है वश कीन्हे, तिसना नहीं तन धन की।क०।३।

(१६)

राग—सामेरी

दुनियां मां कलयुग की गति देखो।
किह पाई काई अधिकाई, उणको करेय अदेखो। १। दु०।
अनुचित ठौरें खरच अलेखैं, लेत सुकृत में लेखो।
माननि कह्यो साच करि मान्हो, घर पित मात सुं धेखो।२।दु.।
करि बहु प्यार पढ़ाइ कियो है, सुविज्ञानी सुविसेषो।
कह धर्मसीह करे ताही सुं, पीछी फेरि परेखो। ३। दु.।

(२०)

राग—सामेरी

मन मृग तुं तन वन में मातौ।
केलि करे चरै इच्छाचारी, जाणें नही दिन जातो। मन.। १।
माया रूप महा मृग त्रिसनां, तिण में धावे तातो।
आखर पूरी होत न इच्छा, तो भी नहीं पछतातो। मन.। २।

कामणी कपट महा कुडि मंडी, खबरि करे फाल खातो।
कहे धर्मसीह उलंगीसि वाको, तेरी सफल कला तो। मन.।३।

(२१)

राग—कल्याण

हुं तेरी चेरी भई, तुं न धरे हेत रे।
एक पखी प्रीति कौसौ, आइ बण्यो बेतरे।१। हुं.।
दूर छोड जाइ कै, संदेसहु न देत रे।
लोक लाज काजहुं न, मेरी सुधि लेत रे। हुं।२।
तुं ठौर ठौर करै और सुं संकेत रे।
रंग बिना संग करै, तामें परो रेत रे। हुं.।३।
तोही सुं सचेत में तौं, तो विन अचेत रे।
मेरो धर्मसील रहै, तोही सुं समेत रे। हुं०।४।

(२२)

राग—जयवती

काया माया बादल की छाया सी कहातु है।
मेरो वैन मान यार, कहत हुं बार बार।
हित ही की बात चेत, कहा न गहात हैं। का०।१।
नीकै दिल दान देहुं, लोकनि में सोभ लेहु।
सुंब की विसात भैया, मोहे न सुहात है। का०।२।
खाना सुलतानां, राउ राना ही कहाना सब।
बातनका बात जग कोऊ न रहात है।

ऐसो कहै धर्मसिंह, धर्म की गहो लीह।
काया माया बादर की छाया सी कहात है। का० । ३ ।

(२३)

राग—सौरठा

रे सुणि प्राणिया, लही गरथ अरथ अनेक, म करे गर्व रे।
बहि जाइ, एकैंजहि प्रवाहै, सबल निबला सर्व रे । सु० । १ ।
चंद सूर ही राहु चिगल्या, प्रगट जोइ तु पर्व रे ।
नर असुर सुर सहु काल नांख्या, चवीणा ज्युं चर्व रे । सु० ।२।
मूढ़ धी पुदगल पिंड मैलें, अरथ अर्ब नै खरबरे ।
सुज्ञान स धर्मशील सुखियो, देखि आत्तम दर्व रे । सु० । ३ ।

(२४)

राग—काफी

मानोवैण मेरा, यारो मानो वयणा मेरा ।
मैंन तु मोह निद्रा मत सोवे, है तेरे दुस्मन हेरा । यारो ।।१।।
मोह वशे तु इण भव मांहे, फोगट देत है फेरा ।
यार विचार करो दिल अंतर, तु कुण कौन है तेरा । यारो।।२।।
कीजै पर उपगार कछु इक, लीजै लाह भलेरा ।
धर्म हितु इक कहैं धर्मसी और न कछु अनेरा । या० ।।३।।

(२५)

राग—धन्याश्री (कबहु मैं नीके नाथ न ध्यायो)

किण विध थिर कीजे इण मनकु ।
वचन करू वशि मौन ग्रहैते, त्योंथिर आसन तनकुं । किन ।१।।

मन उद्धत इन्द्रिय सुं मिलकै, घूरि करै तप धनकुं ।
यह चंचल शुभ क्रिया उड़ावै, ज्युं वायु मिली घन कुं ।कि०॥२॥
मन जीते विन सबही निःफल तुस बोए तजि कनकुं ।
मन थिर कुं धर्म सीख बतावइ,
सुगरु कहै शिष्यजनकुं । कि० ॥३॥

(२६)

राग—धन्याश्री (आयो २ री समरंता दादौ आयो)

कीजइ कीजै री, मन की शुद्धि इण विध कीजे ।
आलस तजि भजि समतारसकुं, विषयारस विरमीजैरी ।म०॥१॥
राग नै द्वेष दुहुं खल कैं बल, मन कसमल मल भीजे
दे उपदेश दुहुं दुस्मन को, ताथइ संग तजीजैरी । म० ॥ २ ॥
शुद्धातम कइ ध्यान समाधि हि, परम सुधारस पीजे ।
श्रीधर्मसी कहै थिर चित कारण,
कारिज अलख लखीजै री । म० ॥३॥

(२७)

धन्याश्री

धर मन धर्म को ध्यान सदाइ ।
नरम हृदय करि नरम विषय में, करम करम दुखदाइ ।ध० ॥१॥
धरम थी गरम क्रोध के घर में, पर मत परम ते लाइ ।
परमातम सुधि परमपुरष भजि, हर म तुं हरम पराइ । ध०॥२॥
चरम की दृष्टि विचर मत जीउरा, भरम रे मत भाइ ।
सरम बधारण सरम को कारण, धरमज धरमसी ध्याइ ।ध०॥३॥

धमाल (वसंत वर्णन)

ढाल-फागनी

सकल सजन सैली मिली हो, खेलण समकित ख्याल ।
ज्ञान सुगुन गावै गुनी हो, खिमारस सरस खुस्याल ।।१।।
खेलो संत हसंत वसंत में हो,
अहो मेरे सजनां राग सुं फागरमंत । खे० ।।२।।
जिनशासन वन माहे मौरी विविध क्रिया वनराय ।
कुशल कुसम विकसित भये हो, सुजस सुगंध सुहाय । खे० ।।३।।
कुहकी शुभमति कोकिला हो, सुगुरु वचन सहकार ।
भइ मालति शुभ भावना हो, मुनिवर मधुकर सार । खे० ।।४।।
प्रवचन वचन पिचरका वाहै, यार सु प्यार लगाइ ।
शुभ गुण लाल गुलाल की हो, झोरी भरी अतिहि झुकाइ ।।५।।
वर महिमा मादल बजे हो, चतुराइ मुख चंग ।
दया वाणी डफ बाजती हो शोभा तत्व ताल संग । खे० ।।६।।
राग सहित जिनराज आलापै, दौलति सुं निसदीह ।
सब दिन विजयहर्ष सुख साता, धमाल कहै धर्मसीह ।।७।।

उपदेश

अब तौ सब सौ वरसां लगि आउसु,
तामें तो आध गयौ निसि सूतां ।
द्यौस गयौ रस रामति रौंस,
खटं गृह धंध कै धुंस में खूतां ।।

केस भए सब सेत तु चेत रे,
देख दिखाउ दियो जमदूतां।
जातें सधें अपनौ कछु स्वारथ,
सो ध्रमसील धरौ रे सपूतां ॥१॥

प्रस्ताविक विविध संग्रह

सरस्वती स्तुति

अगम आगम अरथ उतारै उर सती,
बयण अमृत तिके रयण ज्युं वरसती।
हुअइ हाजर सदा हेतु आ हरसती,
सेविजै देवि जै सरसती सरसती ॥ १ ॥
विद्या दे सेवकां विनौ वाधारती,
अडवड्यां सांकडी वार आधारती।
इंद नरिंद जसु उतारे आरती
भणां तुझ नैं नमो भारती भारती॥ २ ॥
वेलि विद्या तणी वधारण वारदा,
हुआ प्रसन्न सहु पामिजे द्वारदा।
प्रसिद्ध सकल कला नीरनिधि पारदा,
शुद्ध चित्त सेव नित सारदा सारदा ॥ ३ ॥
अधिक धर ध्यान नर अगर उखेवता,
व्यास वाल्मीक कालीदास गुण वेवता।
सुबुद्धि श्री धर्मसी महाकवि सेवता,
दीयह सहु सिद्धि श्रुतदेवता देवता ॥ ४ ॥

परमेश्वर

सहि सबलां निबलां करें संभाला, वलि नहि ईस विसरण वाला।
जीव पडं मत बहु जंजाला, प्रभु साचा सहुचा प्रतिपाला ॥१॥

मेंगल लहैं मलीदा मण मण, कीडी उदर भरैं ताइ कण कण।
जितरौ वरौ जियेरें जण जण, पूरें तितो ईस आपण पण ॥२॥
चूण दियें सहु नें विधि चंगी, हसती गंज रंज हीनंगी।
अति अंदोह धरें मत अंगी, साहिब आस पूरै सरवंगी ॥ ३ ॥
ध्रविजै सदा चूरमे धिधंगर, चीटी चख इक चूण लहै चर।
धर्मसींह मन चिंत मतां धर, पूरण आस सहु परमेसर ॥ ४ ॥

सूर्य स्तुति

हुदें लोक जिण रें उदै,
मुदै सहु काम ह्वै पूजनीकां सिरे देव पूजौ।
साचरी बात सहु सांभलौ सेवकां,
देव को सूर सम नहीं दूजौ ॥ १ ॥
सहस किरणा धरैं हरैं अंधकार सही,
नमैं प्रहसमै तियां कष्ट नावै।
प्रगट परताप परता घणा पूरतौ,
अवर कुण अमर रवि गमर आवै ॥ २ ॥
पडि रहै रात रा पंखिया पंथिया,
हुवै दरसण स कौ राह हींढें।
सोभ चढ़े सुरां सुरां असुरां शिहर,
मिहर री मिहर सुर कवण मीढ़ें ॥ ३ ॥
तपे जग ऊपरा जपै सहु को तरणि,
सुभां अशुभां करम धरम साखी।
रूड़ा ग्रह हुवइ सहु रूडैं ग्रह राजवी,
रूडां रजवट प्रगट रीति राखी ॥ ४ ॥

दीपक—छप्पय

अलग टलै अंधार, सार मारग वलि सूझै।
जीव जंतु जोइ नें, सरव विवहार समूझइ॥
मन संशा सहु मिटै, वलि पुस्तक बांचीजै।
दिल सुद्ध गुरुदेव नैं, रूप दरसण राचीजै॥
वलि लाछि आइ वासौ वसइ, सुख पावै सहु सेवता।
सहु लोक मांहि दीसै सही, दीवौ परतिख देवता॥ १॥

पर उपकार—घरा कहु सांरणोर

दुनी दाम खाटै केता केइ दाटै दरब,
नाट नाटे घणा माट माटै।
बाट पाडै तिकौ काल वाटै वहै,
खट्यो सो पर कजू विरुद खाटै॥ १॥
कीयां चढ़ि चोट गढ़ कोट कबजै किया,
वहस छल वल प्रबल किया बीया।
हालिया किता ने किता वलि हालसी,
जियां गुण किया तियां धन जीया॥ २॥
हुकम सुं हल चलां उथल पथला हलां,
करौ अकलां गलां बात काइ।
चहल वहला चलें चट्टक दिन च्यार री,
भलां री भलां एक रहसी भलाइ॥ ३॥
भार कोठार भंडार लोभै भर्या,
वार सहु सारखी करै वहसी।

साच कर धार 'धर्मसी' संसार में,
रिधू जग सार उपगार रहसी ॥ ४ ॥

मेह (वर्षा)

सबल मेंगल वादल तणा सज करि,
गुहिर असमाण नीसाण गाजैं ।
जंग जोरैं करण काल रिपु जीपवा,
आज कटकी करी इंद राजैं ॥ १ ॥
तीख करवाल विकराल बीजलि तणी,
घोर माती घटा घर र वालै ।
छोडि वासां घणी सोक छांटां तणी,
चटक माहे मिल्यौ कटक चालै ।
तडा तड़ि तीव्र करि गयण तडकै तड़ित,
महाझड़ झड़ि करि झूझ मंड्यौ ।
कडा किडि कोध करि काल कटका कीयौ,
खिणकरैं बल खल सबल खंड्यौ ॥ ३ ॥
सरस वांना सगल कीध सजल थल,
प्रगट पुहवी निपट प्रेम प्रघला ।
लहकती लाछि वलि लील लोको लही,
सुध मन करैं धर्म-शील सगला ॥ ४ ॥

मेह (वर्षा) गीत

मंडि झड़ घमंड कर ईस ब्रह्मण्डरा तुझ घर मांहि किण बात त्रोटा।

सार इतरी गरज परज री अरज सुणि,
मेह करि मेह करि धणी मोटा।
खेत कुम्हाइजैं रेत उडैं खरी, हेति हिनूआं गया चेत हारे।
वैंत एहैं धरौ नितरी वीनती, ध्रवौ करतार जलधार धारै ॥२॥
घणें धन होइ धन धांन धीणा घणा,
पाल्हवै भार अड्डार प्राभा।
दरद मन रा मिटै मिटै जगरा दलिद,
जलद वरसाइ जगदीस भाभा ॥३॥
सफल करि आस अरदास धर्मदास री,
तुरत तिण दीस जगदीस तूठा।
हुआ उमाह उछाह सगला हुसी,
वाह हो वाह जलवाह बूठा ॥४॥

मेह (वर्षा) अमृतध्वनि

जल थल महियल करि जलद, सहु जग होइ सुभक्ख।
इक घण तो अण आवतैं, दिखैं खलक सु दुक्ख ॥ १ ॥
दिखै खलक सु दुख खिजि खिजि,
सुख खिण नहीं दुख खिण खिण भुख।
खल हल करब खड्डिय, चख खड विण पख खय पशु।
कु ख खु ह वसि तुख खुटि खुटि, लुख खजि कजि।
लख खिजमति अखै खलक अरज्ज ॥१॥ जल थल महियल०

दोहा

जग सगलैं जगदीसरी, पूरण कृपा प्रसिद्ध।
घण वरष्यां हरख्या घणं, सिद्ध धरि सहु रिद्ध ॥ १ ॥

चालि

सिद्ध ध्दरि सहु सिद्धि, धन धन किद्ध, द्धरणिय वृद्धि द्धन्नह।
खुद्ध द्धम, गय लद्ध धीरज, द्धद्धु वि पुणि दद्धि द्धिप्पिय।
रिद्धि द्धण भर बद्ध द्धामह दिद्ध द्धन रिण,
बुद्धि धर्मसी शुद्ध द्धरि हित सज्ज ॥ २ ॥ जग सगलैं जग०

—:०—:

सीत उष्ण वर्षा काल वर्णन

ठंड सबली पडें हाथ पग ठाठरें,
वायरौ उपरां सबल बाजै।
माल साहिब तिकै मौज मांणे मही,
भूखियइ लोक रा हाड भाजै॥ १ ॥
किड किडै दांत री पांत सीसी करै,
धूम मुख ऊखमा तणा धखिया।
दुरब सु गरब सौ जांणि गुजें दरक,
दरब हीणा सबै लौक दुखिया ॥ २ ॥
सौडि विचि सूइजे तापिजें सिगडिए,
सबल सी मांहि पिण सद्रब सोरा।
एतिण वार में पांण ती ओजगी,
दोजगी भरै निसदिस दोरा ॥ ३ ॥
झाड उन्हाल री झाड ह्वै झाखरा,
जल तजे पालि पाताल जावैं।
साधन बैठा पियै मालिए सरबतां,
निधन नइ पिण नीर हाथ नावैं॥ ४ ॥

किसौ सीतकाल उन्हाल सखरौ कहां,
हुदो सुख दुख तणो देव हाथै।
आवियै जेण संसार रो हूं उदौ,
मुदौ सव बात रो मेह माथै ॥ ५ ॥
घुरा जलधर ध्रवें धान धोणें धरा,
सरस माने सरह सको सरिखा।
फसल फल फूल री हूंस सगले फलै,
वडी ऋतु सहु रित मांहि वरिषा ॥ ६ ॥

दुःकाल वर्णन

मन मैं धरता मरट घरट जिम भूखें घूमै,
मेले घर गया मऊ भटकि मूआ पर भूमैं।
बेटा नै मा बाप वेचि द्यै जीमण वेइ,
रुलतां रिगता रांक करैं वेललाटा केइ ॥ १ ॥
कोइ काल महा दुस्मण कह्यां, आखा देस उजाड़ीया।
ए दैव वरस इकावनें, पडतें बहु नर पाडिया ॥ १ ॥
पण धरि घण पोखता निहोरे कण पिण नापैं,
कवल एक कारणैं वहस हुवै बेटा वापैं।
हीओ माइ हारि नैं छोरूआं ऊभा छोड़ें,
ऊचैं कुला आदमी आइ नीचा कर जोडैं।
गति मत्ति उगति भूलै गइ, गिणै न को आफौ गिनो,
कोई आप पाप प्रगट्यो प्रबल एवो वरस इकावनो ॥२॥
दुनियां दीधौ दुख वरस इण इकावनैं,
पहुती जाय पुकार इन्द्र सांभलि विण अन्ने।

आप कहायौ इन्द धीरज मन मांहे धरिजो,
बहु वरषा बावनो करिस सखरौ धर्म करिज्यो।
धन धान घमंड धीणा घणा, परजा बहु सुख पावसी।
सहु थोक भला होसी सरस, उमगि बावनौ आवसी ॥ ३ ॥
इकावन्ने आइ दुनी दुरभख डुलाइ,
काढ्यौ सौ कूटि नैं भीर बावनैं भाइ।
बावनां वाहिरौ त्रिपट पड़ीयौ तेपन्नो,
दातारे तजि ददौ, निपट करि झाल्यो नन्ना।
काढ़िस्यौं सोइ जिम तिम करै, मत चिंता आणइ मनइ
सत झालि काल्हि सखरइ सुभिख, चहुचंद होसी चोपनैं ॥४॥

कुस्त्री-सुस्त्री वर्णन

सुकलीणी सुन्दरी मीठ बोली मतिवंती,
चित चोखे अति चतुर जीह जीकार जपंती।
दातारणि दीपती पुन्य करती परकासू,
हस्तमुखी चित्त हरणी, सेवि संतोषे सासू ॥१॥
सुकलीण शील राखै सुजस, गहै लाज निज गेहनी।
धरमसी जेण कीधो धरम, तिण गुणवंत पामी गेहिनी ॥ २ ॥
गुण हीणी गोमरी वडक बोली बहु रंगी,
चंचल गति चोरती अधिक कुलटा ऊधंगी।
सत विहुणी सुंबनी दूत जिती दुरभासू,
करणी घर में कलह, सूकती जायँ सासू।
नाहरी नारी गूंजें निपट, धूजे नित घर रो धणी।
धरमसी जेण न कियौ धरम, पासी इण परि पापणी ॥२॥

पुण्य पाप फल कथन

गीत सपखरौ ।

सझै साली चित्रसाली ढाली पौढै के सुहाली सेज,
खंटाली कूटी में एक उखराली खाट ।
दिखाली बिना ही भाली सुखाली दुखाली दसा,
नेह पाप पुण्य वाली विचाली निराट ॥१॥
सोना थाली माहे के आरोगै साली दाली,
मुखी बीया के हथाली, जिमैं पीयै बूक ।
एकां लील लाली लाली पाली, धंधाली जंजाली एक,
सढ़ाली अढालीवार कमाइ सलूक ॥२॥
एकां ऊन वाली छाली दूझाली न दीखैं एकां,
थूंभाली क्रमाली हेकां दूझैं काली थाट ।
सदारा सुगाली एक दुकाली किताक दीसै,
बंमाली कमाइ चाली वाली जायँ बाट ॥३॥
सम्भाली ल्यैं वडां मोह, सुचाली कलत्त सुत्त,
क्या करै कंकाली नाली अनाली कपूत ।
वांणी के रसाली वदैं विरसाली एकां बात,
कली कालि उजवालि आपरी करतूत ॥४॥
दाढ़ाली बाढ़ाली बंधै गंढ़ाली करतां दौड़,
मानै नहीं मच्छराली, मझाली मरम्म ।
उदाली उलाली जगि, ताली दियैं जायँ आउ,
धारौ हितवाली बात, संभाली धरम्म ॥५॥

—:०:—

प्रभात आसीस—छप्पय।

आलस ऊंघ अज्ञान, तमस तस्कर पिण त्रसीया ।
श्रावक साधु सुपात्र, वले धर्म करणी वसीया ॥
पडिकमणा पचखांण, गुणे गुरूदेवां गावै ।
सुणीजै झालर संख, सुकवि आसीस सुणावै ॥
भलैं भाव कमल विकसै भविक, महिमा जिन धर्म री सुदै ।
सु प्रताप सयल मंगल सदा, अरक ज्योति धर्मसी उदै ॥१॥

जब ऊगे जग चक्ख तिमिर जिण वेला त्रासै ।
प्रगट हसै जब पद्म, इला जब होइ उजासैं ॥
चिडीयां जब चहचहै, वहै मारग जिण वेला ।
धरम सील सहु धरै, मिलै जब चकवी मेला ॥
घुम घुमै माट गोरस घणा, पूरण वंछित पाईयै ।
जिनदत्तसूरि जिनकुशल रा, गुण उण वेला गाईयै ॥२॥

संध्या आसीस—छप्पय

संध्या वंदन साध, सज्ज सावधान स कोइ ।
विवेकी श्रावग सजै, पडिकमणा सोई ॥
चौवीहार दुविहार ग्रहै, व्रत करि निज गरहा ।
सारै दिन संचीया, पाप नासै सहु परहा ॥
धर्म ध्यान साधु श्रावक धरै, धोरी धर्मरथ ना धुरी ।
सुखकरण संघ धर्मसी सदा; सकतिरूप संध्या सुरी ॥१॥

धुरि देवल धर्मसालि, पंच सद सुणिजै प्राझा ।
झालर रा झणकार, देवगृह दीपक झाझा ॥

पशु पंथी पंखिया, आपणी ठामै आवै ।
आरंभ किया अलग्ग, सको थिर चित्त सुख पावै ॥
आकास चंद तारा उदै, दिन चिंता अलगी दुरी ।
सुखकरण संघ धर्मसी सदा, सकति रूप संध्या सुरी ॥२॥

—:ः:०:ः:—

सर्व संघ आशीर्वाद

परब अवसर सदा दरब खरचै प्रघल,
गरब न करै करइ सरब उपगार ।
धरवि जलधार जिम दान वरसै धरा,
जगतपति संघ रौ करौ जयकार ॥ १ ॥
सूध मन सेव गुरू देव री साचवै,
सखर समझ अरथ सूत्र सिद्धंत ।
दियै बहु दान मन शुद्ध पालइ दया,
भलौ नित संघ रौ करौ भगवंत ॥ २ ॥
राय - साधार बंदिछोडि मोटा विरुद,
साह पतिसाह सम मौज महिरांण ।
संघ सुप्रसन हुआं नवे निध संपजै,
करौ प्रभु संघ रौ सदा कलियाण ॥ ३ ॥
वरण अढ़ार ने जिके दिये वरा,
खरा द्रव्य खरिचै करै धर्म काज ।
कहै धर्मसीह सुकवि लोक सहि को कहै,
महाजन तणौ उदो करै महाराज ॥ ४ ॥

—ः—

ढुंढ़ियां रो कवित—छप्पय

आया नै उपदेस, प्रथम प्रतिमा मत पूजौ ।
वांदौ मत अम्ह विना, दरसणी यति को दूजो ।
दीजै नहीं वलि दान, भवे वीजे भोगवणां ।
आगम केइ उथपै, लोह सु जड़ीया लवणा ।
सीख द्यौ लाख न हुवैं समा, खोटी जड रा खुंढीया ।
पारकी निंद करता प्रगट, धरमी किहां थी ढुंढ़िया ॥ १ ॥

(२)

अधिक आदि अनादि री मातवटि उथपै,
देवपूजा तणा सुंस दीधा ।
देखि अन्याय आचार अंदेस मैं,
काल नैं चाल जगदीस कीधा ॥ १ ॥
प्यास मरतां पसू पंखिया पंथियां,
पाप ह्वै पावज्यो मतां पाणी ।
भरमिया भल भला लोक एहैं भरम,
धरम कियौ तिणैं धूल धाणी ॥ २ ॥
गिणइ नहीं शास्त्र वलि मूलगा देवगुरू,
लाज विण लोक इण कुमति लागै ।
ऊंधली रीति ऊधा तिके ऊठीया,
ऊठिसी ई ए उतपात आगैं ॥ ३ ॥
मेलि परवान मान महाराज कीधा मन्हैं,
लोपीयो हुकम करतूत लहसी ।
हुइ सहुको कहैं हाकमैं हाकमी,
रैत वर वैत दुष्ट दूर रहसी ॥ ४ ॥

—※—

मांकरा (जवा) छप्पय

आवैं केइ अथग्गरा, हलवें हलवे हेर ।
मांकण मांडें मामला, मेवासें रा मेर ।
मेंवासें रा मेर, झरे कोचर में, झाझा ।
रतिवाहा द्यै राज, प्राछ करि जायइ प्राझा ।
छलबल करि छेतरैं, चूसैं लोही चटकावैं ।
चावा चिहुं दिसि चोर, नींद कहो किहांथी आवै ॥१॥आवैं०

सवैयो

खाट में पाट में हाट में त्राट में आसन वासन थिर थानें ।
आवत जावत भी चटकावत, नावत हाथ छिपैं कहुं छानै ।
रैंन में नैंन में नींद परै नहीं, द्यौंस ही रूंस भरैं दुख दानें।
गउ न रांक न को गिनैं हांकन, मांकग काहु की सांक न मानै ।

—०—

धरती री धणियाप किसी

भोगवि किते भू किता भोगवसी, मांहरी मांहरी करइ मरैं ।
एंठी तजि पातलां उपरि, कुंवर मिलि मिलि कलह करैं ॥१॥
धपटी धरणी केतेइ धुंसी, धरि अपणाइत केइ ध्रूवै ।
धोवा तणी शिला परि धोबी, हुं पति हुं पति करै हुवै ॥२॥
इण इल किया किता पति आगैं, परतिख किता किता परपूठ ।
वसूधा प्रगट दोसती वेश्या, झूझै भूप भुजंग सु झूठ ॥३॥
पातल सिला, वेश्या, पृथ्वी, इण च्यारां री रीति इसी ।
ममता करै मरै सो मूरख, कहै धर्मसी धणियाप किसी ॥४॥

—:※:—

छप्पय

रावण करतां राज, लीक लंका तै लागी ।
जीवतें किसन जी, द्वारिका नगरी दागी ॥
चावा रवि चंद नइ, राहु आवी नै रोके ।
पांडव कौरव प्रसिद्ध, सहु पडिया दुख शोकै ॥
सकजो न कोइ मो सारिखौ, बहु मुरख गर्वे बके।
धर्मसीख धारि धोखो म धर, जीती कुण जाइ सकै ॥१॥

छप्पय

गुर थी लहियै ज्ञान, शास्त्र सहु तत्त सिखावइ ।
वलि सगली ही वस्तु दोप निरदोष दिखावैं ।
चूल्हा रौ जे चंद कर, तिण काज कला धर ।
गुरू सेवा कर गिण्यां, नहीं उसरावण को नर ।
वलि अलग टालि छठ्ठउ वर्ग, अधर होठ अलगा रहै ।
त्युं रहै अलग निंदा तठै, कवित सीख साची कहै ॥ २ ॥

"शोभनीय वस्तु"—छप्पय

नरपति शोभा नीति, विनय गुणिजन त्रिय लज्जा ।
दंपति दिल संतोष, शोभ गृह पुत्र सकज्जा ।
वचने शोभा साच, बुद्धि शोभा कविताइ ।
वपु शोभा विज्ञान, शान्ति द्विज शोभ बताइ ।
सकज की शोभ अधिकी क्षमा, शोभ मित्र राखैं शरम ।
गृहवास शोभ संपति सुधन,
सबहि शोभ निज निज धरम ॥ २ ॥

राजनीति—छप्पय कवित्त

सकले गुणे सकज्ज, पांच दस परिखा पुहतौ ।
आण्यौ म्हे इतबार, मन शुद्ध थाप्यौ मुहतौ ।
सहु आगै कहै सांन, वांन इम अधिक वधारे ।
तिणरौ वाधैं तोल, सही सहु काम सुधारे ।
प्रभु काज साधि पोतैं पछै, काज प्रजा रा पिण करै ।
परसिद्ध भली परधानरी, राज काज सगला सरैं ॥ १ ॥
पुखतौ गुणे प्रधान, कदे नहीं मन में कावल ।
पिण काइ पर कृति, साम नहीं मन में सावल ।
कहै म्हेइज सहु करां, मंत्रि रो कह्यौ न मानां ।
म्हां थी बीजी ठाम, छेतरावौ मत छांना ।
सहु नैं इकांत इम सीखवैं, अदेखाइ आणै इसी ।
अधिकार तणो जिहा नहीं अमल,
कह्यौ तिणमें बरकत किसी ॥ १ ॥

—:※:—

वरसी दान

त्रणसे कोडि अठ्यासी कोडि,
असी लाख उपर वलि जोडि ।
इतरा सौनइया नौ मांन. दे सहु अरिहंत वरसीदान ॥ १ ॥

छप्पय छतीस विधान रो

गुरु गुरु[१] दिनमणि[२] हंस,[३] मेघ[४] मंदर[५] मुगता गण[६] ।
मति[१] दुति[२] गति[३] अति सोह, वाणि[४] मणि[५] गुण[६] जाके तण ॥

सुरेग[1] पुव्व[2] सर राज[3], गयण[4] धर[5] धुरि वारिध[6] थिति ।
वासव[1] ग्रह[2] अति चतुर,[3] जगत[4] सुर[5] पारिख[6] सेवित ॥
उग्रह[1] प्रभात[2] पंकति[3] सहित, गरजित[4] निरमल[5] प्रथित[6] गुण ।
वहु[1] ज्ञान तेज[2] केली[3] वरिस,[4] धीर[5] पवित्र[6] ध्रमसीह भण ॥१॥

एक्कक्खर उत्तरा

वंदे नहीं क्युं देव गुरु, विकै न वस्तु विवेक ।
छोडैं अैठों अन्न क्युं, उत्तर त्रिहुं रो एक ॥१॥ भाव नहीं ।
दूधै केम स्वाद नहीं, दीधै किम फिर दिद्ध ।
दाडिम कण ज्यों पोस्तकण, जुदा नहीं किण विद्ध ॥२॥थर नहीं
हाथी जनमि किसौं न हुै, वैद दियै किम पत्थ ।
नर आदर किम नां लहै, उत्तर त्रिहुं इक अत्थ ॥३॥ जर नहीं
देशै नीपति क्युं नहीं, क्युं न घडै लोहार ।
किम वसतां मुहँगी विकै, उत्तर एक प्रकार ॥४॥ घण नहीं

हीयालिये

(१)

कुण नारी रे कुण नारी रे, पंडित कहौ अरथ विचारी रे ।
चतुराइ बुद्धि तुम्हारी रे, सहु कोइ वखाणै सारी रे ।कुण०॥१॥
मन मोहन सुन्दरि माती रे, रहै पंच भरतारे राती रे ।
सखरी पहिरै ते साड़ी रे, तौ पिण सहु अंगै उघाड़ी रे ।कु०॥२॥
आइ वैसे मुजरैं ऊंची रे, तिण घरि नहीं ताला कुंची रे ।
दिन उगै घाहडी उठी रे, पल मैं जइ बैसे पूठी रे ॥कुण० ॥३॥

बूढी पिण वाली भोली रे, तनु केसर चंदन खोली रे।
कहै धर्मसी एह हियाली रे, मति करज्यो बात विचाली रे।
॥कु० ॥४॥
(थापना)

(२)

ढाल—गाठलदे सेत्रुंजे हालो

कहौ पंडित ए हीयाली, मत करिज्यो बात बिचाली रे।कहो०।१
निरखी नैं सुन्दर नारी, धरमी आदर करि धारी रे।कहो०।२।
नव नव विधि कूदैं नाचैं, पिण सहु वखाणैं साचैं रे।कहो०।३।
करैं घुंघट पिण तिण च्यारैं,
सकुचैं पिण नहीं किणहीक वारैं रे। कहो।।४।।
फिरती रहै सहु अंग माथैं, हिरदै ने बैसे हाथै रे।कहो० ॥५॥
बोलतां आड़ी आवै, पिण तेहनो भेद न पावै रे।कहो० ॥६॥
निंदै ते भारी करमी, धर्मसी कहै धरस्यै धरमी रे।कहो०।७।
(मुहपत्ती)

(३)

ढाल-चतुर बिहारी रे आतम एहनी।

अरथ कहौ तुम वहिलौ एहनौ, सखर हीयाली रे सार।
चतुर नर एक पुरुष जग मांहे परगड़ो, सहु जाणै संसार चतु०।१
पग विहुणो पिण परदेसे भमै, आवै तुरतउ जाय।
बैठो रहै अपणे घरि बापड़ो, तौ पिण चपल कहाय। च०अ०।।२
कोइक तो तेहनै राजा कहै, कोई तो कहै रंक।च०

साचौ सरल सुजाण कहै सहु, बलि तिण गाहे रे बंक ।च०अ०३।
पोते स्वारथ सुं पाचां मिलै, आप मुरादौ रे एह । च०
धन तिकै नर कहै श्री धर्मसी, जीपै तेहने रे जेह ।च० अरथ ।४।

(मन)

(४)

ढ़ाल—नायक मोह नचावियो

चतुर कहौ तुम्है चुंप सु, अरथ हीयाली ऐहो रे ।
नारी एक प्रसिद्ध छै, सगला पास सनेहो रे । चतुर ॥ १ ॥
ओलै बैठी एकली, करै सगलाई कामो रे ।
राती रस भीनी रहै, छोडै नहीं निज ठामौ रे । चतुर ॥ २ ॥
चाकर चौकीदार ज्युं, बहुला राखै पासो रे ।
काम करावै ते कन्हा, विलसै आप विलासो रे । चतुर ॥ ३ ॥
जोड़े प्रीति जणे जणे, त्रोडे पिण तिण बारो रे ।
करिज्यो वस धर्मसी कहै, सुख वांछौ जो सारो रे । चतुर ॥४॥

(--जीभ)

—:०—:

आदे अक्षर, मझखरौ, अंतखरौ नै वलौ
मझखरौ सर्व एक कवित माहें सांगठा ही ज आणया छै ।

कवित

रक्षक बहु हित साधु, राति सूरज दिन नक्खत ।
सहु भोजन कटु जीह, नहींय सुचि पीड़ा दुक्खित ॥
वृद्ध अछेह धन वयण पहिल हिव सुसतैं तूनै ।
रिसि छोरू पति तेज, याम रिधि दुखित धुनैं ॥

लखमी सुबुद्धि तारण सरब रयण पुन्य निरजर सुघर ।
धुरि मझ अंत मझ अक्खरैं, पारसनाथ प्रतापकर ॥१॥

पा ल क	अ पा र	कि र पा	सु पा त्र
र ज नी	अ र क	वा स र	ता र क
स र व	अ स न	वि र स	र स ना
ना का र	स ना न	वे द ना	अ ना थ
थ वि र	अ थ ग	ग र थ	क थ न
प्र थ म	सा प्र त	अ क्षि प्र	तो प्र तै
ता प स	सं ता न	भ र ता	प्र ता प
प हु र	सं प ति	सं ता प	कं प न
क म ला	अ क ल	ता र क	स क ल
र त न	ध र म	अ म र	ध र णी

च्यार वार अक्षर दसे, एक कवित्त मैं आँणि ।
कवि माहे धर्मसी कहैं, तौ कहुं तौकुं जांण ॥१॥

—:०:—

सवैया—सर्वगुरू अक्षर देवाधिदेवस्तुतिः

सांई तेरी सेवा सखी, दूजी काया मायकखी,
साता दाता माता भ्राता, तूं ही दूजा दंभा है।
मोटां ही तै तुं ही मोटा, मैं तो छोटां ही में छोटा,
तेरी ओटा धोटा ज्युं मै लेख्यां ही का लंभा है।
तेरैं पासा खासा दासा, पासा वांसाहि का प्यासा,
मेरी आसा वेलि फैली तुं ही इछ्या अंभा है।
दूजा को हैं तेरैं दावें, ज्ञानी लोका तोकुं गावैं,
रातै प्रातैं धर्म ध्यावै तेरा ही ओठंभा है॥ १॥

—:o:—

सवैया—तेवीसा

गंग तरंग के संग उरंग सु, मंतु विना बहु जंतु मारै।
ताहि समै विनता सुत ताहि जु, जाति विरोध संभारि संहारैं।
सौ मरि कै अहि होइ चतुर्भुज, ताहू कैं ही सिर आसन धारै।
अहो अहो यों सुखी सरिता सु तो, पानी के संग ही पार उतारैं।१।

—:o:—

यति वर्णन—सवैया

केइ तौ समस्त वस्तु चातुरी विचार सार,
वैंन भी दुरस्त वदे अैंन सरस्वती हैं।
केइ तौ प्रशस्त काव्य भाषा गुण चुस्त करैं,
और कवि अस्त होत एतौ दिव्य दुती हैं।

केइ राग रंग मांझि रस्त गुस्त होत जात,
केइ तर्क विद्या में विहस्त शुद्ध मती है।
हस्त सिद्धि धर्मसींह वादि हस्ति गस्त होहि,
जैन में जबरदस्त ऐसे मस्त जती हैं ॥१॥

—:०:—

समस्या—मान कर्यो के पतिव्रत पार्यो

ठौर संकेत की आगैं ते आइ कैं, नायक सेज को साज सुधार्यो।
आइ तिया तब आई गइ रितु, ह्वै कं उदास विलास विसार्यो।
बैठि सकोचि सलज्ज न बोलत, नायक केतौ निहार कै हार्यो।
साच कहौ अब क्यों न मिलौं तुम,
मान कर्यो कै पतिव्रत पार्यो ॥ १ ॥

:—ॐ—:

भोजन विच्छती—सवैया इकतीसा

आछी फूल खंड के, अखंड से जौ लड्डू होइ।
ताकै संग ताजे ताजे खाजै फुनि खाईयै॥
पैडनि सु प्रीति पूरी, लापसी तौ थोरी थोरी।
सीरैं के स्वाद काज बूढा कुं बुलाईयै॥
हेसमी की भइ हुंस, साबूनी कौ नहीं सूंस।
घी के भरे घेवर जलेबी युं अघाइयै॥
फूल हुं ते भीणी फीणी, सब ही में खांड चीणी।
धर्मसी कहत कीनी पुण्य जोग पाईयै॥१॥
चोखे नान्है कैर चूणैं, चोखे छमकारे चणें।

आछे से अथाने घने और भी कुं बोल है ।
चीरडी पटीरडी सीरावडी वड़ी पुड़ी ।
हरद सौं जरद आछे भुजिया कौ झोल है ।।
सांगरी निरोग फोग राइ खेलरा के जोग ।
भाजी भली भांति की में, नीबू को निचोल है ।।
एकली मिठ्ठाइ तो धिठाइ कहै धर्मसीह ।
सालणां के साथ सु बोलावै कैसी बोल है ।।२।।

सवैया तेवीसा

दाख बदाम अखोडै सिंघोडे, गिंदोडै सौं जोडै सबे ही सुहावै ।
खारक खोपरे याही के भेट, छुहारी गिरी है पै न्यारी कहावै ।।
पूछहुधौं गुजरातिय लोक, निबात भिलैं निमजे भले भावै ।।
मेवे इते नितमेव लहै, सु कहै धर्मसीह भैया पुण्य प्रभावै ।।३।।
चटपट में पकवान चलावत, खावत है खीर खांड भी खातै ।
तो से चाउल दाल तजै नहीं, पालि करै फुनि घीउ की घांतै ।।
सुधारी धुंगारी पीयैं फुनि छाछहि, पाछै कै जाइ चळू किये पांतै ।
बचै सु लुकाइ कै दैण की देरहि, ताली युं देत दिखावत दांतै ।।४।।

—:०:—

अध्यातममतीया रो :—सवैया इकतीसा

आगम अनादि के उथापी डारे आपै रुढ़ि,
अबके बणाए बाल-बोध मानै संमती ।
जोगी जिंदे भक्तनि पैं, दूरहुं ते दोरे जात,
देखे न सुहात ताहि एक जैन के यती ।

ऐसो जहँ क्रोध मान, कूर कीए क्रिया दान,
ऐसे पछिपाती गुण काहू कौ न ल्यैं रती।
बावन ही अच्छरकुं, पूरे से पिछानैं माहि,
कैसैं कै पिछानैं कहां आतमा अध्यामती ॥ १ ॥

शरीर अस्थिरता—सवैया इकतीसा

ज्ञान के अभ्यासा मिसि, आवत उसासा सासा,
छिन न विसासा तहां कहां दिन मासा है।
पर्यौ प्रेम पासा, तामैं मानत विलासा खासा,
देखें जो विमासा घरि हानि लोक हासा है।
आसा तो अकासा जेती, खेलत दुवासा सेती,
केती है उजासा घन बीजुरी का वासा है।
अंतर प्रकासा कर धर्मसी सुवासा धर,
पानी मैं पतासा जैसा तन का तमासा है॥ १ ॥

रूपैया—सवैया तेवीसा

आपणी देह सुं नेह नहीं पुनि, जानत खेह के गेह छिपैया।
मोह नहीं मन में धन में, वन में तन में तप ताप तपैया॥
लोक बडे बडे पाय लगे, जु सबै गुण सोभत लोभ लुपैया।
वांटन कौ नउ उभ्माटन को डर, सौइ बड़ौ जाकैं भ्मांठ रूपैया।१।
कोइ तो पाइ छिपाइवा धन, धारे नहीं धर्मसीख कहैया।
सुंब कहाइ खवाइ न खाइ, भखाइ लगाइ लराबत भैया॥
कौन कहै तिनकुं जु बडौ है, मडौ सब ही सुं करै हैं लडैया।
वांट वंटाइ उडाइयै फांट तें, सोइ बडौ जाकै भ्मांठ रूपैया।२।

—०—

२४ शोभा—सवैया इकतीसा

नृपति[1] की शोभा नीति, गुनिन[2] की विनैं रीति,
दंपति[3] के प्रीति जो निबाहे धुरि छेह की।
ललना[4] की शोभा लाज, वचन[5] की शोभा साच,
बुद्धि[6] शोभा कविताइ, पुत्र[7] शोभा नेह की।
गृह[8] की हैं शोभा वित्त, मित्र[9] की चितारैं चित्त,
सकज[10] की क्षमा त्युं, कला[11] विचित्र देह की।
द्विजन[12] की शोभा शांति, रतन[13] की शोभा कांति,
साधुन[14] की शोभा धर्म, शील कैं सनेह की॥ १॥

वस्त्र शोभा—सवैया इकतीसा

दूर तै पोसाकदार, देखियत सिरदार,
देखिकै कुचील चीर ह्वै हैं कोऊ वपरा॥
सुन्दर सुवेश जांणै, ता को सहु वैंन मानें,
बोलै जो दरिद्री तो लवार कहैं लपरा॥ १॥
पीतांबर देख के, समुद्र आप दिनी सुता,
दीनौ विष रूद्र कुं विलोकी हाथ खपरा
धर्मसी कहै रे मीत, ऐसी हैं संसार रीति,
एक नूर आदमी हजार नूर कपरा॥ २॥

आशिकबाजी—सवैया इकतीसा

देखिवेकुं दौरि दौर, ठाढौ रहै ठौर ठौर,
बाध्यो प्रीति रीति डौर किधौं नाथ्यौ बर्द है।

आस पास वास चहैं, भूख दुख प्यास सहैं,
दास सौं उदास कूक[१] लासकी सी नई है॥ १॥
नैंन बान लगै मई, हुई सौ जरद भयौ,
मोह मद छकि किधुं सीतांग की सई है।
हैं कोइ न कौ हकीम, धारैं धर्मसीम नीम,
आमिकी कें दई आगै और दई गई है॥ २॥

—:०:—

छः जनों को दुख न देना

सवैया इकतीसा

ऐसी नर देह दाता, पूजनीक पिता माता,
इनकुं असाता दे असाता बीज वावैगो।
देत गुरुदेव ज्ञान. या कुं मन शुद्ध मान,
इनकें बुरें यं कां न निगुरौ कहावेगो॥
साचा सगा वाल्हा सैन इणो सेती दगा दैन,
वात बुरी करें सो कुपात खाक खावैंगो।
आपकुं जो चाहै सुख, मांनौ धर्मसीख मुख,
छ जना कुं दुख दे सौ विशेष दुख पावैगौ॥१॥

—:०:—

१ कि र का टीया री रामति

आणंदरामजी नाजर की दी हुई समस्याओं की पूर्ति

समस्या—भावी न टरे रे भैया भावे कछु कर रे

सवैया इकतीसा

अटक कटक विचि झटक निझाट मांझि,
एक टूक होत जात एक कुं न डर रे।
आधन मैं मुंग ऊरे करडू रहैं हैं कोरे
कीनो है, जतन किनि देखि भावी भर रे।
करै एक करतार कहन कौ विवहार,
होत सब भावी लार, धर्मसीख धर रे।
भावी को करणहार सो भी भम्यो दश वार,
भावी न टरत भैया भावै कछु कर रे॥ १॥
श्रवण भरैं तो नीर, मार्यो दशरथ तीर,
ऐसी होनहार कौण मेटि सकैं पर रे।
पांडव गये राज हार, कौरव भयौ संहार,
द्रौपदी कुदृष्टि मार्यो कीचक किचर रे।
केती धर्मसीख दइ, सीत विष वेलि वइ,
रावन न मानि लइ जावन कुं घर रे।
भावी कौ करनहार, सो भी भम्यौं दश वार,
भावी न टरत भैया, भावै कछु कर रे॥ २॥
मच्छ कच्छ होइ पीवैं, वनकौ वराह भयौ,
नरसिंह एक पिंड दोइ रुप डर रे।
वामन परशुराम राम कृष्ण बौद्ध रूप,
केते ही चरित्र कीने एते रूप धर रे।

दसमौ कलंकी नाम, है हैं कहूं ही न ठाम,
अजहुं अधुरौ काम देखि भावी पर रे।
भावी कौ करणहार, सो भी भम्यौ दस वार,
भावी न टरत भैया भावै कछु कर रे ॥ ३ ॥

यंत्र मंत्र तंत्र जाल, झंपि धुं हुताश झाल,
पैंठ धौ पताल वीचि, बैठ भावै घर रे।
देसते विदेश जाहु, देखि मेख मीन राहु,
भटकी सबेर सांझि, सिंधु मांझ तर रे।
जैसे ही संयोग योग, भोग रोग सोग भावी,
धर्मसी सुबुद्धि धार, भावी लार नर रे।
भावी कौ करणहार, सो भी भम्यौ दश वार,
भावी न टरत भैया, भावै कछु कररे ॥४॥

फांसी तैं निकास ग्रीव, देत फाल पर्यो जाल,
जाल कौ जंजाल तोरि, पड्यौ आगि झर रे।
जीवन जरी के जोर, जर्यो नांहि मर्यो रान,
वागुरीनि डार्यो वान टार्यो सोऊ सर रे।
कहै धर्मसीह मृग, केते ही मिटाइ कष्ट,
भावी आगे पर्यो कूप मांझि रह्यो मर रे।
भावी कौ करणहार, सो भी भम्यो दस वार,
भावी न टरत भैया, भावै कछु कर रे ॥५॥

—:॰:—

समस्या

सवैया इकतीसा

द्वार कौं न गहैं मौन कहै मैं हुं नीलकंठ,
कबहु मिमौर कला देखि जलधार कुं ।
सूली न चढ़ाउ ईस चोर कुं चढ़ाउ सीस,
ईस हुं चढ़ैया देहै खाट कैं अधार कुं ॥
मैं तो हु ईशान सोहै प्राची उदीची कैं बीचि,
रुद्र हुं कपाली जाहु प्रेत वन द्वार कुं ।
लीनौ महाव्रती लील धारै क्युं न धर्म शील,
गोरी ठग ठोरी करै अैसे भरतार कुं ॥ १ ॥

—❀—

सवैया इकतीसा

वाकैं तुम्ह जीवन हो, जीवन तुम्हारैं वह,
दुहुं एक जीउ देह देखवे कुं द्वै धरी ।
दैव प्रतिकूल होत, होत प्रतिकूल सब,
ऐसी अनुकूल ही सौं कैसी तुम्ह या करी ॥
आप रहै कहुं भूलि भामिनी वकत भूलि,
अजहुं न आए सो तौ मोही सुं मन धरी ।
तजि कै अमूल तूल सूलज्युं विहारी फूल,
पीपर कैं पात पर च्यारो पात पापरी ॥ १ ॥

—:o:—

समस्या—चरण देख चतुरा हसी

इक दिन ख्याल हि अटकि, अरध निशी प्रीतम आयौ ।
नींद मांभि तिय निरखी, लेइ महावर पगि लायौ ।।
बहुरि गयौ बाजार, बहुत विधि देखी बाजी ।
पुनि आयौ परभात, रसिक कोतक चित्त राजी ।।
निसनेह नाह तुम मोहि तजी, डुसक डुसक रोवइ डसी ।
अध दृष्टि इतइ अलतै अरूण, चरण देखि चतुरा हसी ।।१।।

—:✿:—

समस्या-वामन के पगतै जु वची
धरि जानत है विरलो जग कोऊ ।

धरि जानत हैं विरलो जग कोऊ ।
सूखत ना कबही सब ही रस,
जागत है वरषा विनु जोऊ ।
जोर करं ते लाइ नहि जानु,
है है पुनि नाहि गहै विधि ढोऊ ।।
पावत पार न को धर्मसी कहै,
शेप उपारि सकै नहीं सोऊ ।
वामन के पगतै जु वची धरि,
जानत है विरलो जगि कोऊ ।। १ ।।

—०—

समस्या-हरि शृंगनि तें असूआं ढरि आइ ।

एक समै शिव शैल सुता रति रीति रसै विपरीत वणाई ।
संभु डस्यौं अधरा अध तैं तिण पीर पीया दृग नीर बहाइ ।
भाल कै चंद परी बहुं बिंद धरी है कुरंग के शृंग सखाइ ॥
ऊठत ईस ही सीस धुण्यों
हरि शृंगनि तै अंसूआं ढरि आइ ॥ १ ॥

वनमें मृग एक मृगीकै वियोगहि,
बैठि रह्यो निज ठौर निसाइ ।
तब ही दोइ पंथक वात करै,
अधरात भइ हरिणी सिरि छाई ।
आनन ऊरध कैं चितयौ,
मृग देखत व्योम प्रिया नहीं पाई ।
दुख तैं मुख ऊरध रोवतही,
हरि शृंगनितैं असूआं ढरि आई ॥२॥

—:o:—

समस्या-'आरसी में मुख देखौ मुख ही मे आरसी'

सुन्दर पलंग पर बैठौ है चतुरवर,
आगे आइ बैठी प्रिया देव की कुआंरसी ।
ताहि समै प्यारी प्रिया देखि आपु दर्प्पणकुं,
पीउ कुं दिखावैं भावैं कीनै मनुहारसी ।
देखत हौं तेरौ मुख मैं तो अति पाउं सुख,
वीचि धरी आरसी तौ लागत है आर सी ।

मेरौ रूप तेरि नैन कहा तु कहत वैन,

आरसी में मुख देखौ मुख ही में आरसी ।१।

—:॥:—

समस्या-चंप कैंसे च्यार फूल फूलै हो रहतु है ।

अति ही अनूप नाभि रूप कूप उपरितैं,

मोतिनि की माला घटमालासी वहतु है।

नूर नीर ऊर पूर रंभ थंभ बाहुलता,

आनन कमल स्वास सौरभु गहतु है।

नाक कीर भौंहि भीर आली कौ सुहाग बाग,

साचौकरि देख्यो हैं पैं धर्मसी कहतु है।

आंखनि उरोजनिकी एती अधिकाइ पाइ,

चंप के से च्यार फूल फूले ही रहतु है ॥१॥

—०—

समस्या—ठाढे कुच देख गाढे प्राण अकुलात है ।

गोरी तेरी देखि गति दूर हुं बिसारि मति,

देखत न कैसे मन ठौर ठहराति है।

घुंघट की ओट मांझि नैननि सो चोट करै,

जाकैं लागैं सो तो लोट पोट होइ जाति है।

सोनैं सुं सुधारे सारे आवे से उघारे भारे,

काठ तौ चोगान के निसान से कहातु है।

कहै धर्मसीह कसे ऊभै पौरीयै से ऐसे,

ठाढे कुच देखै गाढै प्राण अकुलात है ॥ १ ॥

—॥—

समस्या—नीली हरी बिचि लाल ममोला

थोरी सी वेस में भोरी सी भोहीसी,
गोरी चलावति नैन गिलोला।
जाकै लागै ते डिगै मुन ही, मनहिं महि मारत मार झलोला।
मोहैं सबै मन मौहैं अचंभजु, कौहै कहौ यह रैंन अमोला।
हसै घट घुंघट ओट में आनन
नीली हरी बिचि, लाल ममोला ॥ १ ॥

एक समे वृषभान कुमारि, सिंगार सजै मनि आनिइ लोला।
रंग हर्ये सब वेस वणाइ कैं, अंगुल काइ लए तिहि ओला।
आए अचाण तहां घनश्यांम, लगाइ झरी करैं केलि कलोला।
घुंघट में एक्यौं अधरा मनु, नील हरी विचि लाल ममोला ॥२॥

—❀—

समस्या पूर्ति—टेरण के मिस हेरण लागी

चंप सुं च्यार सखी मिलि चौक में, गीत विवाह के गावन लागी।
गौख तें कान्ह कौ साद सुणैं तैं, भइ वृषभान सुता चित रागी।
जाइ नही चितयौ उत ओर, सखीनि कै बीचि में बैठी सभागी।
उतैं कर कौ सुकराज उडाइ कै, टेरण के मिसि हेरण लागी ॥१॥
भानि मै बंद ज्युं गोप के वृंद में, बैठे हैं नंद के नंद सोभागी।
एते मैं आइ घटा घुरराइ, घनाघन की बरसै झर लागी।
आधि कै राधिकै कांन कै अंग, आलिंगनु काजु भइ अनुरागी।
आइ कै गाइ वताइ यौ कान्ह यौ, टेरण के मिसि हेरण लागी ॥२॥

—❀—

सवैया (समस्या)

अरे विधि तुं विधि जाणत थौ पुनि,
एक विचार कहा यह कीनौं ।
गोरी करी पतरी करि की कुच,
कै उच कौ पुनि बोझ ही दीनौ ।
जो कबहु बहु पौंन वसै करि,
टूटि जैहैं करि के जु करीनौ ।
ता तब ऐसे ही कैसे वणावेगो,
धर्म कौ वैंण तै मोनि न लीनौ ॥ १ ॥

समस्या—कर्म की रेख टरै नहीं टारो

नीर भर्यो हरिचंद नरिंद ही, कंस कौ वंस गयौ निरधारी ।
मुंज पर्यो दुख पुंज के कुंज, गयौ सब राज भयौ है भिखारी ।
लंक कुवंक कलंक लगाइ है, रावण की रिधि जावण हारी ।
मीन रु मेख कहै धर्म देख पै, कर्म की रेख टरै नहीं टारी ॥१॥

समस्या—टारी टरै नहीं कर्म की रेखा

छप्पय

एक कौं एक रु दोइ न आवत, एक करैं केई लाख के लेखा ।
एक के रासभ ही नहीं एक कै, द्वार हजार करैं हय हेंखा ।
कोऊ सुखी जगि कोऊ दुखी जन,
काहें कौं काहू कौं कीजै अदेखा ।
कोडि उपाय करौ धर्मसी कहैं,
टारी टरैं नहीं कर्म की रेखा ॥ १ ॥

समस्या—सवैया तेईसा

तत्त की या धर्मसीख धरौजु, कहा बहु गल्ल कथा विस्तारौ ।
मोल न हूं मणि की मणिहारीयैं, अमृत बिंदु न कूपक खारौ ॥
चंद उद्यौत करैं सबहुं दिशि, तारक कोरि छतें ही अंधारो ।
सारकी होडि कहा करैं टार, सपूत घरी न कपूत जमारौ ॥१॥

—::—

समस्या—निसाणी घर जानकी सवैया इकतीसा

आयौ जाकौ दूत जमदूत को सौं पौनपूत,
या तौ देखौ वावि की प्रसिद्धि लोक वानि की ।
कीनौं उतपात पात, पात सौ आराम कारि,
बैठो है आराम करि, कैसें लंक थान की ॥
मंदोदरी कहैं राज, मंदौ दरीखांनौ आज,
धारौ धर्म सीख पैं न, धारौ सीख आनि की ।
कांनि कानि फैली बात, कांनि तैं न कही जात,
आंनी घरि जांनकी, निसाणी घरि जांन की ॥ १ ॥

:—:—:

सवैया—समस्या, हरिसिद्धि हसै हरि यों न हसै

हनुमान हरौल कियैं चढ़े राम,
तयों निधि संनिधि लंक ध्वसे।
करिं रौद्र संग्राम लंकेश कुं मारि,
कियौ सुखवास की नास नसे ॥
शिव चिंत्यो त्रिलोक कौ कंटक सोऊ,
नमावतौ मो पद सीस दसे।
उत दैत्य हसे उत देव हसे,
हरि सिद्धि हसे हर यौं न हसे ॥ १ ॥

अपणै भुज भार पहार उपारि,
गोवर्द्धन धार जो धार जसे।
तिण माखण ले मटकी पटकी,
अपराध ते कौंल के नाल कसे ॥
अब खोल दे गात जसोदह मात,
न माखन खाऊं न जाऊं नसे।
उत दैत्य हसे उत देव हसे,
हर सिद्धि हसे हरि युं न हसे ॥ २ ॥

—::०—

समस्या—योग, भोग पर

रिण देंणौ घणौ लहणौ न कछु,
गहणौ घर में कर एक छलौ है।
इत भूतसौ पूत कुपात है तीय,
कहा[1] कहि बात में जात ललौ है॥
नित गेह कै नेह में देह दहै,
न गहै ध्रमसीख न तत्त तलौ है।
नहिं जानत है चित में इतनौ,
इण भोग हुते जति जोग भलौ है॥ १॥
कहै नाम अत्तीत अनीति धरावत,
पावत लोक अलोक गिलो है।
विह साव सौ वेष धरै बहु धेख,
अलेख कहै पें अलेख ललौ है॥
न सरें जब काज गरें जु परै,
झगरैं बहु सु पकरै जु पलौ है।
कहौ साध्यौ कहा इण जोग गहे,
इण जोगहु तै गृह भोग भलौ है॥ २॥

समस्या—चतुराई पर

एक एक चातुरी सौं अकल नकल आनैं,
सकल सयाने लोक सुनि के थगतु है।

१—कलहा, कलहि, बालत, जालत

एक तौ विचित्र चित्र शत्रु मित्र जंत्र मंत्र,
राग रंग रस मांझि जावता जगतु है ॥
कर्म कला करणै में धर्मसीख धरणै में,
चातुरी तें भूषण है दुख न भगतु है ।
पूरे वेद पाठी तेऊ चातुरी कुं चित्त चाहै,
चारू वेद चातुरी के चेरे से लगतु है ॥ १ ॥

समस्या—मान पर

मित्र उदै मेरा जीव राजी है राजीव सम,
जासुं मन मेल सो तौ दूर ही नजीक है ।
प्यार धरि सीख सो में मानुं कुल लीकजैसी,
प्यार विन सीखसो मो लागति अलीक है ॥
हित मुं दें तिनको सो मोतिनि को हारमानु,
हेत विनु हार सोऊ तिनिके की सीक है ।
मान कौ तौ बीरा मेरे हीरा कै समान मानु,
बिना मान हीरा मेरे बीरा कै सी पीक है ॥१॥

:—※—:

समस्या—साहिबी न भावै ताकूं साहिबो फकीरी है ।

देश की विदेश की निसे की न चिंता कछु,
हीनता न दीनता न काई तकसीरी है ।
सग्गकी न जग्गकी न दग्ग की न चाहि काहि
काहू की प्रवाहि नां न कोई दिलगीरी है ॥
सोच कौ सकोच कौ न पौच कौ आलोच मंत्र,
आप है स्वतंत्र काहू जोर न जंजीरी है ।

साहिब के नाम धर्मसील गह्यो एक टेक,
साहिबी न भावैं ताकुं साहिबी फकीरी है ॥१॥
मन के महल मांझि समता प्रिया के संग,
अनुभौ के अंग रंग सुखनि कौ सीरी है।
ममता न मोह द्रोह रमता है आपा राम,
ज्ञान गुन कला धारी ध्यान दशा धीरी है ॥
काहू की न संक वंक तैसो राउ राना रंक,
सबही कुं मानै सम कुंजर सुकीरी है।
मंदिर रुचै न जाहि कंदर कौ वास ताहि,
साहिबी न भावै ताकुं साहिबी फकीरी है ॥२॥

—:o:—

समस्या—थारी में युं ठहरात न पारौ।

दूर सौं दौरि मिलै छिन में, छिन में गहि लेत है एक किनारौ।
भौंर से खात फैंलात चहुं दिसि, नेकुं अटै नहीं होतनि न्यारौ।
एक न ठौर कहौ ठहरात, ग्रह्यो नहीं आवत हाथ अतारौ।
युं तृष्णामैं भमै चित्त चंचल, थाली में ज्युं ठहरात न पारौ ॥१॥
मैं हर वीरज धीरज कारण, गौरी कौ प्राणनि होतैं पियारौ।
मैं कियौ कारितिकेय कुमार, करुं उपगार स धातु सुधारौ।
कांसी में होइगी हांसी हमारि, निकारि बतातलि पीसही डारौ।
त्रिधातु त्रिकूट त्रिजाती मैं ना रहुं, थारी मैं युं ठहरत पारौ ॥२॥

:—※—:

समस्या—काकै के दोठैं कुटंब ही दीठौ।

मोहनभोग जलेबीय लड्डूअ, घेवर तामै कहौ कहा मीठौ।
वाद भयौ धर्मसी कहै नागर, न्याउ कुं जंगल जट्ट प्रतीठौ।
सौ कहैं बूरं कैं पूर भये सब, ताकौ भाइ गुड लाल मजीठौ।
सो गुड दीठौ है मैं अति मीठौ तौ,
काकैं के दीठैं कुटुम्ब ही दीठौ॥ १॥

:—※—:

समस्या—युं कुच के मुख स्याम कीये हैं।

तीय कौ रूप अनूप विलोकत, लोकनि के लख मोहि लियें हैं।
कोऊ कहै कुच कंचन कुंभ धुं, श्रीफल मंगल रुप ही ए हैं।
लगै जिनु दृष्टि विचारि विरंचहि कज्जल के दुइ बिंदु दीयै हैं।
बात कौ मर्म कहै कवि धर्म जुं, युं कुच के मुख
स्याम किये हैं॥ १॥

:—※—:

समस्या—छानोरे छानो रे छानो रे छैंया।

काम कलोल में लोल भयौ, पिऊ तीय करैं ओहि ओहि रे दैया।
नैकु हरै हरै मानि बुलाइ ल्यो, कोउ सुणैं जिनु लोक पछैया।
सेज के उपर नुपर के सुर, बाल जग्यो लग्यो रोवन मैया।
दैं तेरैं बाप कै थाप डरैं जिनु,
छानुं रे छानुं रे छानो रे छैया॥ १॥

:—※—:

सवैयो बात करामात

शास्त्र घोष कंठ शोष पंडिताई करै पोष,
पूछ्यौ होत राग दोष रोष न समात है।
एक ही वचन कला दूझै कामधेनु तुला,
याही कला आगैं और सबै कला मात है॥
माने सुलतान खान रीझै सब राउ रान,
पावै दान मान थान हित की हिमात है।
सब कुं सुणै सुहात मुख की है मुलाखात,
धर्मसी कहैं रे भ्रात बात करामात है॥ १॥

चोरनि की करामात, चाहत अंधारी रात,
साहिनि की करामात घर में विसात है।
बालनि की करामात, पास अपणी है मात,
पंछनि की करामात जागत प्रभात है॥
जोगिनि की जाति में जमात करामात कहीं,
गणिका की करामात सुन्दर सुगात है।
सबहुं कुं सुण्यै सुहात मुख की है मुलाखात,
सब ही कुं धर्मसीह बात करामात है॥ २॥

दोहा

ओरंग पतिसाहि ग्रही, दहवटि करि दाराह।
रज्ज पियारा रज्जियां, भाइ दुपियाराह॥ १॥
स्वारथ मिठ्ठा सब ही कुं, विण स्वारथ खाराह।
रज्ज पियारा रज्जियां, भाइ दुपियाराह॥ २॥

मुलतान रे अध्यातमीये प्रश्न पूछ्यां रो उत्तर, सवैया १ काव्य १ दूहो १ नवा करिने मुक्या, दुरस्त बात जांणी ने खुशी थया ॥

सवैया इकतीसा

तुम्ह जे लिखे है प्रश्न, ताके भेद भाव बूझे,
तुम ही सौं नाहिं गुझे सुझे है सुदच्छ सौं ।
मानो "परमात्मा—प्रकाश" 'द्रव्यसंग्रहादि'
और न प्रमाणौ ग्रन्थ ताणौ आप पच्छि सौं ।
ता तें और आगम के उत्तर न आवै चित्त,
लिखि कै बतावैं केते हेतु युक्ति लच्छ सौं ।
दुर हुंते तैं भ्रम होइ, सैली नांहि कहै कोइ,
बात तौ वणै जो ज्ञान (द)ष्टि हूँ प्रतिच्छ सौं ॥१॥

श्लोक

युष्माभिर्लिखिता विचित्र रचना प्रश्नाः परीक्षार्थिभिः ।
केचिच्छास्त्रभवाः सुबोध विभवा केचित्प्रहेलीमया ।
ते वो नो मिलनादृते नहि कृते भ्रांतेर्हतेवः क्षमा ।
स्तत्प्रत्युत्तर जाल मंगन मनो मीनौ धुनानीयते ॥ १ ॥

दोहा

तजै नांहि व्यवहार कुं, भजै नांहि पछपात ।
तत्व धरैं दूषण हरैं, सोइ सुज्ञ कहात ॥१॥

—:०:—

सवैया

उपजी कुल शुद्ध पिता हनि कै, फुनि शुद्ध भई करि दोष विलै ।
करि संग पितामह सु प्रसयौ, पित आप कुवांरि कैं खेल खिलैं ॥
जग मित्र जिवाइ चरित्र बणाइ पवित्र भलै धर्मसील भिलै ।
कहि कौन सखी पित कैं पित सु, बिछुरै दुरिकैं फुनि जाइ मिलै।१।

—:※:—

सवैया—तैवीसा

चम्पक मांझि चतुर्भुज राजत, कुंद में आप मुकुंद विराजैं ।
केतकी मांझि कल्याण बसैं नित, कूजकै कूंच में केसव छाजै ॥
मालती माधौ मुरारी जु मोगरैं, गुलाब गुपाल सुवास सुसाजै ।
कान्ह बसैं कल्पतरु मांझि, नरायण फुलनि हुं कुं निवाजैं ॥१॥
केतकी में केसव, कल्याण राइ केवरा में,
कुंज मैं जसोद सुत कुंद मैं विहारी है ।
मालती मैं मुकुन्द मुरारि वास मोगरैं,
गुलाब में गुपाल लाल सौरभ सुधारी है ।
जूही मैं जगतपति कृपाल पारजात हु में,
पाडल में राजै प्रभु पर उपगारी है ।
चंप में चतुर्भुज चाहि चित्त चुभि रह्यौ,
सेवंत्री में सीताराम स्याम सुखकारी है ॥२॥

वैद्यक विद्या

(डंभ क्रिया)

शंकर गणपति सरस्वती, प्रणमु सब सुखकार ।
वैद्यनिके उपकार कु, अग्नि कर्म कहुं सार ॥ १ ॥
जो चरकादिक ग्रन्थ में, विविध कह्यौ विस्तार ।
वागभट्ट तैं मैं कहुं, भाषाबंध प्रकार ॥ २ ॥

रोग संख्या संग्रह

ताप सन्निपात जाणी अतीसार संग्रहाणि,
फीहौ विध राल पांडु गोला सूल खैंन है ।
हीया रोग सास खास रुधिर प्रवाह रूप,
सीस पीड रोग अरू जेतें रोग नैंन हैं ॥
और उन्मादवात कटीवात सीत अंग,
मृगीवात कंपवात सोफोदर अैंन है ।
जलोदर अंडवृद्धि धनुप चोवीस रोग,
ताकि कहै दंभक्रिया वैद्य ग्रन्थ वैंन है ॥ ३ ॥

दोहा

संनिपात ज्वर नाश कु, डंभ बतावै च्यार ।
प्रथम तालवै दीजिये, दंभ गोल परकार ॥ ४ ॥
दूजौ लंबो ग्रीव परि, जहां धरिजै जोत ।
दो लवणै यौ वर्त्तुला, च्यारे इहि विधि होत ॥ ५ ॥

अतीसार ग्रहणी विषें, दंभ बतावे पंच।
नाभि चिहुं दिसि च्यार द्यौ, कूरम पद के संच ॥ ६ ॥
त्रय अंगुल फुनि नाभि तजि, अधो भाग शुभ ठाण।
लंबो अंगुल च्यार कौ, पंचम डंभ प्रमाण ॥ ७ ॥

परिहां

पूठि दशा सुं आणि उदर कर सुं ग्रहै,
फीहा की जहां पीर आंगुली अग्र है।
दीजै तिहां दोइ डंभ एक एक उपरैं,
परिहां, एहि विधि वैद सुजाण तुरत वेदन हरै ॥ ८ ॥
डंभ तीन विध राल तहां विधि सुं करै,
लांबो आंगुल च्यार एक तिहि उपरै।
दूजौ हिरदौं मूल दंभ वर्त्तुल धरौ,
परिहां, पूछै जहां बहु पीर, तहां धरि तीसरौ ॥ ६ ॥

चौपाई

पांडु रोग सोफोदर सही, तीजो रोग जलोदर लहि।
च्यारे डंभ चिकित्सा जाणि, ज्युं कीजै त्युं कहुं बखाणि ॥१०॥
हृदे मूल वर्त्तुल इक होइ, दुहु कुखे लांबा द्यौ दोइ।
इक अंगुल तजि नाभि प्रकार, चउथौ डंभ चूड़ी आकार ॥११॥
फीहै जो विधि कहु बखाणि, गुलम रोग पिण सो विधि जांण।
पेट सूल जो होइ अगाध, सूल डंभ तैं नासे व्याध ॥१२॥
प्रबल होइ जब खैन प्रकार, बोली दंभ क्रिया तहां बार।
एक तालवै दीजै गोल, दूजौ ग्रीवा जोत्रें ओल ॥१३॥

ग्रहणी रोग बताये पंच, तिण विधि सु देणा तिण संच।
पंच उदर हिरदै प्रकार, इहि विधि द्वादश डंभ विचार ॥१४॥

हिरदै रोग स्वास अरू खास, डंभ क्रिया तिहां पंच प्रकास।
हुदैं लीक अरू वर्त्तुल च्यार, दंभ अस्थि के मध्य विचार ॥१५॥

रूधिर वहै नासा मुखि जबै, सीस डंभ वर्त्तुल इक तबै।
डंभ कह्या सन्निपाते जोइ, सीस रोग सीतांगै सोइ ॥१६॥

परिहां

मृगी धनुष वात जब जाणियै,
दीजै खट खट डंभ क्रिया पिहिचाणियैं।
दो लवणे दोइ पाय एक पुनि तालवैं,
परिहां गुदड़ी उपरि एक इणै विध चालवैं ॥१७॥
कटी वात जब जाइ न ओषध गोलीयैं,
कटि नीचैं दोइ डंभ वणावौ चूलीयैं।
अंड वृद्धि जब होइ दंभ इक दीजियै,
परिहां, पाय अंगुली पास समझि विधि लीजियै ॥१८॥
वामी दिसि जो होइ कुरंड विथा घणें,
दक्षिण दिसि द्यौ दंभ तुरत पीड़ा हणें।
पद अंगुल दश जाण तहां दश दंभ है,
परिहां, पंच पंच दोइ जानु संधि विचि थंभ है ॥१९॥

न पीड अति ही जन औषध औसरैं,

दो लवणे घौ दंभ, तुरत पीड़ा हरै ।

अग्नि क्रिया के श्लोक वागभट ग्रन्थ में,

परिहां, कही भाषा सु सरल वचन के पंथ मैं ॥२०॥

सतरै चालीस विजयदशमी दिनै,

गच्छ खरतर जगि जीत सर्व विद्या जिनैं ।

विजयहर्ष विद्यमान शिष्य तिनके सही,

परिहां, कवि धर्मसी उपगारै दंभक्रिया कही ॥२१॥

—:०:॥:०:—

ऐतिहासिक व्यक्ति वर्णन

बीकानेर नरेश

अनूपसिंह सवैया

केई तौ विकट वाट लंघत अलंघ घाट,
वीते हैं मुहीम मैं वरस बीस त्रीस जू ।
केइ उमराउ राउ चाकरी चपल कीनैं,
भीनैं बरसाति गति दौरै निस दीस जू ।
तेऊ सिरपा कुं उपा करैं कोरि भांति,
तो भी ताकूं नानति है दिल में दिलीस जू ।
धन्य महाराज श्रीअनूपसिंह तेरौ तेज,
बैठे ही कुंपातिसाह भेजे बगसीस जू ॥ १ ॥

—:※:—

संस्कृत

भुज्यत इष्ट जनैः सह मृष्ट मऽवे हि तदेव हि भोजन मिष्टं ॥
स्मर्यंत एव परोक्षतया किल वर्य्यम ऽजर्य्य मथेह विशिष्टं ॥
ज्ञान गुणत्व मिदं भुवि वर्णय यत्रं हि कर्म्म वचश्च न दुष्टं ॥
छद्म विना क्रियते रूचिरं शुभ धर्म विधान महोउपदिष्टं

कवित—(सं० १७२६ मध्ये माघ मासे कह्यौ)

बीकपुर तखत महाराज मोटै वखत,
बजै सुजसां तणा जास बाजा ।

वड़ो उमराव दिल्लेस वखाणियो,
रूप भूपां अनूपसिंह राजा ॥१॥

कहर अरि कंटकी काटि कांने किया,
विरूद मोटा लिया आप वाहे।
करण तण आपणौ सुजस सगले कियौ,
सही परसंसियो पातिसाहे ॥ २ ॥

पाट बैठा प्रथम हरष हुयौ प्रजा,
दसो दिस भूपते भेंट दीधी।
सूरहर आप सुलतान साराहि नै,
कुंजरां धनां बगसीस कीधी ॥३॥

हिन्दुआं मौड राठौड़ मौटे हसम,
पुहवि पत्ति मांहि परताप प्राझौ।
अनूपसिंह राजवी अटक कटके अडिग,
आप श्रीजी करै जास आझो ॥ ४ ॥

अमरसिंह जी सवैया

तेरे तो प्रताप के प्रकाश त्रास पाइ अरि
नास सरणैं की आस डोलत घराघरी।
तेरे ही नि देस देस नेस न प्रवेस कहुं
वन मैं निवेस काज धर की धराधरी।
सिंह न कौ डर डारि कन्दर कैं अन्दर ही
बैरि हीये तेरौ भय भयौ हैं खराखरी।

राज श्री अमरसिंह नामै सिंह सम है पै
सूरापन कैसे सिंह करिहैं बराबरी ॥ १

दोहा

खड...लाराखेलि, अमरेसैं लीधी उरा।
राख्यो नही बहु रोस, दोइ आखर बगसे दीया । १ ।
अमरेसैं बाह्यौ सु असि अटक्यौ अरि उर आइ।
तिण अरि धार बांधी तुरत, जोयौ मन्त्र जगाय ॥२॥

काव्य

श्री मच्छ्री अमरादिसिंह भवता नूनं रणे वैरिणा।
वारुत्तारित मित्थमत्रमयकावार्किं वदंत्या श्रुता।
मन्ये नाह मिति त्वया त्वति तरां तन् स्त्रीषु सिक्तं दकं।
नोचेन्निर्ज्झरवन् साद प्रवहति स्त्री दगंभः कथं ॥ ६ ॥

अमृतध्वनि

मबल सकल विधि सबल सुत, गढ़ जेसाण नरिंद।
अमरसिंघ इल मैं अखी, सोभत जांणि सूरिंद ॥ १ ॥
चालि—तौ सोभ सुरिन्द दूदुतिहि दिणंद दविण धनद्दानसमंद।
द्दुथिय दरद्द हलित दरिद्द द्दसहि दिसिंद।
दधितां हद्द दूदेव विरूद्द इल बलरूद्द दूदूठ खिरद्द दिद्दढ़
असि वृन्द ।
दंदुदभि नद्द द्दुसह सबद्द द्दुयण दहद्द द्दवट दंद।
दर सिस हद्द दिल विहसद्द दूदुनिय कुमुदद्
ददीपति चन्द ददेखि नरिंद दिन कविंद
द्यै जयसद्द द्दीरघ आउख तास ॥२॥ स० ॥

गीत—राउल अमरसिंहजी रौ

बलोचारा माडला रौ संवत १७२६ जेठ माहे श्री जैसलमेर में कह्यौ ।

कवित

जेठ तपते तपत जीव जगरा जिके,
आपणी ठाम सहु रहैं अटकी ।
छोडि सहु काम ताके सहु छांहडी,
कीध तिणवार अमरेस कटकी ॥१॥

सांभली बात बउलोच सोमा हुता,
धपटिया घेणुआं करे धाड़ौ ।
खलकती लूअ में खण्ड करिवा खलां,
आवियो अमरसिंह तेथि आड़ौ ॥२॥

काटि खग झाटि अरि धाटि दहवाटि करि,
अधिक जस आपरे तखत आयौ ।
भलभली भेट भूपां तणी भोगवै,
सबल तण आज प्रतपै सवायौ ॥३॥

दौलति परजि सहु एम आसीस द्यै,
जीपिया जंग तिम वले जीपौ ।
दूथियां पाल सु दयाल दायाल हर,
दीपते सूर जिम सदा दीपौ ॥४॥

कवित्त जसवन्तसिंहजी (जोधपुर महाराज) का स० १७३६ रैं पोस माह मध्ये कह्यौ महाराजा जसवन्तसिंहजी देवलोक हुआ पछलौ। देहरा पड़्या तिण समीयैं रो।

हुतौ जसवंत तां थोक सगला हुंता,
हुती हिन्दुआं तणै बात हाथै।
देखसी असुर कवण तजि देहरा,
सलकिया देव जसवन्त साथैं ॥१॥

पड्यैं जिण जोध पौकार सगलैं पड़ी,
धरैं नहीं अरज पातिसाह धीठौ।
राह बंधी हुइ रखे कोइ रोकसी,
देवं जसवंत रौ साथ दीठौ ॥२॥

हुतौ हिंदुआ तणौ धरम सूरा हरौ,
सबल चिंता पड़ी देस मारैं।
दुख मरूधर तणा रखे हिव देखस्यां,
ललकिया देव जसवंत लारैं ॥३॥

सुणी सुर लोक में बात गजसीह रैं,
हुसी हिंदुवां तणी रखैं हामी।
आपणैं बीज निज अंश अवतारिया,
आवियौ आप हिव देव आमी ॥४॥

कवित न० २ (जसवन्तसिहजी रा समईया पछलो)

मरूधरे देस महाराज मोटौ मरूद,
कदे नहीं परज नैं चिंत कांइ।

असुर सुं बीहतै इन्द्र आलोचि नै,
भीर नैं तेडियौ जसू भाइ ॥ १ ॥
जाइ सुरलोक मैं अमल कीधौ जसु,
असुर सहु नाठि मृतलोक आया ।
कसर सहु आपणी मूलगी काढ़िवा,
लागतै जोर जंजाल लाया ॥ २ ॥
लोक सगलां कन्है जीजीया लीजियै,
देहरा ठाम महिजीद दीसै ।
धरहरै गाय इण राव इन्द्रसी थकां,
हियौ इण राज सुं केम हीसै ॥३॥
ग्वंदिजै परज चिहुं पाखती खोसिजैं,
सहु कहै लोक इम केम सरसी ।
धरौ मन धीर सुख हुसी हिंदू धरम,
कुंअर जसराज रा राज करसी ॥४॥

कवित्त दुर्गादासजी का

(महा) मौड मुरधर तणा खलां दल मौडतां,
दौड़ पतिसाह सुं करै दावा ।
रौड़ रमतां थकां चौड रिम्म चूरतां,
ठौड ही ठौड राठौड़ ठावा ॥१॥
छात ढलतैं जसू हुइ नाका छिली,
सांक तजि साह सुं करै साका ।
दाव पाका कीया सुजस डाका दिया,
जोध बांका करै नाम जाका ॥२॥

आगला भूप श्री अजीतसिंह आगला,
डागला दौड़ज्यूं दिली कति दूर ।
भागलै भुजां बल खलां करि खागलें,
सागलें कीध जस सूर हर सूर ॥३॥
खीजीया यवन ल्यै जीजीया खूटिवैं,
खेचलां बीजीयां रैत खाखी ।
प्राण जोधाण रैं पाजीया पी जीया,
रेख दूर्गदास राठौड़ राखी ॥४॥

गीत श्री शिवाजी रो

श्री सूरत मध्यै कह्यौ स० १७३३ आसाढ़ माहे ।

सकति काइ माधना, किना निज भुज सकति,
वड़ा गढ़ धूणिया वीर वांकै ।
अवर उमराउ कुण आइ साम्हौ अडै,
सिवारी धाक पातिसाह मांके ॥ १ ॥
खसर करतां तिके असुर महु खुंदिया,
जीविया तिके त्रिणौ लेहि जीहैं ।
शब्द आवाज सिवराज री सांभले,
बिली जिम दिल्ली रो धणी बीहैं ॥२॥
महर देखे दिली मिले पतिसाह सु,
खलक देखत सिवौ नाम खारें ।
आवियौ बले कुसले दले आपरे,
हाथ घसि रह्यौ हजरत्ति हारें ॥३॥

कहर म्लेच्छां शहर डहर कन्द काटिवा,
लहर दरियाउ निज धरम लौचैं।
हिन्दुओ राउ आइ दिली लेसी हिवै,
सबल मन माहि सुलताण सोचे ।४।

नाजर आनदराम जी रो सवैयो

ज्ञायक गुणै अगाह, न्याय कौ करै निवाह,
आलोची वडौ अथाह धीरज को धाम जू।
सज्जन फल्यो उमाह, दुज्जनां के हिये दाह,
पुण्य को सदा प्रवाह जाको शुभ नाम जू।
चित्त में धरंते चाह नित्त ही उडीके राह,
पूज्यौ इष्ट देवताह कीनौ इष्ट काम जू।
सब ही करै सराह वाह वाह वाह वाह,
आयौ तो भयौ उच्छाह श्री आनन्दराम जू। १।

:—❀—:

वर्त्तमान जिन चौवीसी

१ आदि जिन स्तवन

राग भैरव

आज सुदिन मेरी आस फली री ॥ आज० ॥
आदि जिणंद दिणंद सो देख्यो,
हरख्यो हृदय ज्युं कमल कली री ॥आज सु०॥१॥
चरण युगल जिनके चिंतामणि,
मूरति सोइ सुरधेनु मिली री ।
नाभि नरिंद को नंदन नमतां,
दुरित दशा सब दूर दली री ॥ २ ॥
प्रभु गुण गान पान अमृत को,
भगति सु साकर मांहि मिली री ।
श्री जिन सेवा सांइ धर्म मीमा,
ऋद्धि पाइ साइ रंग रली री ॥ ३ ॥

२ अजितनाथ स्तवन

राग—भैरव

प्रभु तूं अजित किन्हीं नहिं जीतो.
सोभत रवि ज्युं तेज सदीतो ।
अधिको को नहीं तोहि अगीतो,
तेरी महिमा जगत जगीतो ॥ प्रभु० ॥ १ ॥

सुर नर सब में अनंग अजीतो,
काम कठिन सो ते वश कीतो ।
जल सब अनल बुझाइ वदीतो,
पानी सोइ वडवानल पीतो ॥ प्रभु० ॥ २ ॥
बिन प्रभु दरसण काल बितीतो,
भवभय भमीयो बहु भयभीतो ।
गुणवंत तेरी सेव ग्रहीतो,
श्री धर्मशील सुशील लही तो ॥प्रभु०॥३॥

३. श्री सभव स्तवन

राग—सोरठ

सेवा बाहिरो कइयै कोइ सेवक (ए देशी) ॥

संभवनाथ जी सब कुं सुखदाइ, किम ए विरुद कहावै ।
इहां आछी दीसैं अपणायत, सेवैं ते सुख पावै ॥ संभव ॥ १ ॥
खिजमत करि कर जोडि खिजमत, आप नरीझैं औजांह ।
मोल दियै पिण मसकित माफक, मोटां री नहीं मौजांह ॥२॥सं॥
भगति करै त्या राखै भेला, कठै न फेरैं कबही ।
श्री धर्मशील कहै सुणजो साचो, स्वारथ राचैं सबही ॥स०॥३॥

४. श्री अभिनन्दन स्तवन

राग—वसत

धन धन दिनकर उग्यो उछाह,
अभिनन्दन जिन वंदन उमाह ॥१॥

सब तमस मिट्यौ प्रगट्यौ सराह,
वर्त्यो शुभ ज्ञान प्रकाश वाह ॥२॥
चित कोक विलोकवै करत चाह,
सब सुर नर जिनकी करत सराह ॥३॥
फरस्यौ शुभ यश परिमल प्रवाह,
लुलि नमतां समकित रतन लाह ॥४॥
इनके गुण गण महिमा अथाह,
गावइ धर्मशी गुण गीत गाह ॥५॥

५. श्री सुमति जिन स्तवन

राग—वेलाउल

मेरे माई सुमति की सेवा साची।
जिनके नाम प्रसाद जगी है, राधा आप सु' राची ॥१॥
वांदी कुबुद्धि किए बहु कामण, नटवी ज्यु' बहु नाची।
दूर निकार दइ बहु दूती, तृष्णा मारी तमाची ॥२॥
सुज्ञानी कै परप्यारी सु', करनी प्रीति सुकाची।
सुधर्म शीलवती सुखदाइ, युवती याहीज राची ॥मेरे०॥३॥

६ श्रीपद्मप्रभु जिन स्तवन

राग—तोडी

हृदय पद्मप्रभु राचि रह्यो री।
मंगल सकल हर्ष भयौ मेरे, लाभ अनोपम रतन लह्यो री ॥१॥

काम क्रोध प्रवेश न पावत, गेह सुज्ञानी आप गह्यो री।
दुश्मन सकल निकल गये दूरे, सबल प्रताप न जाइ सह्यो री ॥२॥
अब अपने घर साहिब आयौ, चरण न छोड़ुं चित्त चह्यौ री।
शासन बगस्यौ जिन धर्म सीमा,
करिहौं मैं पिण आप कह्यौ री ॥ ३ ॥ ह० ॥

७. श्री सुपार्श्व जिन स्तवन

राग—सारंग-वृन्दावन

सही, न तजुं पार्श्व सुपास कौ ॥न०॥
सकल मनोरथ पूरण सुरमणि, सुरतरु लील विलास कौ ॥न०॥१॥
सुरनर और की करि करि सेवा, हुइ थानक कुण हास कौ।
अधिकौ लही साहिब को आदर, दास हुवे कुण दास कौ ॥२॥
शुद्ध समकित धर जिनवर सेवा, करण पातिक नास कौ।
श्री धर्मसींह कहै मोमन मधुकर, प्रभु पद पद्म सुवास कौ ॥३॥

८. श्री चन्द्रप्रभु जिन स्तवन

राग—मारु

चंदप्रभु नी कीजइ चाकरी रे, चित चोखे हित चाहि।
सूधी कीधी सेवा स्वामिनी रे, लीधौ तिण भव लाह ॥१॥चं०
चाकर होइ रह्यो जसु चंद्रमा रे, लंछन मिशि पग लाग।
स्वामी नै सेवक उपमा सारखी रे, जुगति नहीं इण जागि ॥२॥चं०
प्रभ नी ठामै प्रभु एहवौ पढ्यां रे, योग्य अर्थ ए जाण।
श्री धर्मशी कहै सूधो समझियै रे, पंडित कहै ते प्रमाण ॥३॥चं०

९ श्री सुविधि जिन स्तवन ।

राग—आसा

कबहु मैं सुविधि कौ ध्यान न कीनउ ।
आरत रौद्र विचार अहोनिश,
दुर्गतिघर करिवै घर दीनौ ॥ १॥
दीप ज्युं औरनि पंथ दिखायौ,
आपहि लाग रह्यौ तम लीनौ ।
मेरो तन धन करि सुख मान्यौ,
मणि परखी पिण अन्तर मीनौ ॥२॥
परमारथ पंथ नाहिं पिछाण्यौ,
स्वारथ अपणौ मानि सगीनौ ।
सुविधि कही धर्म सीख न धारी,
निकल गयौ नर जन्म नगीनौ ॥३॥

१० श्री शीतलनाथ स्तवन ।

राग--कान्हरौ

सुखदाइ शीतल स्वामी रे, शुभ सुमता रस विशरामी रे ।
उपकारी गुण अभिरामी रे, नमीयै एहनैं शिर नामी रे ॥ १ ॥
केइ क्रोधी कपटी कामी रे, खल केइ केहि मैं खामी रे ।
अज्ञानी अगुण अथामी रे, करु तसु सेवा किण कामी रे ॥२॥
जिनवर जग अन्तर्यामी रे, गुण गावै ते शिवगामी रे ।
ध्यावैं धर्मशी धर्म धामी रे, पुण्ये प्रभु सेवा पामी रे ॥ ३ ॥

११ श्री श्रेयांस जिन स्तवन

राग—सामेरी

केवल वाला रे केवल वाला, कोउ मिलि है केवल वाला।
ताको पूंछु कब तूटेगा, जन्म मरण दुख जाला ॥ के० ॥१॥
भव २ ममते पार न पायो, मोह रहट की माला।
पावुं ज्ञानी तो अब पूछुं, कब यह मिटय कशाला ॥ २ ॥
धन अपनै की शोध न धारी, मद आठूं मतवाला।
सो दिन सफल बचन सद्‌गुरु के, पीवुं अमृत प्याला ॥३॥
श्रेय भयौ लह्यौ श्रेयांस साहिब, आया समकित आला।
सब मुख कारण अनुभव सानिधि, सु धर्मशील संभाला ॥४॥

१२ श्री वासुपुज्य जिन स्तवन

वाह वाह वासुपुज्य नी वाणी, वासव पण आप वखाणी।
आवइ भावइ आफाणी, उवारणा लेइ इन्द्र इन्द्राणी रे ॥१॥
मधुर ध्वनि गाज मंडाणी, योजन लगि सर्व सुणाणी रे।
सुर नर तिरि सहु समझाणी, अतिशय पैंत्रीस आणी रे ॥२॥
वैर वांतां सहु विसराणी, पशु ए पिण प्रीति पिछाणी रे।
धर्मशील सूधा सचाणी, शिवरमणी तणी सहनाणी रे ॥३॥

१३ श्री विमल जिन स्तवन

राग—मल्हार

विमल जिन विमल तुम्हारा ज्ञान ।
परखै लोक के सकल पदारथ, षट् द्रव्य नीकी खान ॥१॥ वि०
मिथ्या, अविरती योग कषायै, बंध सत्तावन जान ।
अष्ट कर्म, इक सौ अट्ठावन, प्रकृति तजी पहिचान ॥२॥ वि०
आपहि आप सु ं आप पिछाण्यौ, परगुण नाहिं प्रमाण ।
धरि धर्म ध्यान पिछान सुक्क पथ, थिर बैठो शिव थान ॥३॥वि०

१४ श्री अनतनाथ स्तवन

राग—सोरठ

अनंतनाथ रा गुण अगम अनंता, सांभलजो सहु संता ।
रयणायर में गिणती रयणे, मुनि न कहै मतिमंता ॥१॥
मध्य अनंतानंत छयें सें, थोवा सिद्ध अनंता ।
एक निगोदी जीव अनंता, वलिय वनस्पति वंता ॥२॥
काल पुग्गल आकार अनुक्रम, अधिक अनंतानंता ।
श्री धर्मशी कहै ए सर्दहिजो, साखी सूत्र सिद्धंता ॥३॥

१५. श्री धर्मनाथ स्तवन

राग—धन्याश्री

धर मन धर्म को ध्यान सदाइ।
नरम हृदय करि नर म विषय में, कर म करम दुखदाई ।धर।१॥
धरम थी गर्म क्रोध के घर में, परमति सरमति लाई।
परमातम शुद्ध परमपुरुष भज, हर म तुं हरम पराई ॥२॥
चरम की दृष्टि विचर मती जिवड़ा, भर म भरम मत भाई।
शरम बधारण शर्म को कारण, धर्म ज धर्मशी ध्याई ॥३॥

१६. श्री शान्ति जिन स्तवन

राग—वेलाउल अलहियौ

श्री शान्ति जिनेश्वर सोलमौजी, शान्तिकरण सुखदाइ।
नाम प्रसिद्ध जस निर्मलो, पूजै सहु सुरनर पाय हो ॥श्री०॥१॥
आयउ शरण उवारियौ जी, पारेवो धरि प्यार।
दान दियौ निज देह नौ, इम मोटा ना उपगार हो ॥श्री०॥२॥
उदरे आवी अवतर्याजी, अधिकाई करी एह।
मरकौ उपद्रव मेटियौ, हर्ष्या सहु देश अछेह हो ॥श्री०॥३॥
भव एके हिज भोगवी जी, दीपत पदवी दोय।
चावौ चक्रवर्ती पांचमौ, सोलम जिनवर सोय हो ॥४॥
समरथ ए लह्यौ साहिबौ जी, कमणा नहीं हिवै काय।
सेव्यां वांछित हुवै सदा, इम कहै धर्मशी उवझाय हो ॥श्री०॥५॥

१७. श्री कुंथुनाथ स्तवन

राग—पंचम

शुभ आतम हित साधि रे साधि,
उलझ्यौ परसुं म करि उपाधि ॥शु०॥
तुं हिज राजा तुं हिज रंक, सुणि दृष्टान्त ज्युं होइ निशंक ॥१॥
करि नव नव भव कीड़ी कुंथु, क्रमि सर्वारथ सुर जिन कुंथु।
छठौ चक्रवर्ती साधी छः खंड, पदवी दोइ पाई परचंड ॥२॥
इण हिज वलि दे उपदेश, केई तार्या टालि कलेश।
आप तुं अंतरदृष्टि सुं ईख, साची धर सदा गुरु धर्मशीख ॥३॥

१८. श्री अरनाथ स्तवन

राग—कउखौ

कहै अरनाथ इम, अरति रति क्यौं करौ,
आथि अरहट घड़ी गम आखी।
भरिय खाली हुवै साई खाली भरी,
सूर्य शशि भमइ इण बात साखी ॥ १ ॥
करहु मन ठाम नै काम पिण वस करौ,
धरहु मत द्वेष मत मान धारौ।
काल रंक राव नै केड़ि फिरतौ रहे,
वहै सरिखौ नहिं कोइ वारौ ॥ २ ॥

सुणौ अरनाथ अरदास सेवक तणी,
स्वामी कही एह धर्म शीख साची।
तेह पलिस्यैं नहीं तोड़ तरिसुं तिणै,
राज री भगति में रहिस राची ॥ ३ ॥

१९. श्री मल्लिनाथ स्तवन

राग—सिन्धु

मल्लि जिनेसर तु महामल्ल, हणिया मोह मदन हैं ठल्ल।
पिता तणी पिण चिन्ता पल्ल, सगला दूर किया अरि सल्ल ॥१॥
अहो अहो ताहरी अथग अकल्ल, आपणै रूप रचाइ अवल्ल।
करि जीमण इक एक कवल्ल, भरय तिहां भोजन भल भल्ल ॥ २ ॥
आपणा जे अरि मित्र असल्ल, एकान्ते धरि एक एकल्ल।
जुगति देखाई तें भल जल्ल, दुर्गंध नासै भूत दहल्ल ॥ ३ ॥
तिण सुं अपणइ केहो तल्ल, चारित्र लीधौ चोखी चल्ल।
अरिहन्त पद धर्म शील अदल्ल, पाली पहुतो मुगति महल्ल॥४॥

२०. श्री मुनिसुव्रत जिन स्तवन
राग—जैतश्री

सब में अधिकी रे याकी जैतश्री, काहू और न होड करी ॥स०॥
आठों अंग जोग की ओटैं, उद्धत मार्यौ मोह अरी ॥ १ ॥

अन्तर बहि तप जप आरा वे, जोर मदन की फौज जरी।
ज्ञानी हनी ज्ञान गुरजा सूं, ममता पुरजा होइ परी॥ २॥
अनुभव बल सुं भौदल भागे, फाल फतह करी फौज फिरी।
कहइ धर्मशी मुनिसुव्रत दाना, देत सदाइ मुगतिपुरी॥ ३॥

२१. श्री नमि जिन स्तवन

राग—श्री राग

नित नित नमिजिन चरण नमुं।
मनहि मनोरथ उपजत मेरे, भमर होइ प्रभु पास भमु॥ १॥
न नमुं और कौ तब सब निंदा, खलक करौ तोइ वचन खमुं।
लालच लोभ किही नहीं लागुं, राति दिवस जिन रंग रमूं॥२॥
गुण गण गान इन्हीं के गावुं, दुर्गति के दुख दूर गमूं।
श्री धर्मशी कहै इण सें राचुं, दूजा इन्द्रिय विषय दमूं॥ ३॥

२२. श्री नेमिनाथ स्तवन

राग—वसत

करणी नेमिकी. काहू और न कीनी जाय। क०
तरुण वय परणी नहीं हो, राजिमती यदुराय॥ १॥
जीव पुकार सुणी जिणे हो, करुणा मन परिणाय।
गज रथ तजके पुनि गय्रौ हो, शिलांग रथ सुखदाय॥ २॥
ममता बांदी मूकि के हो, सुमता ली समझाय।
सिद्ध बधु विलसै सदा हो, प्रणमैं धरमसी पाय॥ ३॥

२३ श्री पार्श्वनाथ स्तवन

राग—रामगिरी

मेरे मन मानी साहिब सेवा।
मीठी और न कोइ मिठाइ, मीठा और न मेवा ॥ १ ॥
आतम राम कली ज्यों उलसै, देखत दिनपति देवा।
लगन हमारी यासुं लागी, रागी ज्युं गज रेवा ॥ २ ॥
दूर न करिहुं पल भर दिल ते, स्थिर ज्युं मुदरी थेवा।
श्रीधर्मशी प्रभु पारस परसैं, लोह कनक कर लेवा ॥ ३ ॥

२४. श्री वीर जिन स्तवन

राग—वेलाउल

प्रभु तेरे वयण सुपियारे, सरस सुधा हुं ते सारे।
समवसरण मधि सुणि मधुर ध्वनि, बूझति परषद बारे ॥
सुनत सुनत सब जन्तु जन्म के, वैर विरोध विसारे ॥ १ ॥
अहो पैंतीस वचन के अतिशय, अचरज रूप अपारे।
प्रवचन वचन की रचना पसरत, अब ही पंचम आरे ॥ २ ॥
वीर की वाणी सबहिं सुहाणी, आवत बहु उपकारे।
धन धन साची एह धर्मशी, सब के काज सुधारे ॥ ३ ॥

२५. चौवीसी कलस

राग—धन्याश्री

चितधर श्री जिनवर चौवीसी ॥
प्रभु शुभ नाम मंत्र परसादे, कामित कामगवीसी ॥ १ ॥
रागबन्ध ध्रुपद रचनापैं, माहै ढाल मिली सी।
रोटली गहुं की सब राजी, मांगे स्वाद कुं मीसी ॥ २ ॥
सतरैसै इकहुत्तर गढ जेशल, जोरी यह सुजगीसी,
श्री संघ विजयहर्ष सुख साता, श्री धर्मसींह आशीशी ॥ ३ ॥

—:०:—

चौवीस जिन सवैया

आदि ही कौ तीर्थंकर, आदि ही कौ भिक्षाचर,

आदि राय आदि जिन न्यारौं नाम आदि आदि ।

पांचमों रिषभ नांम, पूरैं सब इच्छा कांम,

कांमधेनु कांमकुंभ कीने सब मादि मादि ।

मनसौ मिथ्यात मेट, भाव सौं जिणंद भेट,

पावौ ज्युं अनन्त सुख, गावो गुण वादि वादि ।

साची धर्म सीख धारि, आदिहि कुं सेवो यार,

आदि की दुहाई भाई जौ न बोलैं आदि आदि ॥१॥

राजा जितशत्रु संग रांणी विजया सुरंग,

खेलै पासा सार पै, तमासा कैसी वात हैं ।

आप भूप हारि आई, पटराणी जैंत पाई,

या तौ अधिकाई गर्भ अर्भ की हिंमात हैं ।

गुण को निपन्न नांम [१]धाम कौ [२]सहस्र धांम,

अैसो है अजित स्वामी, विश्व में विख्यात है ।

दूसरे जिनंद जैसो, दूसरौ न देव कोऊ,

ध्यावौ एक यौही धर्म सीख जो धरातु हैं ॥२॥

---

१ तेज २ सूर्य

संभव की अनुभौ धरि जातें मिटै ममता समता रस जागें।
पाप संताप मिटैं तब ही जब आपसुं आपही की लय लागें।
धरौ ध्रम सील लहौ निज लील, जहाँ गुण ग्यांन अनंत अथागें।
संभव संभव भाव भलैं भज, संभव सौं भव के भय भागैं ॥३॥
पिता कहैं नंदन सीख सुनौ, जु चलौ अभिनन्दन वन्दन हेतें।
नन्दन संवर को सुध संवर, [1]स्यंदन धारत हैं सिवखेतें।
कंद के फंद निकंदन दंदन, जा तनु कुन्दन की छवि देतें।
चंदन चंद सौहै जस उज्जल, चोथो जिनंद नमो सुभ चेतें ॥४॥
मेघकौ अंगज मेघ ज्युं गाजन, वांणि वखांणि सुजांण सुहाता।
चोतीस आपके हैं अतिसैं, अधिकैं इक एकही वांणी विख्याता।
जैन के बैन महाजग मंगल, न्याय तुं मंगल मंगला माता।
पीयूषई ईख धरौ ध्रम सीख, भजौहु सुमत्ति सुमत्ति कौ दाता ५
आज फल्यौ सुर को तरु अंगण, आज चिंतामणि सो कर आयौ
काम कौ कुंभ धर्यौ निज धाम, सुधा मनुं पांन कराइ धपायौ।
आज लह्यौ रसना रस कौ फल, जा दिन तें जिन कौ जस गायौ।
आज मुदेंही उदें ध्रम सील, भयौ पदमप्रभु साहिब पायौ ॥६॥
पारस फास प्रसंग कुं पाय, भयो है कला यस कंचन जाचौ।
तो भी मिटैं नहि छेदन भेदन, बंधन तातैं सब गुण काचौ।
जैन कुं भेट मिथ्यात कुं मेटि, ज्युं केवलज्ञांन ही कैं रंग राचौ।
न्याय मकार धर्यौ धुर नांम कैं, पारस हुं तें सुपारस साचौ ७
चंद की सोल कला सबही, वदि पक्षमें मंद दसा मढती हैं।
याकैं तो चौगुणी चौ दुगुणी[2] पुनि, वांन विसेष सदा वढती हैं।

१ संवर को रथ २ बहतर कला

ग्यांन प्रकास कहैं ध्रमदास, सदा जसवास दुनी पढती हैं।
लंछन चन्द करैं नित चाकरी, चंद्रप्रभू की कला चढती हैं ॥८॥

बीते हैं अनादि काल [1]योनि कैं जंजाल जाल,
चोरासी की फासी सहैं तूं भी ताकै मधिकौं।
पुण्य कैं प्रकार अवतार आयौ मांनव कैं,
पायौ हैं जिहाज सोउ जन्म जलनिधिकौ।
यारी समतासौं जोरि ममता सौं तांता तोरि,
आप ही धणी हैं तूं तौ आपणी ही रिधिकौ।
ध्यावौ धर्म सील ध्यांन पावौ ज्युं अनंत ग्यान,
सुविधि बतायौ असौ मारग सुविधि कौ ॥६॥

क्रोध विरोध सबे मिटि जात हैं, धारत हैं मति राग न धेखैं।
मूलतें [2]मात मिटात हैं घातक, आवत सम्यक भाव अलेखैं।
ताप सन्ताप मिटें भवके सब, [3]दंड दसा कबहुं नहि देखैं।
शीतल कौ मुख देखत ही मुझ, [4]हीतल शीतल होत विसेपैं ।१०।
पाय श्रेयांस जिणिंद के पाय, उपाय श्रेयांसि [5]अपाय मिटाए।
मातही विष्णु पिता पुनि विष्णु, बडे दुहुं के इक नाम बताए।
इक्ष्वाकु कें वंस वृपें अवतंस है, उच्चकै चन्द सबै ही सुहाए।
इग्यारमें साहिब की लही सेव, इग्यारमी रासि सबे ग्रह आए ११

१ चोरासीलाख जीवायोनि २ चार अनन्तानुबंधिया, तीन गोहिनी एवं सात
३ कलह ४ हियो ५ विघन

केईतौ [1]कैलास कौं रहास करि बैठि रहे,
काहू को तौ वास हैं बंबूल [2]बोधितरू कौ।
कोऊ [3]जल-राशि सेष नाग पास सोवत है,
काहू को रहास कामधेनु पूंछ खुरकौ।
कौऊ तौ अकास अवकास माहे भटकत,
कोऊ कहे मेरौ मेर में हूं धणी धुरकौ।
केवल प्रकासी अविनासी हैं अनैंसी ठौर,
तहाँ कीनौ वास वासपूज सिधपुरकौ ॥१२॥

विमल विसेप ग्यान विमल कला निधान,
विमल विचार सार सुद्ध साधु मगमें।
केते करे उपगार तारे भव्य नर नारि,
बूडते संसार वार अंबुधि अथग में।
एक तेरी करी सेव सब ही मनाए देव,
सबही के पग पैंठे एक गज पग में।
सुद्ध धर्म सील साथ, असो देव कौन आथ,
जैसौ है विमलनाथ तेरो जस जग मैं ॥१३॥

आदि के [4]अनंतानंत, सिद्ध सवे जीव मंत,
दूसरें निगोद जीव तीजें [5]वनरास हैं।

---

१ महादेव २ कृष्ण वासो बोधतरु, पीपल ३ समुद्र।
४ सिद्धा निगोय जीवा, वणस्सई काल पुग्गला चैव।
सव्वमलोगनहं पुण, तिवगाऊ केवल गामि ॥ २ ॥
५ वनस्पती

चौथो काल कौ सरूप, पंचमौं पूगल रूप।
छट्ठो भेद वेद तूं अलोक को आकास हैं।
इण के त्रिवर्ग मान, केवल दरस ग्यान,
अैसै धर्म सीख ध्यांन अंतर प्रकास हैं।
आप तूं अनंतनाथ, नाम है अरथ साथ,
पांचु ही अनंत कहे, ते भी तेरैं पास है।१४।
पुद्गल कैं संग सेती, पुद्गल ही आई मिलै,
ज्ञांन दृष्टि जगी नांहि लगी दृष्टि चर्म चर्म।
आतम अनंत ज्ञान सोई धर्म थान मान,
और ठौर दौर दौर, करं सोइ कर्म कर्म।
विश्व में रहे हैं व्याप, प्राणी करैं पुन्य पाप,
आपकुं न जानें आप, भूल्यौ फिरैं भर्म भर्म।
ध्यावौ प्रभु धर्मनाथ, 'शुद्ध धर्म शील साथ,
धर्म की दुहाई भाई, जौ न बोलें धर्म धर्म।१५।
छोरि षटखंड भार, चौसठि हजार नारि,
छन्नू कोरि गांम छोरि तोरि नेह तंत तंत।
वाजै वाजें तीन लाख, लाख लाख अभिलाप,
तजिकै चौरासी लाख, तेजी रथ दंति दंति।
चित्त में वेराग धारि, वित्त के भंडार छारि,
भीनौ उपशांत रस, कीनौ मोह अंत अंत।
याके गुण हैं अनन्त, धर्म्मसी कहैं रे संत।
संति की दुहाई भाई, जो न बोलैं संति संति ॥ १६ ॥

जल कै उपल जैसैं करणैं यथाप्रवृति,
कर्म थिति तुच्छ कैं परस देस ग्रंथ ग्रंथ।
कीनो है अपूरवकरण अनुभौ प्रमांन,
ज्ञांन कै मंथान सुं मिथ्यात मोह मंथ मंथ।
करण अनिवृति आयो, धर्मसील ध्यांन ध्यायौ।
पायौ हैं उदैं सरूप समकित कौ पंथ पंथ।

कुंथ कुंथ सम लीनौं, चक्रि पद हेय कीनौ,
कुंथ की दुहाई भाई, जो न बोलै कुंथ कुंथ ॥१७॥

सुदर्शन गात सुदर्शन तात है, देवीय मात माहा जसनांमी।
लह्यो अवतार भयौं चक्रधार, तिथंकर है पदवी दोइ पांमी।
जाकें प्रताप मिटैं सब ताप, जपौ जप ताप सुं अन्तरजामी।
तरौं भव पाथ[1] सदा सुख साथ, नमौ अरनाथ अढारम
सांमी ॥१८॥

जिनकें सुर कुंभसौ कुंभ पिता पुनि, मात प्रभावित पुन्यकी पोषी
सुपनें दस च्यार लहैं सुविचार, भयौ जिनको अवतार अदोषी
कितनें नृप तारि किए उपगार, लह्यौ सिव द्वार भवोदधि सोषी
मति को मतभेद कहौ कोऊ कैसें हुं, मल्लिकी चह्लि असल्लिकी
चोखी ॥१९॥

---

१ जल

मात के कूखि लह्यौ अवतार, भयौ व्रत्त कौ अभिलाख[1] अमंदो[2]
तात कियौ व्रत्त उच्छव देस में, सेस प्रजाहु यही परिछंदौ[3] ।
मोटी भई तप की महिमा मुनि-सुव्रत नाम कीयौ निज नंदौ ।
तीनहुं लोक कौ नाथ तिर्थंकर, वीसमौ वीस विसे करि
वंदौ ।।२०।।

आलस[1] मोह-कथा[2] अवहीलन,[3] गर्व[4] [5]प्रमाद निद्रां[6]
भय[7] भ्रांमी।
तद्भनता[8] पुनि सोग[9] अग्यांन[10], विषय[11] कुतूहल[12] रामति
[13]कांमी ।
त्याग छ सातक घातक काठिए, धारि भली ध्रमसीखमु धामी ।
अनाथकौ नाथ नमौ नमिनाथ, सनाथ किए सबही सिर
नांमी ।।२१।।

राजीमती सती सेती नवां भवांहु कौ प्रेम
तोस्यौ पुनि जोस्यो भाव प्रेम न अप्रेम प्रेम ।
अैसौ महा ब्रह्मज्ञानी, शुद्ध धर्म्मशील ध्यानी,
यासौ निकलंक कोहैं, मोहैं सम हेम हेम ।
धन्य सिवादेवी मात, जाकें सोलै अंग जात,
महा सत्य दृढ़ शुभ रिष्ट पांचौ नेमि नेमि ।
छट्ठौ रहनेमि नांमी, तारे सब नेमि स्वांमी,
नेमिकी दुहाई भाई, जो न बोलैं नेमिनेमि ।। २२ ।।

देवलोक दसमें तें आप अवतार आयो,
पायो धुरि दसमी जन्म पोस मास माम ।

१ डोहलो २ अधिको ३ परिवार ।

काासी देसवासी पुरी दुरी नांहि वांनारसी,
आससेन पिता, माता वामा जसवास वास।
जैंन धर्मसींह जागैं, पाप दुख पील भागैं,
जाकैं आगैं देवनिके, देव भए दास दास।
पूरैं सब ही की आस, पदमा निवास पास,
पास की दुहाई भाई, जो न बोलैं पास पास ॥ २३ ॥

गुण कौ गंभीर खीर, सोनैंसो सरीर वीर,
अैसो देव महावीर, धीरनि में धीर धीर।
दान को उदौ उदीर दुनी कीनी दवा गीर,
दीनौ सवा लाखहु कौ, देवदुष चीर चीर।
मारे मोह द्रोह मीर ग्यांनी गुने गंगनीर,
तारे तकसीर वारें, पायौ भवतीर तीर।
साचौ जैनधर्म सीर वीर में वीराधिवीर,
वीर की दुहाई भाई, जो न बोलै वीर वीर ॥ २४ ॥

साधु भला दस च्यार हजार, हजार छतीस सु साधवी वंदौ।
गुणसट्ठि सहस्स सिरैं लख श्रावक, श्रावकणी दुगुणी दुति चंदौ
चौवीसमें जिनराज कौ राज, विराजत आज सबैं सुखकंदौ।
श्रीधमसी कहैं वीरजिणिंदकौ, शासनधर्म्म सदा चिरनंदौ॥२५॥

इति चौवीस तीर्थंकरां रा सवैया संपूर्ण ॥ पं० मामजी लिखतं बीकानेर मध्ये संवत् १७८१ वर्षे मिती आसाढ़ सुदि ६ दिने।

—:०:—

नवकार छंद

कामित संपय करणं, तम भर हरणं सहस्स कर किरणं।
पणमसि सद्गुरू चरणं, वरणिस नवकार गुण वरणं ॥ १ ॥
वरणिस नवकारं सहु तत सारं, एहिज आतम आधारं।
अनादि अपारं इण संसारं, जिन शाशन में जय वारं ॥
इण पंचम आरं इण अवतारं, श्रावक कुल लहि श्रीकारं।
सहु मंत्रे सारं सब सुखकारं, नित चित धारं नवकारं ॥ २ ॥
सहु में सिरदारं, अगम अपारं, अक्षर में जिम ॐकारं।
ध्याने चित धारं विषमी वारं, अड़वढ़ियां नें आधारं ॥
राखे इकतारं अति हितकारं, परभव पण ए उद्धारं ॥स०॥ ३ ॥

पद पंच मझारं पंच प्रकारं, पंच परमेष्ठि अवतारं।
वरतें इण वारं केवल धारं, बोल्या अरिहंत गुण बारं ॥
कर्म अष्ट क्षयकारं मुगति मझारं, सिद्धगुण आठे संभारं ॥स०॥४॥

गुण दुगुण अढारं धुरि गणधारं, आचारज शुभ आचारं।
उवझाय उदारं सुत्र सुधारं, गुण पचवीसे आगारं ॥
भल तप भंडारं ए अणगारं, इण गुण दउढा अढारं ॥सहु०॥५॥

शिव नाम कुमारं, कष्ट मझारं, ठग वसि पड़ियो इकतारं।
तिहांगुण नवकारं खड़्ग प्रहारं, नांखि कड़ाहे निरधारं ॥
नलि कीध तयारं सीधो सारं, सोवन पुरिसौ श्रीकारं ॥सहु०॥६॥

पति कीध विचारं जिन मति नारं, श्रीमति मारवीय धारं ।
घटथी पुफभारं आणि अबारं, तिय किय घट कर संचारं ॥
फीटी अहि फारं, हुवउ हारं, धन ए जिनमत जप धारं ॥स०॥७॥

वलि विणठी वारं सांझ सवारं, दंडाकारं कांतारं ।
शांत्रव सिरकारं सिंह शिकारं, दावोदारं दरबारं ॥
गिण बैठि वेगारं कारागारं जय सहु ठामें जयकारं ॥सहु०॥८॥

विणजे व्यापारं वलि विवहारं, लक्ष्मी आप वहै लारं ।
परिघल परिवारं पुण्य प्रकारं, बोले बहु जस बाजारं ॥
वाहं इम वारं कुशल करारं, करे सहु उपरि कण वारं ॥सहु०॥६॥
इम बहु अधिकारं गुण विस्तारं, पामें कहतां कुण पारं ।
धुरि ॐ ह्रीं धारं सौ हजारं, जपतां हुवे जय जेतारं ॥
पूरब दस च्यारं मूत्रे मारं. दोउं भवसुख दातारं ॥सहु०॥१०॥

नित चित धरि नवकार, जप्यां दुख दूरे जावे ।
नित चित धरि नवकार, परघल संपति सुख पावै ।
नित चित धरि नवकार, शत्रु भय न गिणे सांकौ ।
नित चित धरि नवकार, बाल पिण न हुवे बांकौ ।
तिम रोग शोक चिन्ता टलै, संकट जावै दूर सही ।
हुवै सकल सुख विजयहरख, कवि धर्मशी उवझाय कही ॥११॥

—:०:०:—

ऋषभदेव स्तवन

ढाल—सफल संसारनी

त्रिभुवन नायक ऋषभ जिन ताहरौ,
मुजस सांभलि मन ऊमह्यौ माहरौ।
तारण तरण नहीं को तो सारीखो,
पुहवि सहु सोभि नं ए लह्यौ पारिखौ ॥१॥
बलि सुणौ आदिजी माहरी वीनति,
तुम्ह सेवा तिका लहीय निधि तीन ती।
त्रिकरण सुद्ध इकतार तोसुं कीयौ,
हिव विशेषं करी हरखियौ मुझ हियौ ॥२॥
भगवन माहरै तुंहिज साहिब भलौ,
तुं किम लेखवं नहीय मोसु तलौ॥
विरुद धारो बिया चाल बीजी चलौ।
पूछस्यूं हुं पिण जाब पकड़ी पलौ ॥३॥

धरिय महुनी दया प्रथम महाव्रत धरौ,
अरि हणी नाम अरिहंत किम आदरौ।
व्रत बीयौ धरी मृपावाद तजियौ वली,
तुं हिज कहै बात अणदीठ अणसांभली॥४॥
दाखवै कांइ लीजै नहीं अणदियै,
लालची तुं हिज जिण तिण तणा गुण लियै।

जाणि नववाड़ि शुद्ध शीलव्रत जोगवै,
पंच अंतराय हणि भोग सहु भोगवै ॥५॥

धरि परिग्रह तजी कीध इच्छा घणी,
सहस चौरासी शिष्य लाख त्रण शिष्यणी।
मुखि कहे कोई सेवक नहीं माहरे,
अणहुंतै कोड़ि इक देव सेवा करै ॥६॥

नयण निरखौ नहीं श्रवण ना सांभलौ,
अंश पिण जीभ सुं स्वाद नां अटकलौ।
किणही इन्द्रिय सुं कांइ जाणौ नहीं,
तोई सर्वज्ञ रौ विरुद धारौ सही ॥७॥

क्रोध अलघौ करी कीध कोमल हियौ,
किण विधैं काम रिपु हणिय दहवट कियौ।
कीजं नहीं मान उपदेश एहवा कही,
नेट तुं किणही नै शीश नामें नहीं ॥८॥

कपट नहीं कोय तौ भगत किम भोलवौ,
अवगुण पारका देखि किम ओलवौ।
किणहि वातें कदे लोभ जो ना करौ,
धरिय त्रण रतन नै केम जतने धरौ ॥९॥

भिक्खु अणगार निज नाम मन शुद्ध भणौ,
तीन गढ़ छत्र त्रिण राज त्रिभुवन तणौ।
वचन गुप्ते वली नाम वाचंयमा,
योजन वाणि सुं गाजै च्यारुं गमा ॥१०॥

कनक आसण ग्रहै कहै अकिंचणा,
बींजवै चमर नै वलिय निर बींजणा।
समिती तीनज धरौ तौ इ साचा यति,
पास राखौ नहीं ओघौ नै मुंहपति ॥११॥
पर भणी कहौ मत थाओ परमाद्रिया,
कांइ राइ प्रायश्चित आप न करो क्रिया।
जाव हसावरा जुगति सुं जांणस्यौ,
आखर महिर मो ऊपर आणिस्यौ ॥१२॥
बिहुं मुखे बोलतो लोक निन्दा लहे,
केवली होइ नै चिहुं मुखे तुं कहै।
भला भला भव्य तोइ साच करि सद्दहै,
जम तणी रात जाया तिके जम लहे ॥१३॥
प्रकृति म्हारी इसी काइ छै पापिणी,
ओछी अधिकी नही ना सकुं आपणी।
वडिय ताहरी क्षमा वात तिण सहु वणी,
ध्यान हिव ताहरौ तुं हिज माथै धणी ॥१४॥
अवगुण माहरा ते सहु अवगणी,
भगवन देव सेवक करो मो भणी।
स्वामी सेव्यां विजयहर्ष शोभा घणी,
वृद्धि वलि थाय जिन धर्मवर्द्धन तणी ॥१५॥

॥ कलश ॥

इम विलसी श्रीअरिहंत पदवी, धन्य जगगुरु जगधणी,
हिव सिद्ध हुवा आपरूपी जाव न दीये पर भणी।
इण गुण प्रशंसा मांहि निंदा काइ जाणौ आपणी,
आपजो अमनै उरि एहिज अरज श्री धर्मशी तणी १६॥

:—:—:

शत्रुंजय वृहत् स्तवन

(आलोयणा पचीसी)

सेत्रुंजे नायक वीनति सांभलौ, श्री रिषहेसरु स्वाम ।
दीनदयाल तुम्हाने दाखिवुं, अंतर बीतग आम ॥ सै० ॥१॥

नटवानी परि भव भव नाचता, विविध वणाया वेश ।
कर्म वसे करि भमते मैं किया, केइ पाप किलेश ॥ सै० ॥२॥

केवलज्ञानी तुम्ह आगल किसुं, देखावीजै दाख ।
पिण आलोयण लीजै आपणी, श्री अरिहंतनी साख ॥सै०॥३॥

पांप टलै नहीं आलोयण पखै, कहै ज्ञानी सहु कोय ।
परही मूक्यां सिरनी पोटली, हलवी गावड़ी होय ॥ सै० ॥४॥

अरिहंत देव सुसाधु गुरू इसा, जैन धरम तत्त जाण ।
समकित साचौ एनवि सदह्यौ, अधिक मिथ्यामति आण ॥सै०॥५॥

पहिले आश्रव हिंसा प्राण नी, कीधी केइ प्रकार ।
जयणा कायनी जीवनी, पामिस किम भव पार ॥ सै० ॥६॥

कूड़ कपट कलि विकलां कलवी, कीजइ छै केइ काम ।
मृषावाद पगोपग मोकलौ, सी गति थासी स्वाम ॥ सै० ॥७॥

अधिको लीजै ओछो दीजिये, रीति इसी दिन रात ।
अदत्तादान घणा लागै इसा, तरिसुं किण परि तात ॥ सै० ॥८॥

तीन विधेइ सुर नर त्रियंच ना, मैथुन सुं मन लाय ।
काम विटंबन केम कही सकुं, जाणै तुं जिनराय ॥ सै० ॥६॥

केइ उपाय करी मेलण करूं, परिग्रह विविध प्रकार।
विरति करूं पिण मन न रहै वलि,
तौकिम हुवै भव पार (निस्तार) ॥सै०॥१०॥

इन्द्रिय पांचे आप मुराहिदा, अधिक करे उन्माद।
संवर भाव न आवै सर्वथा, पड़्यो जे प्रमाद ॥ सै० ॥११॥

कोइ स्वभावे रेकारो कहै, चटकी तुरत चढंत।
क्रोध विरोध वधारूं केतला, आवै किम भव अंत ॥सै०॥१२॥

आपणा जाणपणा नैं आगलैं, गिणुं न केहनैं गान।
विनय वेयावच्च नहींय विवेकना,
अति मोटो अभिमान ॥सै०॥१३॥

मीठी मीठी बात कहुं मुखे, जीजी करे मिलि जाइ।
पाइ पमारू पैसी पेट में, माया सगी ज्युं माइ ॥सै०॥१४॥

म्हारो म्हारो करि धन मेलवुं, लोभ वसे लयलीन।
नरक तणां घर त्रुंछुं नव नवा, इण में मेख न मीन॥सै०॥१५॥

मन तौ खिण पिण वस नहीं म्हारौ, झामो वचन झखाल।
काय चपलता कहियें केतली, जासी किम भव जाल॥सै०॥१६॥

अछता पण गुण वर्णुं आपणा, परनिन्दा परकाश।
अवर अदेखो आणुं अति घणौ, गहवौ मूल अभ्यास॥सै०॥१७॥

राजकथादिक विकथा राग सुं, वारु कहुंअ वणाय।
ममता धरि न करी मन शुद्धसुं, सूत्र सिद्धान्त सझाय ॥१८॥

काणौ आंधौ टूंटौ कूबड़ौ, देखि हंसूं निशदीश।
आखिर कर्म उदय ते आविस्यै, जाणे ते जगदीश ॥१६॥सै०॥

पनरै कर्मादान न परिहस्या, आदर्या पाप अठार ।
निस्तारौ बीजुं थासै नहीं, तुं हिव मुझ नै तार ॥२०॥सै०॥
जीवायोनि चौरासी लाख जे, दीधा तेहनै दुःख ।
वाद नै वास भेलो कहो क्युं बणै, मुझ नै दे हिव मुक्ख ॥२१॥सै०॥
जाण अजाण किया जिकै, सहु भमतां संसार ।
देइ मन शुद्ध मिच्छामिदुक्कड़ं, आलोऊं बार बार ॥२२॥सै०॥
तारण तरण विरुद छैं ताहरौ, अशरण शरण आधार ।
आयौ आश धरी तुझ आगलै, समकित दे मुझ सार ॥२३॥सै०॥
समकित ताहरौ आयां साहिबां, परहा जायै पाप ।
राति अंधारो किम करि रहि सकै, उगैं सूरज आप ॥२४॥सै०॥
इम सकल सुखकर विमल गिरिवर आदि जिनवर आगलै ।
आलोवतां मनशुद्ध इण विधि सफल सहु आशा फलै ॥
शुभ गच्छ खरतर सुगुरु वाचक विजयहर्ष वखाणए ।
उवझाय कहै श्रीधर्मवर्द्धन धर्म ध्यान प्रमाणए ॥२५॥

शत्रुञ्जय तीर्थ स्तवन

तीर्थ सैत्रुँजे जी रहिवा मन रंजे,
(सेवकना) भव भय भंजै मल पातक मंजरे ॥१॥
सिद्धाचल सीमैं जी यात्रा करि जीमें,
निश्चय इन नीमैजी भमय न भव भीमइ ॥२॥

नयणे करि निरखो जी, हियडै वलि हरखौ ।
सत्रुंजय सरीखो जी, पुहवि न कौ परखौ ॥ ३ ॥
मद मच्छर छोड़ी जी, जिन सुं मन जोडी ।
केइ सीधा कोडी जी, ठावां इण ठोड़ी ॥ ४ ॥
सूत्र सिद्धान्ते जी, भाख्यो भगवंते ।
अनादि अनंते जी, भेटउ तजि भ्रंते ॥ ५ ॥
भवसमुद्र तिराजैं जी, परवत नी पाजै ।
जाण्यो चढीय जिहाजैं जी, सिवपुर नै साजैं ॥६॥
सिद्धक्षेत्र समीपै जी, पाप न को छीपै ।
देहरा अति दीपै जी, जग चखने जीपै ॥ ७ ॥
जिण पहिलउ जांणी जी, प्रतिमा पहिचाणी ।
आसति बहु आणी जी, पूजौ भवि प्राणी ॥ ८ ॥
बावन देहरियां जी, परिदखणा परियां ।
वंदउ त्रिण वरियां जी, धर्म ध्यानइ धरियां ॥ ९ ॥
रायणि तलि पगला जी, आदि तणा अगला ।
संघ वांदै सगला जी, धरम तणा ढिगला ॥ १० ॥
शिवबारी दिस ही जी, वलि खरतरवसही ।
अदबुद ऊलसही जी, सबला बिंब सही ॥ ११ ॥
सूर कुंड सवाइ जी, देख्या सुखदाइ ।
चेलणा[1] तलाइ जी, उलकाभूल आई ॥ १२ ॥

---

१ चंदणा

सिद्धवड़हि सदाई जी, दीपै सुर दाई।
प्रगटी पुण्याई जी, जिण यात्रा पाई ॥ १३ ॥
सहिनाण संभार्या जी, श्री धर्मसी धार्या।
जिण आइ जुहार्या जी, तिण आतम तार्या ॥ १४ ॥

शत्रुंजय गीत

सरब पूरब सुकृत तीये किया सफल,
लाभ सहु लाभ में अधिक लीया।
सफल सहु तीरथां सिरे सैंत्रुज री,
यात्रा कीधी तियां धन्न जीया ॥ १ ॥
सुजस परकासता, मिले संघ सासता,
शास्त्रे सासता विरुद सुणिजे।
ऋषभ जिणराज पुंडरीक गिरि राजीयो,
भेटिया सार अवतार भणिजे ॥ २ ॥
कांकरैं कांकरैं कोडि कोडी किता,
साधु शुभ ध्यान इण थान सीधा।
साच सिद्धक्षेत्र शुद्ध चेत सु सेवतां,
कीध दरसण नयन सफल कीधा ॥ ३ ॥

तासु दुरगति न हैं नरक त्रियंच री,
सुगति सुर नर लहै सुगति सारी।
विमल आतम तिको विमलगिरि निरखसी,
धनो धन श्री धर्मसील धारी ॥ ४ ॥

सिद्धाचल महिमा वर्णन

रतन में जैसे हीर नीरनि में गंगा नीर,
फूलनि की जाति में अमूल फूल केतकी।
सब ही उद्योत में उद्योत ज्युं प्रद्योतन को,
ज्योति में सुज्योति ज्युं सुहै है ज्योति नेतकी ॥५॥
सब ही सुशीख में सुधर्म सीख हेत की है,
तेजनि तूरिने टेक राखी जैसे रेतकी।
योजन पैंताल लक्ष सिद्धनिके खेत है पैं,
सेत्रुंजे विशेष रेख राखी सिद्धखेत की ॥५॥

विमलगिरि स्तवन

राग—मल्हार

विमलगिरि क्युं न भये हम मोर।
सिद्धवड रायण रूंख की शाखा, झूलत करत झकोर।वि०।१।
आवत संघ रचावत अरचा, गावत धुनि घन घोर।
हम भी छत्र कला करि हरखत, कटते कर्म कठोर।वि०।२।
मूरति देख सदा उल्हसै मन, जैसे चंद चकोर।
श्री रिषहेसर सुं श्रीधर्मसी, करत अरज कर जोर। वि०। ३।

धुलेवा ऋषभदेव छन्द

दोहा

सत्य गुरू कहि सुगुर रा, प्रणमुं मन शुद्ध पाय।
हुता मूढ ते पिण हुआ, पण्डित जासु पसाय ॥ १ ॥
सेवा लहिजै सुगुर री, पुण्य उदै परतख।
ज्योति अधिक दीधी जिणैं, चावी तीजी चख ॥ २ ॥
जिकौ न पूरौ जांणतौ, ठठौ मींडो ठोठ।
वाचै अविरल वाणी सं, पुस्तक भरिया पोठ ॥ ३ ॥
दीपक जिण हाथै दियै, गुरु बतायौ ज्ञान।
धरम करम मांहे धुरैं, धरिजइ तिणरौ ध्यान ॥ ४ ॥
प्रथम नमी गुरु जिण प्रथम, गांउ तसु गुण ग्राम।
कविजन कंठ श्रृंगार कुं, दीपै मोतीदाम ॥ ५ ॥

मोतीदाम छन्द

दिपें गुण निम्मल मुत्तियदाम,
सेवुँ मन शुद्ध तिको हिज स्वाम।
सुरासुर सर्व करैं जसु सेव,
दियै सुख वंछित ऋषभदेव ॥ ६ ॥
केइ जगि देवल देवां कोडि,
हुवै नहीं कोइ इयें री होडि।

नमैं नर नारी सको नितमेव,
दियैं सुख वंछित ऋषभदेव ॥ ७ ॥

पूरैं प्रभु आस सदा परतख,
वदां सुरकुंभ किना सुरवृक्ष।
बहु जिण दान दिपाया बेव,
दियै सुख वंछित ऋषभदेव ॥ ८ ॥

छती छती देखि पवन छतीस,
जपै सहु ध्यावै जेम जतीस।
भजें इक चित्त लह्यो जिण भेव,
दियैं सुख वंछित ऋषभदेव ॥ ६ ॥

खलकां मालम देश खडग्ग,
जपै ए तीरथ तेम अडिग।
धुनो धन धन्नहि गाम धुलेव,
दियैं सुख वंछित ऋषभदेव ॥ १० ॥

उदैपुर हुती कोस अढार, ए ओ वाट विषम अपार ;
सल˙ ˙˙˙˙˙ ˙गात्र सजेव, दियै सुख वंछित ऋषभदेव ॥ ११ ॥
पुलै पगवट्ट उजाड पहाड़, दहुं दिशि केइ कराड़ दराड़,
झराड़ झांगी रा झाड झुकेव, दियै सुख वंछित ऋषभदेव ॥१२॥
षुढांणा खालां नालां खाड, चिहुं दिसि ताकै चोर चराड़।
निकेवल जात्र्यां नाम न लेव, दियै सुख वंछित ऋषभदेव ॥१३॥
किता केइ मारग मांहि कलेस, आवै केइ यात्री लोक अशेष।
सरै छै काम तियां सतमेव, दीयै सुख वंछित ऋषभदेव ॥१४॥

दुर हु देवल शोभा देख, वदै वाह वाह प्रकाश विशेष ।
रह्यो रवि भूमि विमान रवेव, दीयैं सुख वंछित ऋषभदेव १५
तिलक्का तोरण थोरण तंत, भला चित्त चोरण कोरण मंत ।
बहुं हुं बखाण किताक अवेव, दीयै सुख वंछित ऋषभदेव ।१६।
जिणेसर बिंब झिगामिग ज्योति, अहोरति आठुं जाम उदोत ।
विजोडी देहरी बावन वेव, दीयैं सुख वंछित ऋषभदेव ।।१७।।
घसीजै केसर चंदन घोल, रचीजै पूज सदा रंग रोल ।
अवल्ले फूले धूप उखेव, दीयैं सुख वंछित ऋषभदेव ।।१८।।
जाणौं तिण वेला जोवों जाय, भला केइ जात्री आइ भराय ।
हजारै गानै लाभे हेव, दीयैं सुख वंछित ऋषभदेव ।। १६
रहै नहीं नामै कोई रोग, वली सहु जायै सोग वियोग ।
सदा हुवै भोग संयोग सवेव, दीयैं सुख वंछित ऋषभदेव ।२०।
सही सहु तीरथ मैं सिरदार, इणैं इहरत्त परत्त उधार ।
टली अन्तराय भली सहु टेव, दीयैं सुख वंछित ऋषभदेव ।२१।

कलश

अलग टली अंतराय, प्रगट सफली पुन्याइ ।
गणधर गुरू गच्छराज, सूरि जिणचन्द सवाइ ।।
गच्छ खरत्तर गहगाट संवत सतरै से सट्ठिम, (१७६०)
वसंत ऋते वैसाख, अवल उजवाली अट्ठम ।।
जातरा कीध सखरी जुगति, बडा साध साथैं वडिम ।
सुख 'विजयहरष' जिण सानिधै, आखै श्रीधर्मसीह इम ।। २२ ।।

:—※—:

श्री शांति जिन स्तवन

सेवो भाई सेवो भाई शांति जिन सेव रे।
दूजो नहीं कोइ ऐसो देव रे ॥ १ ॥
क्रोध विरोध भर्या सुर केवि रे।
निकलंक निरदोष यहु नित मेव रे ॥ २ ॥
हाथ रतन आयो छै हेव रे।
काच तजो पाच गहौ परखेव रे ॥ ३ ॥
केशर चंदन पूज करेव रे।
लाहो नरभव इह विध लेव रे ॥ ४॥
कहै ध्रमसी जोडि कर बेव रे।
तुझ सेवा मुझ याहीज टेव रे ॥ ५ ॥

चन्द्रपुरी शांति जिन स्तवन

जग नायक जिनवर पुहवी मांहे प्रत्यक्ष।
सोलम संतीसर सुखदायक कल्पवृक्ष ॥
जसु यात्र करेवा लोक मिले तिहां लक्ष।
दरसण देखत ही आणंद पावै अक्ष ॥१॥
दों दों दों दप मप द्राग्डिदिक दमके मृदंग।
झण रण रण झें झें झाझरि झमकित झङ्ग ॥

ठम ठम पाय ठमकति घमकति घूघरि संग ।
ताकिटि ताकिट थेंइ थेइ नृत्य करत मन रंग ॥२॥
केसरि करि पूजत छीजत अशुभ जे कर्म ।
भावन भावंता भांजै भव नौ भर्म ॥
नित नाम जपै जे निजमन करि अति नर्म ।
हरखै ते पहुंचे मुगति रमणि ने हर्म ॥३॥

छाक्यो रहे छहुं रितु मस्त महा मतवाल ।
हाथी झरणा जिम झरतौ मद असराल ॥
परवत सम सबलौ घूठ पड्यो सुन्डाल ।
ततखिण जिण नामें अंस करै नहीं आल ॥४॥

हुंकारव करतौ, वाघ महा विकराल ।
नहरां अति तीक्ष्ण, जिम करवत दंताल ॥
पुछा छोट करतौ फदकल्यै तीजी फाल ।
प्रभु नाम प्रसादै, सींह भगै ज्युं स्याल ॥५॥

दावानल बलतो झलहल नीकले झाल ।
बहु वृक्ष सघन वन बलै पसु पंखी बाल ॥
किण हीक कारण नर आयौ अग्नि विचाल ।
जिण नांम जलैं अगि ओल्हायैं तत्काल ॥६॥

फुं फुं फण करतौ धरतौ कोप कराल ।
रहै आंख्या राती काजल सम महाकाल ॥
गहवौ उरंडतौ देखी दो जीहाल ।
तुझ नांमै साँप ते जांणे फूल री माल ॥७॥

सबलै संग्रामै भिड़ंता भूप भूपाल।
अति राता ताता वहै गोला हथनाल ॥
खडकै तलवारां खलकैं रुधिरां खाल।
तिहां पिण जिण नामै न हुवै बांको बाल ॥८॥
दरीयो जल भरीयो ऊंडो जेह अपार।
उछलतां तरंगा सुणि जलधर गरजार ॥
वाहण बिचि लिवि पिवि बूडण नै हुवो त्यार।
ते पिण जिण नामै पहुचै पेले वार ॥ ६ ॥
गड गुंबड फोडी हीया होडी तेह।
खैन खाजनै खासी हरस सहित जन जेह ॥
सोलह कोढादिक उपज्या रोग अछेह।
प्रभु पद फरसत ही दिनकर दुति हुइ देह ॥१०॥
जन सांकल जडीयौ पडीयौ बन्दीखाण।
भय आठं भांजै न रहे पलक प्रमाण ॥
सिर संती जिणेसर सेवत ही सुख खांण।
इणभव लहै लीला परभव पद निरवाण ॥११॥

कलश

संवत्त सतरैं बरस वीसैं मास मिगसर जाण ए।
चन्द्रापुरी थी संघ चाल्यौ, चढी जात्र प्रमाण ए॥
गणि विजयहर्ष पदारविंदे, भ्रमर ओपम आण ए।।
कहै 'धर्मवर्द्धन' धर्मवद्धन, संघ कुशल कल्याण ए ॥१२॥

—:o:—

॥ नैमि राजिमती बारहमासा ॥

दिल शुद्ध प्रणमूं नेमि जिनेसर परमदयाल,
रोक्या जीव तें मूक्या तोरण थी रथ वाल।
राजिमति सती नेह वशै किय विविध विलाप,
तौ पिण तसु तणु नाइ सक्यो विरहानल ताप ॥१॥
श्रावण मास में विरहणि जामनी जाम न जात,
सजि आडंबर जंबर दामिणी मिले वरसात।
मुझ वर गयो हरिणाखी नाखी दीध निरास,
विल विलै राजुल आंखीय भरि भरि नाखी निरास ॥२॥
भादव में गयो यादव मुझ हिया दव लाय।
पांवस जल पड़ताल पडै पिण ते न बुझाय।
मांडै मोर झिंगोर करै पपियो पीउ पीउ।
पीउ विरहै थइ पीड़ ते जाणे मांहरौ जीव ॥३॥
आसू में सासूनौ अंगज ते गया अंग जलाय।
चंद नी चांदणी देखत चौ गुणी पीड़ज थाय।
निरमल सरवर भरीया नीझरणे झरैं नीर।
नयणां नीर तिये पिण मांड्यौ जिण सुं सीर ॥४॥
माती खेती पाती नीपनी काती मास।
कातीय विरहणि छाती में काती वहैं नहीं जास।
दीप दीवालीय वलिय सुहालिय नैं पकवान।
खलक रचें पिण मुझ नैं न रूचै खान नैं पान ॥५॥

मगसिर मासि गांमातरैं मगसिर हुआ लोग।
हुं पिण छोडी मग सिरनी हिवैं लेस्यु जोग।
घरैं सहु निज मंदिर मैं खल खेत्र ना धान।
हुं पिण धरिस निश्चल मन में नेमि ध्यान ॥६॥
पोस में ओस पड़े निस रूदन करे वनराय।
दोस विना पिउ रोस करैं तै सोस ज थाय।
धूंहरि पडय अथाह ते विरहानल नो धूम।
वेगा जावौ कोइ पिघलावौ प्रिय मन मूंम ॥७॥
माह मैं माहट मांड्यो मेह ते आहट रूंस।
तौ पिण माहरैं नाह न पूरी माहरी हुंस।
जो कोई आइ बधाइ द्यै आयौ पति जदुनाथ।
नाथ धरूं इक नाक नी आपुं सगली आथि ॥८॥
फागुन फरहरै वात प्रभात नौ सीत अपार।
नाह सुं फाग रमैं बहु राग सुहागणि नारि।
चंग अनै मुख चंग बजावै उडावै गुलाल।
लालन जे तजी ललना तिण कौ कवण हवाल ॥६॥
जे तरू झाड़िया मोर्या ते तरु चेतर मास।
वास सुवास प्रकासीय मधु करै रे विलास।
बोले रे कागा आगा जागा बेसीरे ऊंच।
पावुं पीउ तौ तुझ भरावुं चुर मैं चूंच ॥१०॥
मौरीय दाख वैंसाखै पसरीय वेल प्रलंब।
ऊंचिय साख विलंबिय, कोयल कुहकै अंब।
भौगवैं रवि संक्रात वसंत में मीन नैं मेख।
तौ पिण मुझ पीउ तजि गयौ इण में मीन न मेख ॥११॥
जल करै सीतल हीयतल जेठ मै ए ठहराय।

जो ठिक जोतषी ते कहौ कदि मिलै जेठ कौ भाय ।
यादव कुल ना सेठ नैं जेठ कहौ समझाय ।
नांणी द्रेठ नै हेठते मोमैं कवण अन्याय ॥१२॥
वलीय कौलाहणि काढ़ि आसाढ़ में वलियौ मेह ।
नेमजी नाह विसार्यो (न सार्यो) नव भव नेह ।
मुझ नै विलखत छोड़ी वहि गया बारै मास ।
पिण हु न तजुं एह नैं वसिस्यां एकण वास ॥१३॥
धन धन राजल साज ले दीक्षा नौ तजि धाम ।
केवल लहिनै पहिली हिज पहुंती शिव ठाम ।
जोगीसर नेमीसर सिव सुख विलसैं सार ।
श्री धर्मसीह कहे ध्यान धर्यां सुख है श्रीकार ॥१४॥

॥ नेमि राजिमती बारहमासा ॥

सखी री ऋतु आइ सावण की, घुररंत घटा बहु घन की ।
वार्नी सुनि सुनि पपीहनि की,
निशि जायैं क्युं बिरहनि की हो लाल ॥१॥
राजुल वालंभ जपती- इकतारी नेमि सु करती ।
धन सील रतन नै धरती, तिम विरह करि तनु तपती हो लाल ।
सखी री भादु मैं भर बरसाला, खलकै परनाल नै खाला ।
बिजुरी चमकत विकराला,
जादु विनु मोहि जंजाला हो लाल । रा० २ ।
सखी री आसू सब आसा धरीया, निरमल जल सु सर भरीयां ।
रात्यौं शशि किरण पसरीया,
पिउ विनु क्यों जात है घरीयां हो लाल ।३।

सखी री करसणीयां फलियौ काती, निपजी सब खेती पाती।
हिल मिलि सब करत है बाती,
पीउ विणु मोहि फाटत छाती हो लाल ।४।
सखी री अब मिगसर महिनौ आयौ, सब ही कौ नेह सवायौ।
भोगीजन के मन भायौ,
गयौ छोरि शिवादे को जायौ हो लाल ॥ रा० ५ ॥
सखी री आयौ महिनो अब पोसो, रंगै रमै सहु तजि रोसो।
दीनौ मुझ जादव दोषो,
सबलौ तिण कारणि सोसो हो लाल ॥ रा० ६ ॥
सखी री अति शीत परतु है माहें, सब सोवत मांहोमांहे।
देही मुझ विरह की दाहें,
न मिटै विनु आयें नाहे हो लाल ।रा०७।
सखी री फागुण पकवान नैं पोली, भरि लाल गुलाल की झोली।
खेले नर नारी की टोली,
पिउ विन में न रमें होली हो लाल ।रा०८।
सखी री सब मिलि नर नारी संतो, चैतै धरि हरष हसंतौ।
खेलैं अति ही उलसंतौ,
वालंभ विनु कैसो वसंतौ हो लाल । रा०९ ।
सखी री कोइल बोले वैशाखें, भरता करता बै साखें।
पहिलें कीनो आसाखें,
दूजें आगै अब साखें हो लाल । रा० १०।
सखी री जल शीतल पीजै जेठो, पीउ नायौ अजहु बेठौ।
जाण्यौ कुण करिहै वेठौ,
नाणी मुझ नजरां हेठौ हो लाल ।रा०११।

सखी री आयो अब मास असाढ़ो,
कालाहणि ऊंची काढ़ो।
वालंम हित बन्धन वाढ़ो,
वैरागै मन कियौ गाढ़ो हो लाल।रा०१२।
सखी री मिलि अरज करत है आली,
कहा वात करत है काली।
नवलौ कोइ कुमर निहाली,
तुम परणावां ततकाली हो लाल। रा० १३।
सखी री अब राजुल बोली एमौ,
इण भव मुझ प्रीतम नेमो।
दूजौ परणण अब नियमौ,
न तजु नवभव कौ प्रेमौ हो लाल ॥१४॥
सखी री योगी नहीं नेम सौ कोई,
राजल सम नारि न होइ।
संसारी दुख सब खोई,
सिवपुरी सुख विलसैं दोइ हो लाल ॥रा० १५॥
सखी री मन धारे बारेमासा,
आंणौ वैराग उलासा।
गुरू विजयहरष जस वासा,
वधतै धर्मशील विलासा हो लाल ॥१६॥

—❀—

नेमि राजिमती स्तवन

राजुल कहे सजनी सुनो रे लाल
रजनी केम विहाय हे सहेली।
अरज करी आणौ इहां रे लाल,
साहिबियौ समझाय हे सहेली ॥१॥
मोहन नेमि मिलाय दे रे लाल,
नेह नवौ न खमाय हे सहेली।
दिन पिण जातां दोहिलौ रे लाल,
जमवारो किम जाय हे सहेली ॥ २ मोहन ॥
इक खिण खिण प्रीतम पखे रे लाल,
बरस समान विहाय हे सहेली।
पाणी के विरहैं पड्यां रे लाल,
मछली जेम मुरझाय हे सहेली ॥ ३ मो० ॥
चकवी निस पिउ सुं चहै रे लाल,
त्युं मुझ चित्त तलफाय हे सहेली।
कोडि बिरख तज कोइली रे लाल,
आंबा डाल उम्हाय हे सहेली ॥ ४ मो० ॥
अधिकौ विरहौ अंग में रे लाल,
ते किम दूरे थाय हे सहेली।
जमवारो ज्लमें वसै रे लाल,
चकमवि अगन उल्हाय हे सहेली ॥ ५ मो० ॥
कंत विणा कामिनी तणा रे लाल,
भूपण दुषण प्राय हे सहेली।

फल फलैं ढाली थकी रे लाल,
छाब छदाम विकाय हे सहेली ॥ ६ मो० ॥
ऊची अधिक चढ़ाय नै रे लाल,
नांखी धरि भ्रसकाय हे सहेली ।
प्रीतम क्यु मुझ परिहरी रे लाल,
अवगुण एक बताय हे सहेली ॥७ मो०॥
सुगति कामिणी कामण कीया रे लाल,
तौ मुझ नै तजी न्याय हे सहेली ।
सिव नारी देखण सही रे लाल,
आप गइ उम्हाय हे सहेली ॥ ८ मो० ॥
सुगति मांहे वेहु मिल्या रे लाल,
विलसैं सुख वरदाय हे सहेली ।
प्रणमैं पंडित धरमसी रे लाल,
नमतां नव निधि थाय हे सहेली ॥ ९ मो० ॥

—⁂—

सिंधी भाषामय पार्श्वनाथ स्तवन

ढाल—भ्रमल कमल रहनी ।

अज्जु सफल अवतार असाड़ा, दिट्ठा पारस देव ।
बुट्ठा मेह, अमियदा, तुट्ठा साहिब सत मेव ॥ १ ॥
सयानें साइ असाड़ा वे, अरि हां पियारे पास जिणंदा वे ।आं०।
अरज़ हूंदा तैडें अग्गै, अखदा हां इक गल्ल ।
मुख देंदा हैं सभनि कुं चोखीय तुसाड़ी चल्ल । म० २ ।

नंढरे नींगर दे ज्युं अम्मां, त्युं मैंडै तुं साम,
जौलुं अन्दर जेद हैं, नहीं भुल्लां तैडा नाम । स० ३ ।
सच्ची एक तुसाडी सेवा, दूजी गल्ल न दिल्ल,
आस पूरौ हुण दास दी, करंदा हो काहे ढिल्ल ।स०४।
देव अवर दी सेव करंदे, दिट्ठा मैं दोजग्ग ।
हुण उण उज्जड ना भमू, मन मान्या तैंड़ा मग्ग ।स० ५।
रज्या होइ सु कित्थुं जाणैं, भुक्खादा दिल दुक्ख ।
नाहीं देंदा न्याय तुं, सिवपुरदा मैंनु सुक्ख ।स० ६।
नव निधि सिद्धि तुसाडैं नामैं, दौलति हंदा दीह,
विजयहरष सुख संपजै, धरे ध्यान सदा ध्रमसींह । स० ७ ।

पार्श्वनाथ स्तवन

नेणां धन लेखुं देखुं, देखुं मुख अति नीकौ,
जीहा धन जांणु गावुं, गावुं जस जिनजी कौ ।
धन धन मुझ सांमी, तुं त्रिभुवन सिरि टीकौ ।। १ ।।
चित सूधैं करि हुं नित सुणिवा, चाहूं तुझ उपदेस अमी कौ ।।२।।
देवल देवल देव घणा ही दीसैं, तुझ सम जस न कही कौ ।।३।।
पुन्यें करि प्रभु साहिब पायो मोई, पायौ में राज पृथी कौ ।।४।।
कीजै मया मुझ सेवक कीजै साचौ, कीजौ मत अवर हथीकौ ।५।
रूप अनूपम तेज विराजै तेसौ, सूरिज कौ न ससी कौ ।।६।।
पास जिणेसर सहु मनवंछित पूरैं, साहिब श्री 'ध्रमसी' कौ ।।७।।

लोद्रवा पार्श्व जिन स्तवन ।

महिमा मोटी महियलै, प्रगट चिंतामणी पासो रे ।
सफलौ नांम करै सदा, आपै वंछित आसो रे ॥ १ ॥
अधिक सफल दिन आज नै, भेट्यौ श्री भगवंतो रे ।
कहीजें जीभै केतला, गहना सुजस अनंतो रे ॥ २ ॥
मोटौ जेसलमेर ग, मेर ज्यूं महीयलि मोहे रे ।
तीरथ लौद्रपुरो तिहां, शुभ नंदनवन सोहे रे ॥ ३ ॥
दिन दिन दीपै देहरा, जिहां श्री पास जिणंदो रे ।
साथै ले सुधरम सभा, आयो जाणं इन्दो रे ॥ ४ ॥
सुन्दर त्रिगढ़ा सम विचै, वृक्ष अशोक विराजे रे ।
मागी जाणं मरग नौ, कलपवृक्ष हित काजें रे ॥ ५ ॥
सहसफणा बिहुं साम नौ, मोहै रूप सवायो रे ।
थिर जस तें कीधो थिरू, वित दस क्षेत्र वायो रे ॥ ६ ॥
सतरंसे गुणत्रीस (१७२९) में, सिगसर मास मंझारो रे ।
यात्रा करी जिनवर तनी, धर्म शील चित्त धारो रे ॥ ७ ॥

—:*:—

लोद्रवा पार्श्व स्तवन ।

लुलि लुलि वंदो हो तीरथ लोद्रवो, अधिकी आसति आणि ।
सजन जन जिनवर नी पासीजैं जातरा, पुण्य तणै परमाणि ।१।
शंकादिक दूषण छोड़ो सहु, समकित धारो रे सार । स० ।
अरचौ भाव धरी अरिहंत नै, पामौ जिम भवपार ॥ स० । २॥

नयणे पाच अनुत्तर निरखेवा हुवे मन मांहे जो हुंस । स० ।
तौ एहिज तीरथ भेटो तुम्हे रचना तिण हिज रूंस ॥ स० । ३ ।
धन जेसलगढ जिहां धर्मात्मा संघनायक थिरूसाह । स० ।
जिण प्रासाद कराया जिनतणा, आणी अधिक उमाह ॥ ४ ॥
सुन्दर सहसफणे करि सांमली, दीपै मूरति दोइ । स० ।
मेघ घटा नै देखी मोर ज्युं, हरखित मुझ मन होइ ॥स० । ५ ॥
पास सदा चिंतामणि नी परै, आपै वंछित आस ॥ स० ॥
नाम गुणे करी साचौ नीपनौ, प्रगट चिंतामणी पास ।स० । ६ ।
सतरैसै त्रीसै मिगसर सुदै, वारस बहु संघ साथ ।
वाचक विजयहरष हरषे करी, प्रणम्यां पारसनाथ । स० । ७ ॥

—०—

लोद्रवा पार्श्व स्तवन
राग—सोरठ

पूजौ पास जी प्रभु परता पूरै, चितनी चिंता चूरै ।
सहसफणा शोभंत सनूरै, दरसण थी दुख दूरै ॥ १ ॥
सुणता कानै कीरति सारी, परसिद्ध लोद्रपुरा री ।
जिन मन्दिर हिव नयण जुहारी, साचा गुण सुखकारी ॥ २ ॥
नीलकमल सम मूरति निरखी, सहसफणा बे सरिखी ।
पास चिंतामणि साचा परखी, हिव सेवो मन हरखी ॥ ३ ॥
सुन्दर तिलको तोरण सोहै, मंडप पिण मन मोहै ।
ऊंची धज आकाश आरोहै, कहौ मुझ समवड को है ॥ ४ ॥

च्यार प्रासाद चिहुं दिशि राजै, विच में एक विराजै ।
कोरणी भीणी केम कहाजे, पेख्या मन पतियाजै ॥ ५ ॥
रचना पांच अणुत्तर रयणे, गमविण ऊंची गयणे ।
विधि सांभलतां जे गुरू वयणे, निरखी तेहिज नयणे ॥ ६ ॥
अष्टापद जे सुणता आगी, सो विधि दीठी सागी ।
त्रिगडो देखि मिथ्यामति त्यागी, जिन धर्म महिमा जागी ॥७॥
जिन प्रतिमा जिन हीज सरूपी, पौते जिनज प्ररूपी ।
सेवे ते शुद्ध समकित रूपी, अज्ञानी ए उथूपी ॥ ८ ॥
अधिके भावे यात्री आवे, गुण जिनवर ना गावे ।
रागे बहु विधि पूज रचावे, प्रभु सानिध सुख पावे ॥ ९ ॥
गावंते गीत मन गमती, राग धरम ने रमती ।
नर नारी नी टोली नमती, भावधरी ने भमती ॥ १० ॥
प्रशोभा जसलमेर सदाइ, श्री खरतर सुखदाई ।
करणी जिर्णोद्धार कराइ, सवपति थिरू सवाई ॥ ११ ॥
कलशः—संवत गुण युग तुरग धरणी चैत्र वदि छठि दीस ए ।
श्रीसंघ श्री जिनचन्द सानिध, सफल यात्रा जगीस ए ॥
प्रभु पास नामे आस पामैं, जपे ज जस जीह ए ।
गुरू विजयहरष मुसीस पाठक, कहै श्री धर्मसीह ए ॥ १२ ॥

—※—

लोद्रवापार्श्व स्तवन

विलसे ऋद्धि समृद्धि मिली--एहनी

धन धन मह तीरथ मांहि धुरें, परसिद्ध घणी श्री लोद्रपुरै ।
भले भावे आवे यात्र घणा, सुखदायक सेवो सहसफणा ॥ १ ॥
केवल जिम दूर थकी दीसैं, हीयडो जिन देखण नैं हींसै ।
वाखाणे मह विश्वा विसैं, यात्रा दीधी ए जगदीसैं ॥ २ ॥
त्रेवीसम श्री जिनराज तणी, फलदायक प्रतिमा सहसफणी ।
घन स्याम घटा जिम शोभ घणी, वाह वाह अंगी छबि अंग बणी ३
चउ जिणहर चउगइ दुख चूरें, पंचम पंचम गति सुख पूरें ।
अष्टापद त्रिगढे शोभ इसी, कुण इण समओपम कहुंअ किसी ॥४॥
केसरि चंदन घनसार करी, धोतीय अछोती अंग धरी ।
पूज्यां मिथ्यामति जाय परी, शुभ पामे समकित रतन सिरी ॥५॥
प्रणम्यां मह पीड़ा दूरि पुले, छल छिद्र उपद्रव को न छलैं ।
दुख दोहग दालिद दूर दलैं, मन वंछित लीला आइ मिलै ॥६॥
जेसलगढ गुरू गच्छपति जाणि, तिहां आया श्री संघ मुलताणी ।
संघ तिण सुं श्री जिनचन्द्रसूरें, प्रणम्या प्रभु पास नवल नूरै ॥७॥
सतरैं चम्मालै चैत्र सुदे, महिमा मोटी तिथि तीज मुदै ।
खरतर गुरु गच्छ सोभाग खरें, पाठक धर्मसी कहै एण परैं ॥८॥

—:०:—

गौड़ी पार्श्व स्तवन

राग—मल्हार

मूरति मन नी मोहनी सखि सुन्दर अति सुखदाय।
नयन चपल है निरखिवा, सखी भ्रमर ज्युं कमल लोभाय रे ॥
दीठां हिज आवे दाय रे, कीधी तकसीर न काय रे।
जोतां सगला दुख जाय रे, थिर मन ना वंछित थाय रे ॥ १ ॥
मुनें प्यारो लागे पास जी ॥
कुण बीजा नी हर करै सखी, प्रभु ए समरथ पामि।
हाथ रतन आयौ हिवै सखी, काच तणौ स्यो कांम रे।
नित समरू एहनो नांम रे, सहु वाते समरथ स्वाम रे।
हिव पुगी हिया नी हांम रे, औहिज मुझ आतमरामरे ।२। मु०
स्वामि कल्पतरू सारिखौ सखी, बीजा बावल बोर।
मनवंछित दायक मिल्यो सखी, न करु अवर निहोर रे ॥
दिल बांध्यो इण विण डोर रे, मेहां नै चाहे मोर रे।
चंदा नै जेम चकोर रे, जिन सुं मन लागो जोर रे ॥३॥ मुनै०
कमल कमल चढती कला सखी, सोहे रूप सुरंग।
एहनै रूपनी ओपमा सखी, आवि न सकै अंग रे।
उलसै मिलवा नै अंग रे, सही छोडण न करू संग रे।
एहवौ मन में उच्छरंग रे, अविहड मुझ प्रीति अभंग रे ।४।मुनै०
हुंस घणी मिलवा हुंती सखी मन मांहि नितमेव रे।
ते साहिब मिलीया तरै सखी बहु हित पग गहुं बेव रे ॥

हरख्यो मुझ हिवड़ौ हेवए, साहिब नी न तजु सेव रे।
दिल सुध मुझ एहिज देवए, टलिस्यु नहीं ए लही टेवरे ।५। मुनै०
इण मन मोहन ऊपरै सखि हुंवारी वार हजार।
देस विदेशे दिल्ल में सखी सांभरिस्यै सौ वार रे ॥
इक इण हिज सु इकतार रे, हीयो नो अंतर हार रे।
कदे ही नहिं लोपिस कार रे, बात सी कहियै वार वार रे ।६ मु०
गाजै नित गौड़ी धणी सखि अकल सरूप अबीह।
भवना भय गय भांजिवा सखी सादूलो ए सीह रे ॥
लोपै कुण एहनी लीह रे, जपतां जस सफली जीह रे।
द्यै विजयहरप निसदीह रे, धरि हेत कहै धर्मसीह रे । ७ मुनै०।

पार्श्व जिन स्तवन

ढाल—धणरा ढोला रो

त्रिभुवन माहे ताहरौ हो,
सुजस कहै सहु कोइ। जिन रा राजा।
देव न कोइ दूसर हो,
होड़ जे ताहरी होइ। जिन रा राजा।
सुनिजर कीजे हो सुजान, सेवक कीजै
दीजै दिन दिन वंछित दान मन रा मान्या ॥ १ ॥ आंकणी
देवां मांहे दीपतौ हो, तु परता शुद्ध पास।
सोहे तारां श्रेणि में हो, एकज चन्द आकाश ॥ २ ॥ जि० सु०॥

पाम्यौ में तुमने प्रभु हो, सेवु' अवर न साम ।
सूरिज उगे साहिबा हो, केहो दीपक काम ॥ ३ ॥ जि० सु० ॥
सैवक नै तु' सासता हो, द्यै छैं वंछित देव
तौ सेवे छै ते भणी हो' नर नारी नितमेव ॥ ४ ॥ जि० सु० ॥
चूकौ हुं तुझ चाकरी हो, इतरा दिवस अयाण ।
गुनहौ तेह रखे गिणो हो, मोटा होइ महिराण ॥ ५ ॥ जि० सु० ॥
मो उपरि पिण करि मया हो, आपौ सुक्ख अछेह ।
सगले रूंखे सारिखा हो, महियल वरसै मेह ॥ ६ ॥ जि० सु०।
त्रिकरण शुद्ध इण ताहरौ हो, एकज छै आधार ।
करज्यो तुम धर्मसी कहे हो, अवसर नौ उपगार ॥ ७ ॥ जि०सु०

श्री फलोधी पार्श्व स्तवन

सुगुण सुज्ञानी स्वामि नै जी, स्युं कहियइ समझाइ ।
पण प्रभु सुं विनती परवैं जी, नेट ए काम न थाइ ॥ १ ॥
परम प्रभु सुण फलवधिपुर स्वामि ।
साहिब हीयड़ै मुझ सही जी, नित ही तुम्हारौ नाम ॥ २ ॥
आवंता सहीया अम्हे जी, भर तावड़ त्रिप भूख ।
तुम्ह दरसण दीठो तरै जी, दूर गया सहु दुख ॥ ३ ॥
मन मोहन तुम्ह सुं मिल्यां जी, उपजै सुख मुझ अंग।
आवै मन माहे इसी जी, सही न छोडुं संग ॥ ४ ॥
परदेसे पिण प्रीतड़ी जी, अधिकी दिन दिन एह ।
मन तुम पासे मोहियो जी, दूर रहैं छै देह ॥ ५ ।

अधिक उपाय करूं अछुं जी, भेटण श्री भगवंत ।
जोग जुड़ै नहीं कुमति सुं जी, खरीय रहै मन खांत ॥ ६ ॥
अमनै जाणी आपणौ जी, मेळौ दे महाराज ।
तुम मिळियां विण अमतणा जी, किम करि फळिस्यै काज ॥७॥
पाय तुम्हारा परसीयै जी, दोळति ह्वै तिण दीह ।
विजयहरष वंछित फळै जी, ध्यान धरे धर्मसीह ॥ ८ ॥

—:०:—

गौडी पार्श्व स्तवन

आज भलै दिन उगौ जी, अधिकै धरम उदै ।
प्रगट मनोरथ पूगो जी अधिकै धरम उदैं ।
पास जी नो दरसण पायो जी अधिकै धरम उदैं ॥ १ ॥
एहवै पांचम आरै जी अधिकै० त्रेवीसम जिन तारै जी । अ० ।
देव इसौ नहीं दूजो जी अधिकै० पास जिनेसर पूजो जी ॥ २ ॥
गुण गौडी ना गावोजी अ०, नरक निगौदैं नावो जी अ० ।
भावना मन शुद्ध भावौ जी अ०, पंचम गति सुख
पावो जी अ० ॥ ३ ॥
छाक मिथ्यामति छोड़ो जी अ०, जिनवर सूं हित जोडो जी अ० ।
जिन प्रतिमा जिन जेही जी अ०, कहौ इहां शंका
केही जी अ० ॥४॥
सुन्दर सूरति सौहै जी अ०, मूरति जन मन मोहै जी अ० ।
सुख विजयहरष सवाया जी अ०, गुण धर्मसीं मुनि
गायाजी अ० ॥५॥

—:※:—

श्रीपार्श्व स्तवन

राग—खभायती

आज नै अम्हारै मन आसा फलींयां ।
नयणे पार्श्व जिनेश्वर निरख्या, हरख्या मन हुइ रंग रलियां ॥१॥
त्रेवीसम जिन त्रिभुवन तारण, मनमोहन साहिब मिलियां ।
मो मन जिनगुण लागे मीठा, जिमै दूधै साकर मिलिया ॥ २ ॥
विहसत मूरति नयण विराजै, कोमल कमल तणी कलियां ।
दरसण दीठे पाइ दौलति, दुख दोहग दूरै दलीयां ॥ ३ ॥
समकित दायक लाधो साहिब,मुह मांग्या पासा ढलीयां ।
धरमसींह कहै धरमी जन नै, सुख थायै जस सांभलीयां ॥ ४ ॥

—:०:—

गौडो पार्श्व स्तवन

ढाल—सु बरदेरा गीत री ।

आणी आणी अधिक उमाह भवियण भावौ हो
भावन श्री भगवंतनी रे ।
लीजैं नर भव लाह, कीरति कहीजै हो
एक मनां अरिहंत नी रे ॥ १ ॥
मन थी दुविधा मेट अडिग आणीजै हो,
अधिकी मन में आसता रे ।
नामै एहने नेट पातक पुलायै हो,
थायइ शिव सुख शासता रे ॥२॥

राचौ समकित रंग साचौ नें सदाइ हो
सेवो जिन त्रेवीसमौ रे।
माचौ मत मद संग, काचौ नै कहीजै हो
काया घट ए कारमो रे ॥ ३ ॥
किणहिक पुण्य प्रकार प्रगट पाम्यौ हो,
नरभव पंचेन्द्री पणो रे।
आरिज कुल अवतार तिम वली लाधो हो,
शासन तीर्थंकर तणो रे ॥ ४ ॥
इण भव जिणवर एक अवर न सेवुं हो
आसत मन मांहे इसी रे।
विजय हरप सुविवेक, धरि बहुभावै हो
गावें गुण इम धरमसी रे ॥ ५ ॥

--:※:--

श्री गौडी पार्श्व गीत
गीत सपखरौ जाति

जगि जागें पास गौडी लोक दोडी दोडी आवै जात।
कोडी लाख देखो देव जोडी नावै कोइ।
सारिखा घणा ही नाम तिणें काम सरे न कौ।
जैन मोटी आरिखा सौं पारिखाले कोइ ॥ १ ॥
विकट्टे प्रगट्टे थट्टे निपट्टे उबट्टे वट्टे संकट्टे
निकट्टे दुखां चूरणे समाथ।

आपे आप हाथो हाथ ईहनां अथग्ग आथ,
नामथी करैं निहाल अनाथां रो नाथ ॥ २ ॥
एहो एक देव पास, पूरवें उलास आस,
तेज कौ प्रकास वास जास त्रिभुवन्न ।
पास सांम पास सांम नामचै प्रणाम पामें,
माम कांम ठाम ठाम माणै सुक्ख मन्न ॥ ३ ॥
ओपियौ इखाग वंश आससेण अंग जात,
वांमा विखियात मात जात आवैं वृन्द ।
एकीह अवीह सीह लोपें कुण लीह
एहो जाप धरैं धर्मसीह गौडीचौ जिणंद ॥ ४ ॥

—:❀:—

जैसलमेर पार्श्व स्तवन
ढाल—दादेरे दरबार चापो मोह्य रह्यो

उगो धन दिन आज सफलौ जन्म सही री
सफल फल्या सहु काज, जिनवर यात्रा लही री ॥ १ ॥
जगगुरु पास जिणंद, भेट्यौ भाव धरी री ।
इण संसार समंद, तारण तरण तरी री ॥ २ ॥
जिनवरजी ने जाप, परहा पाप पुलै री ।
उगें सूरिज आप, किम अंधार कलै री ॥ ३ ॥
भयभंजण भगवंत, जेसलमेर जयौ री ।
उपगारी अरिहंत, दरिसण दुक्ख गयौ री ॥ ४ ॥

द्रव्यत भावत दोइ, पूजा विविध परै री।
हित करि करतां होइ, समकित शुद्ध तरै री ॥ ५ ॥
हेत धरी मन मांहि, मूरत जेह नमैं री।
लाधो नर भव लाह, भूला अवर भमै री ॥ ६ ॥
सानिध प्रभु सुविलास, लीला अधिक लहै री।
विजयहरष जसवास, कवि 'धर्मसीह' कहै री ॥ ७ ॥

—:॥:—

श्री मगसी पार्श्वनाथ स्तवन

ढाल—आदरजीव क्षमा गुण०

भवियण भाव धरी नै भेटो, मगसीपुर महाराज जी।
जेहनो मन सुद्ध नाम जपंतां, सहीय मिले सिवसाज जी ।भ० ।१।
त्रिभुवन मांहे ए जिन तारण, वारण दुख वन वन्हिजी
आपण कर जे जिनवर अरचैं, धरणी ते नर धन्न जी । भ० । २ ।
पाये अवर सुरां ने पाड्या, मदन महामणिमन्थजी।
तिण नें पिण जिण खिण में जीत्या, सहु में ए समरत्थ जी ।भ०।३।
सोवन सिंहासण ऊपरि सोहे, श्याम वरण तनु सारजी।
गुहिर हंस गिरू परि गाजंतौ, जाणे करि जलधार जी । भ० ।४ ।
अवर देव सेवा तजि अलगी, पूजौ नित प्रति पास जी।
भव दल सगला दूरै भांजी, विलसौ मुक्ति विलास जी ।भ०।५।
आखै दिन सुर गुर गुण गावै, आवैं नहीं तोइ अंत जी।
कर भरि नीर समुद्र थी काढ्यां, जलनिधि ओछ न जंत जी ।भ०६।
नवनिधि थायै प्रभु नै नामै, विजयहरष विलसंत जी।
धर्मसीह नित आज्ञा धारइ, अमल मनै एकंत जी । भ० । ७ ।

श्री पार्श्वनाथ स्तवन

ढाल—नणदल री

सहियर हे सहियर आवौ मिलो हे उतावली,
सुन्दर करि सिणगार । स० ।

जिनवर देव जुहारिवा, आज सफल अवतार । स० ॥ १ ॥
मनड़ो जिनवर मोहीयो ए ।

पहिलो देइ प्रदिक्षणा, त्रिकरण शुद्ध त्रिणवार ।
गुण जिनवर ना गाइयै, आंणी हर्ष अपार ॥ २ ॥

मूरति अति रलियामणी, निरखण चाहै नैंण ।
जेह करावै जातरा, साचा ते हिज सैंण ॥ ३ ॥

सुखदायक मुख सोहतौ, कुंडल बेऊं कांन ।
भाल विसाल मुगट भलौ, दिन दिन वधते वान ॥ ४ ॥

जिम जिम मूरति जोइयै, मन तिम तिम मोहाय ।
प्रभु दरसण दीठां पछी, दूजौ नावै दाय ॥ ५ ॥

प्रीति करी इक पास सुं, रहियौ मो मन राच ।
पाच रतन नै परिहरी, कहौ कुण झालै काच ॥ ६ ॥

धन धन ते नर धर्मीयै, जेहनी सफली जीह ।
जस कहै पास जिणंद नौ, सुह भावै धर्मसीह ॥ ७ ॥

—:※:—

श्री संखेश्वर पार्श्व स्तवन

ढाल—विलसै रिद्धि समृद्धि मिली

महिमा मोटी त्रिभुवन मांहे, आवैं यात्रा जग उमाहै ।
कल्पतरू फलियो हितकामी, सुखदायक संखेश्वर स्वामी ।१।

धुरि वंदइ पूजइ ध्यान धरै, कर जोड़ी सेवा जेह करै ।
गुण गावै तेह सुगति गामी, सुखदायक संखेश्वर स्वामी ।२।

विषमा दुख वैरी जाय विलैं, महिला जिम कमला आइ मिलैं ।
जप जाप जपो अन्तरयामी, सुखदायक संखेश्वर स्वामी ।३।

जदुसेन जरा मूर्छित जाणी, सज कीध पखाल तणौं पाणी ।
ठावा जस एहवा ठाम ठांमी, सुखदायक संखेश्वर स्वामी ।।४।।

काम कुम्भ चिंतामणि कल्पलता, छाजैं ए उपमा काज छता ।
पिण इण सम काइन आसांमी, सुखदायक संखेश्वर स्वामी ।।५।।

सतरैसे सतट्ठि पोस सुदी, सातम श्री पाटण संघ मुदी ।
परतिख प्रभु नी यात्रा पांमी, सुखदायक संखेश्वर स्वामी ।।६।।

धन जिनसुखसूरि धर्म शील रस्तइ, सुविवेक कियो वेलजीवस्तइ ।
जिनराज जुहार्या जस नामी, सुखदायक संखेश्वर स्वामी ।।७ ।।

—:०:—

श्री पार्श्व स्तवन

सुणि अरदासा सुगण निवासा अमची पूरउ आसा राजि ॥
देखि उदासा अपणा दासा, दीजै कछुक दिलासा राजि ॥ १ ॥
चाली चटकी भव मइ भटकी, नाच्यौ हुं विधि नटकी राजि ।
हिव मन हटकी आपसौं अटकी, लागौ तुम्ह पाय लटकी ॥२॥
तइ अम्ह टाली मुगति सभाली, प्रीति अम्है हिज पाली राजि ।
एक हथाली वागी ताली, बात अचभा वाली राज ॥ ३ ॥
तु उपगारी पास तुहारी, सेवा सहु मे सारी राज ।
तत्त विचारी शुध मन धारी, श्री धर्मसी सुखकारी राज ॥ ४ ॥

श्री पार्श्व स्तवन

राग—सारग वृदावनी

नित नमियै पारसनाथ जी ।
मनमोहन ए रतन चितामणि, हिव आयो छै हाथ जी ॥ १ ॥
सेवो स्वामि सदा मन सूधें, आपै वछित आथ जी ।
पुण्य उदै करि ए प्रभु पायौ, सिवपुर मारग साथ जी ॥ २ ॥
महियल माहि अधिक जसु महिमा, सेवै सघ सनाथ जी ।
ध्यावौ एक मना कहै धर्मसी, एह अनाथां नाथ जी ॥ ३ ॥

पार्श्वनाथ वधावा गीत

पहिलै वधावै जिणवर देव जुहाख्या,
सफलौ हो सफलौ जन्म हुऔ सही ।
बीजे बधावे समकित रतन सुलाधो,
दिल में हो संकादिक दूषण नहीं जी ॥ १ ॥

अगणी बधावइ श्रावक पदवी पाइ,
देसें हो देसविरति धर्म आदरू जी।
चौथइ वधावै हो [1]चारित लाधो,
तिणथी हो तिणथी भव सागर तरू जी ॥ २ ॥
मंगल पहिलौ अरिहंत मानु,
बिजौ हो बीजो हो सिद्ध मगल वली जी।
तीजइ मंगल साधनी सेवा,
चउथे हो धर्म कह्यौ जे केवली जी ॥ ३ ॥
जिन शासन वरतौ जयवन्तौ,
भावित हो भावित बधावा मगल भाखिया जी।
च्यार लोगुत्तम एहिज चावा,
सूत्रे हो सूत्रे हो सरणा एहिज साखिया जी ॥ ४ ॥
पारसनाथ[2] तणै परसादै माहरै,
हो माहरे हो जैन धर्म मुदै जी।
मन शुद्ध श्री धर्मसी कहै माहरइ
आज्यो हो आज्यो हो ए भव भव उदै जी ॥ ५ ॥
इति श्री पार्श्वनाथ लघु स्तवन । उपदेशे गेयच ॥

श्री पार्श्वनाथ स्तवन

नैणा धन लेखु देखु देखु मुख अति नीको ।
जीहा धन जाणु गावु गावु जस जिनजी को ॥
धन धन मुझ स्वामी तु त्रिभुवन सिर टीको ॥ १ ॥ नैणा०

१ होजो चरित्रचोखो २ जिणंद

चित्त शुद्धे करि हुं नित सुणिवा चाहुं,
तुझ उपदेश अमी को ॥ २ ॥ नै०
देवल देवल देव घणा ही दीसे,
तुम सम जस न कही को ॥ ३ ॥ नै०
पुण्यै करि प्रभु साहिब पायो,
सोइ पायो में राज पृथ्वी को ॥ ४ ॥ नै०
कीजै मया मुझ सेवक कीजै साचो,
कीजो मत अवर हथी को ॥ ५ ॥ नै०
रूप अनूपम तेज विराजै तैसो,
सूरिज को न ससी को ॥ ६ ॥ नै०
पास जिनेसर सहु मन वंछित पूरे,
साहिब श्री धर्मसी कौ ॥ ७ ॥ न०

श्री पार्श्वनाथ स्तवन

महिमा मोटी महियलै हो, परगट जिनवर पास।
सुरनर नित सेवा करै हो, आणीय अधिक उलास ॥ १ ॥
जगनायक जिनवर गुण जपौ हो, जसु जपता दुख जाय।
थिरे घरि नवनिधि थाय ॥ २ ॥ ज०
मन मोहन मूरति भली हो, सब ही काज सुहाय।
चरण कमल सुख चाहतौ हो, मुझ मन भमर मोहाय ॥३॥ ज०
सिर उपर मुकट सुहामणों हो, कुण्डल दोनू कान।
झिगमि (ग) तेजे झलकता हो, सूरिज तेज समान ॥ ४ ॥ ज०

चोवा चोवा चंदना हो, घसि केसर घनसार।
अद्‌भुत मृगमद अरगजे हो, अरचतां सुख अपार ॥ ५ ॥ ज०
नित ही नाटक नव नवा हो, दों दों दमकै मृदंग।
झमकिल झांझरि झालरी हो, मोहत मन मुख चंग ॥ ६ ॥ ज०
तत नक ताथेइ ताथेइ तटक दे तोडत तांन।
फट्‌क दे अति भली देत है फेरी, गावत विचि विचि ग्यान ७ ज०
पूजा युं करता प्रभुजी की, सहीय मिलै सुख साज।
दस दिस माहे बहु जस दीपै, परभवि सिवपुर राज ॥ ८ ॥ ज०
पूरण वंछित पास जी हो, पुहवी मांहे प्रधान।
वाचक विजयहरष सुख वाधै, धरमसी धरत ही ध्यान ॥६॥ ज०

श्रीआबू तीर्थ स्तवन

आबू आज्यो रे आबू आज्यो २ आबू आज्यो वहिला थाज्यो।
मानव नौ भव सफल करौ तो, यात्रा काजे जाज्यो।
वामानंदन वंदन वहिला, अचलगढै पिण आज्यो ॥ १ ॥
हा रे म्हौंरा सयणां साचा वयण सुणेज्यो, अधिको तीरथ आबू,
सहु पातक मल साबू, भल भल २ देवल जोज्यो।
देवल जोज्यो हरखित होज्यो, धुरि पातक मल धोज्यो।
सहु सुखदायक तीरथ नायक, ज्योवा लायक ज्योज्यो ॥ २ ॥
हां रे सयणा नयणा सफल करेज्यो,
दूरथी देवल दीसै, हीयड़ौ तिम तिम हींसै।
लुलि लुलि लुलि लुलि सीस नमाज्यो,

सीस नमाज्यो गुण गवराज्यो वलि श्रीफल वधराज्यो ।
धन धन वेला धन ए घडीयां, धन अवतार धराज्यो ॥ ३ ॥
हां रे सयणा छवि गिरवर नी छाजे ।
कांइ लूंबां आंबें लहकै, केतक कंपक महकै ।
मह मह मह मह परिमल लेज्यो,
परमल लेज्यो दुख दलेज्यो, देहरै भमती देज्यौ ।
तोरण धोरण चितनी चोरण कोरण अनुमोदेज्यो ॥ ४ ॥

हां रे सयणा विमलवसी वांदेजो ।
केसर भरीय कचोली, माहे मृगमद चोली ।
घन घन घन घनसार घुलाज्यो घुलाज्यो,
भाव भिलाज्यो आसातना टलाज्यो ।
नव नव रंगी अंगी चंगी अंगी अंगि रचाज्यो ॥ ५ ॥
हां रे सयणा खेला पात्र नचाज्यो
सरिखे वेस समेला, भमती रमता भेला ।
थिग मिग थिगथिग थेइ थेइ, थिग मिग
थेइ २ तत नक ताथेई ॥
शिव मग सन्मुख थाज्यौ, धप मप दों दों,
भर हर भौं भों मादल भेर वजाज्यो ॥ ६ ॥
हां रे सयणा अचलगढे अरचाज्यो ।
चारे बिंब उत्तंगा, सोवन रूप सुचंगा ।
झलहल झिगमिग ज्योति सराज्यो,
ज्योति सराज्यो, भाव भराज्यो ।
यात्रा सफल कराज्यो, विजयहर्ष सुख साता वांछो,
शुभ 'धर्मसीख' धराज्यो ॥ ७ ॥

श्री महावीर जिन स्तवन

वीर जिणेसर वंदियै, इण सम नहीं कोइ और, म्हांरा लाल।
परता पूरण परगडौ, साचौ प्रभु साचौर म्हां० ॥ १ ॥

आज इणै पंचम अरै, सासण एहनो सार म्हां०।
जिन धरम वरते जगत में, ए एहनो उपगार म्हां०॥ २ ॥

गौतम सुधरम गणधरू, शिष्य एहना श्रीकार म्हां०।
सूत्र सिद्धान्त जे उपदिस्या, नित सुणतां निस्तार म्हां०॥ ३ ॥

अतुलित बली ए अवतर्यो, जिण सुर कीधा जेर म्हां०।
संका मेटी शक्रनी, मही कंपायौ मेर म्हां०॥ ४ ॥

अठ वरसी बालक इणें, महुकम एकंण मुट्ठि म्हां०।
रामति आमल की रम्या, देव हराव्यो दुट्ठि म्हां०॥ ५ ॥

लेसालै ले आवतां, अधिकाइ करी एण म्हां०।
ऊतर आप्या इन्द्र नें, जौड़ौ व्याकरण जेण ॥ ६ ॥ म्हां०

वरस त्रीसज गृह वसी, ले लिखमी नो लाह म्हां०।
आपो आपै आदर्यो, चारित चित्तनी चाह म्हां०॥ ७ ॥

तप जिण सहु निरजल तप्या, बार वरस धुरि मुंन म्हां०।
तिण में पारण दिन तिकैं, ऊंठसै मै इक ऊंन म्हां०॥ ८ ॥

सूलपाणि चंडकोशियौ, गौसाला गुणहीन म्हां०।
तिण तीनां ने इण कीयां, उपसम समकित लीण म्हां०॥ ६ ॥

झूठौ ही जे झगडीयौ, जम्माइ जम्माल म्हां० ।
तार्यो पनर भवे तिकौ, प्रभु सहुना प्रतिपाल म्हां०॥ १० ॥
पामी केवल थापीया, गणधर जेण इग्यार म्हां० ।
सहस चउद शिष्य साधु ते, साध्वी छतीस हजार म्हां०॥ ११ ॥
पुंहता जिणवर सिवपुरे, ल्यै आठे गुण लाह म्हां० ।
जिन प्रतिमा जिनवर जिसी, अर्चौ अधिक उछाह म्हां०॥१२॥
भावै जिन गुण भावना, गावइ वलि गुणगांन म्हां० ।
धन ते कहै श्री धर्मसी, पामै सुख परधान म्हां०॥ १३ ॥

श्री राड्द्रह महावीर स्तवन

राड़धूइ महावीर विराजै, भय सगला दूरें भाजे रे । रा० ।
सहु विधि सुख संपति साजैं, नित सेवक काज निवाजैरे ।१। रा०
सासन एहनो इण आरै, वरतै सुधरम विचारै रे । रा० ।
सुन्दर मूरति अति सारी, नित नमण करे नर नारी रे । २ । रा०
देवल वलि निर्मल दीपै, जसु तेज तरणी से जीपें रे । रा०
सुरतरु ए फल्यो समीपै, पातक दुख पास न छीपै रे । ३ । रा०
धन धन जे धर्मसी ध्यावै, प्रभु सानिध सहु सुख पावैरे ।
शुभ भाव धरी जे सेवै, दिन दिन मन वंछित देवे रे । ४ । रा०
सितरै वर्षे सुखदाइ, पुण्ये प्रभु यात्रा पाइ रे ।
श्री जिनसुखसूरि सदाइ, श्री संघ धर्मशील सवाई रे ।५ । रा०

श्री महावीर जन्म गीत

सफल थाल वागा थिया धवल मंगल सयल
तुरत त्रिभुवन हुआ हरष त्यारां।
धनद कोठार भंडार भरिया धने,
जनमियो देव व्रधमान ज्यारां। १।
बार तिण मेरगिरि सिहर न्ववराविया,
भला सुर असुरपति हुआ मेला।
सुद्रव वरषा हुई लोक हरष्या सहु,
वाह जिनवीर री जनम वेला। २।
मिहर जगि ऊगतें पूगतें मनोरथ,
जुगति जाचक लहैं दान जाचा।
मंडिया महोछव सिधारथ मौहले,
न्हपन त्रिसला सुतण किया साचा। ३।
करण उपगार संसार तारण कल
आप अवतार जगदीस आयौ।
धनो धन जैन धर्म सीम धारण धणी,
जगतगुर भले महावीर जायो। ४।

सतरह भेदी पूजा स्तवन

भाव भले भगवंत री, पूजा सतर प्रकार।
परसिद्ध कीधी द्रौपदी, अंग छठें अधिकार। १।
करि पींछी मुखकोश करि, विमल कलश भरि नीर।
पूजा न्हावण करौ प्रथम, सहु सुख करण सरीर॥ २॥

केसर चंदन कुमकुमै, अंगी रचो अनूप।
करि नव अंगे नव तिलक, पूजा बीय प्ररूप ॥ ३ ॥
वसन युगल उज्जल विमल, आरोंपें जिन अंग।
लाभ ज्ञान दरसण लहै, पूजा तृतीय प्रसंग ॥ ४ ॥
करपूरैं कसतूरियैं, विविध सुगन्ध वणाय।
अरिहंत अंगै अरचतां, चौगइ दुख चूराय ॥ ५ ॥
मन विकसै तिम विकसता, पुहप अनेक प्रकार।
प्रभु पूजाए पंचमी, पंचमगति दातार ॥ ६ ॥
छट्ठी पूजा ए छती, महा सुरभि पुष्पमाल।
गुण गुंथी थापौ गले, जेम टलैं दुख जाल ॥ ७ ॥
केतक कंपक केवड़ा, सौभे तेम सुगात।
चाढो जिम चढता हुवै, सातमीयै सुख सात ॥ ८ ॥
अंगै सेल्हारस अगर, पूरौ मुखै कपूर।
अरिहंत पूजा आठमी, करम आठ कर दूर ॥ ९ ॥
मोहन धज धरि मस्तकै, सूहव गीत समूज।
दीजैं तिन प्रदिक्षणा, परसिद्ध नवमी पूज ॥ १० ॥
प्रभु सिर मुगट धरौ प्रगट, आभरण सुघट अनेक।
बांहै सोहै बहुरखा, विधि दशमी सुविवेक ॥ ११ ॥
फूलहरौ अति फावतौ, फूंदे लहकैं फूल।
महकै परिमल फल महा, इग्यारमी पूज अमूल ॥ १२ ॥
पुहप सुरभि पांचे वरण, वरषा करण विशेष।
अधो बंध मुख ऊरधे, द्वादशमी विधि देख ॥ १३ ॥

चित चोखे चोखं करी, अठ मंगल आलेह ।
अरिहंत प्रतिमा आगलै, तेरम पूजा तेह ॥ १४ ॥
गंधवती मृगमद अगर, सेल्हारस घनसारु ।
धरि प्रभु आगलि धूपणो, चवदम अरचा चारु ॥ १५ ॥
कंठ भलइ आलाप करि, गावौ प्रभु गुण गीत ।
भावौ अधिकी भावना, पनरम पूजा प्रीत ॥ १६ ॥
कर जोडि नाटक करें, सजि सुन्दरि सिणगार ।
भव नाटक ते नवि भमै, सोलम पूजा सार ॥ १७ ॥
तत घन श्रुषि रे आन धें, वाजित्र चौविध वाय ।
भगत भली भगवंतरी, सतरम ए सुखदाय ॥ १८ ॥
जुदी जुदी विध जाणिवा, संख्या पिण समझाय ।
दोहे इक इक दाखवी, इम धर्मसी उवझाय ॥ १९ ॥

बीकानेर चैत्य परिपाटी स्तवन

चैत्य प्रवाडे चौवीसटै, करतां दरिसण सहु दुख कटै ।
घणा महाजन मिलिया घेर, वंदो जिनवर बीकानेर ॥ १ ॥
शक्रस्तव पांचे सुविचार, जुगते जिनवर देव जुहार ।
भावें वावें भुंगल भेर, वंदो जिनवर बीकानेर ॥ २ ॥
नित नित बीजै देहरै नमो, वासपूज्य जिनवर बारमो ।
अलग टलै अज्ञान अंघेर, वंदो जिनवर बीकानेर ॥ ३ ॥
तीजो देवल तिणहीज तीर, वंदो जिन चौवीसम वीर ।
जिण सहु सुरवर कीधा जेर, वंदो जिनवर बीकानेर ॥ ४ ॥

भांडैसाह करायौ भलौ, तीरथ ए सहु मैं सिर तिलौ।
मोटी ओपम राजे मेर, वंदो जिनवर बीकानेर ॥ ५ ॥
सुमतिनाथ जिण पंचम सार, चौमुख २ जिन च्यार च्यार।
ऊपरि ऊपरि सुजस उचेर, वंदो जिनवर बीकानेर ॥ ६ ॥
नमि आगे तिहां थी नमिनाथ, इकवीसम आपै सिव आथि।
हालौ जीव जयणाए हेर, वन्दो जिनवर बीकानेर ॥ ७ ॥
वलतां देवगृह सुविधान, मन सुध वंदु श्री वर्द्धमान।
फिरतां शुद्ध प्रदिक्षणा फेर, वंदो जिनवर बीकानेर ॥ ८ ॥
आदिसर प्रासाद अनूप, राजैं मूरति सुन्दर रूप।
चिहुं दिसि बिंब घणा चौपखेर, वंदो जिनवर बीकानेर ॥ ६ ॥
अजितनाथ बीजौ अरिहंत, भय भंजन भेट्यौ भगवंत।
खाट्यौ समकित पाप खंखेर, वंदो जिनवर बीकानेर ॥ १० ॥
परसिद्ध ए आठे प्रासाद, प्रणम्या जिनवर तजी प्रमाद।
श्री धर्मसी कहैं सांझ सवेर, वंदो जिनवर बीकानेर ॥ ११ ॥

तीर्थंकर स्तुति-सवैया

नमो नितमेव सजौ शुभ सेव, जयो जिनदेव सदा सरसै।
दुति देह दसैं, अति ही उलसैं, दुख दूर नसै जिनकै दरसै ॥
असुरेस सुरेश अशेष नरेश, सबै तिण वंदन कुं तरसे।
धर्मसींह कहै सुख सोऊ लहै, जोऊ आदि जिणंद नमै हरसै ॥१॥

सवैया तेवीसा

तूं उपगार करै जु अपार अनाथ अधार सबै सुखकंदा ।
जिते जगदेव करै तुम्ह सेव जिनेसर नाभि नरेसर नन्दा ॥
देख मुख नूर मिटैं दुख दूर नसै अंधकार ज्युं देखि दिणंदा ।
श्री धर्मसीह कहै निसदीह उदौ करि संघ कौ आदि जिणंदा ।२।

दान दियो जिण आपणी देह कौ, लीनो परावत जीव लुकाइ ।
आवत ही अचिरा उदरैं सब देस में शांति जिणें वरताइ ॥
पाल्यौ छ खंड को राज जिणें जिनराज भयौ पदवी दु पाइ ।
सेवहु भाव भलै धर्ममी कहै शांति जिणंद सबै सुखदाइ ॥ ३ ॥

प्रगट्टा विकटा उमटाति घटा सघटा बिछुटात छटा घन की ।
इक ताल मैं ताल रु खाल प्रणाल वहै इक ताल उतालनि की ॥
चिहुं ओर चकोर सजोर सुंभोर करैं निसि सोर पहोरनि की ।
विनती करै राजमती पिउ सुं अब बात कहा धर्म शीलन की ॥४॥

ताल कंसाल मृदंग वजावत, गावत किन्नर कोकिल कूजा ।
ताथेइ ताथेइ थेइ भलै हित, नाचत है नर नार समूजा ॥
कुंडल कान झिगामग ज्योति, सु दीपत चंद दिनंदही दूजा ।
यौं धर्मसीह कहै धन दीह, वनी मेरे पास जिणंद की पूजा ॥

जानत बाल गुपाल सबै जसु, देस विदेस प्रसिद्ध पडूरैं,
नाम ते कामित पामत हैं नित, देखत जात सबै दुख पूरं ।
मोहन रूप अनूप विराजित, सोभत सुन्दर देह सनूरैं,
ध्यान धरौं हित सुं धर्मसी कहै, पारसनाथ सदा सुख पूरै ॥

जाकौ परता पूर देखे दुख जाइ दूर,

हाजरा हजूर जगि जागैं प्रभु पास जू।

मूरति विराजै नित चतुर के मोहे चित्त,

पेखैं बधै नैननि की अधिक पियास जू॥

कीरति सुनी है कान, दीनौ कहा लुं कै दान,

धरिके तुम्हारौ ध्यान आव लख पास जू।

कहत है धर्मसीह गहत ही ताकौ नाम,

लहत अनंत सुख तूटै दुख पास जू॥

चौवीस जिन गणधरादि संख्या छप्पय

वंदो जिन चौवीस चवदसें बावन गणधर।

साधु अट्ठावीस लाख सहस अडतीस सुखंकर॥

साध्वी लाख चम्माल सहस छयालिस चउसय।

श्रावक पचपन लाख सहस अडताल समुच्चय॥

श्राविका कोडि पंच लाख सहु,

अधिक अठावीस सहस अख।

परिवार इतो संघ ने प्रगट,

श्रीधर्मसी कहै करहु सुख॥

सनत्कुमार सज्झाय

ढाल :-त्यागी वैरागी मेघा जिन सगझाया,

अथवा उडरे आबाकीइल मोरी एहनी

साचा सुग्यानी ध्यानी सनतकुमारा,

कारिमी काया माया कुण अहंकारा । सा०

इण महामुनिना ए अधिकारा, नित सांभलतां हुवै निसतारा ।१

एण भरतक्षेत्र चउथा आरा, हथणाउर सुरपुर अणुहारा ।सा० ।

आससेण सहदेवी कुखि अवतारा, भोगवैं चक्रवर्ति

पदवी भारा । सा० । २

विधिविधि ऋद्धि तणा विस्तारा, पालैं राज छखंड पडारा ।सा०।

एकदाइन्द्र प्रशंसै अपारा, ए अतिसुन्दररूप उदारा । सा० । ३।

तिहां विजै विजयंत देवअतारा,

इन्द्र वचन आंणअदेखारा । सा०।

विप्र नौ वेश रचौ तिणवारा, देव दोआवै देखणदीदारा ।सा०।४।

पइसण देवैंनहि प्रतिहारा, आपन्हवण करै अंग उघारा ।सा० ।

अम्हे दरसणआया अलगारा, विचिरोकण ना नही

व्यवहारा । सा० । ५

मुजरो कीधौ गेहमझारा, कुण इणआगै देवकुमारा । ता० ।६

दीपइरूपजांणे दिनकारां, सक्रवचन ते साच संभारा ।सा० ।६

इम सुणि नृप आणै अहंकारा, सभा विराजैभला सजि

शृंगारा ।सा०।

वलिआवैं देखैं दरबारा, पिण शिरधुण्यौ केण प्रकारा ।सा०।७
विप्र पूछयते कहय विचारा, एतुम्ह विणस्यौ रूप अबारा ।सा०।
धिग ए तनु अभिमान धिकारा, नरनीकाय तिका नाछारा । ८।
अदृश हुआ सुरते अचंभारा, सहु देखतां लोक सभारा । सा० ।
विणट्ठी कायारौग विकारा, चक्रबरति रा पिण नहि चारा ।६।
असुचि अपावन अथिर संसारा, गरब करै ते मूढ़ गमारा ।सा०।
भरिया तजि कोठार भंडारा, आप चक्रीहुआ अणगारा ।सा।१०
दिल वहु हेत सुंनदा दारा, पूठइ विलपै ले परिवारा । सा० ।
लगि छम्मास फिरीतसुलारा, ललच्यौ नहि तोईचित्त लगारा ११
अरस विरस मुनिल्यैं आहारा, उपज्या साते रोग अपारा ।सा०।
कछू ज्वर सासकास करारा, स्वरभंग अखियांउदर विथारा ।१२।
सातसैं वरस सह्या असातारा, इंद्र वखाण्यौ वले दृढ
आचारा ।सा०।
सुरकहै वेसकरे सथुआरा, साधु समाधिकरूतुभसारा ।सा०।१३
मुनि कहै अतरंग करम आम्हारा, तिहांकोईजोर न चलैं
तुम्हारा ।सा०।
पग्चें थूक लगाइ पोतारा, अंगुलीकीध सोवन आकारा ।सा।१४
भरियौ मुनिवर लब्धिभंडारा, धन धन एहचलैं खगधारा ।सा०।
सुर परसंसि गयौ श्रीकारा, आऊ त्रिण लखवरष आधारा ।१५
समेतशिखरैं मास संथारा, सरगतीजै गया सनतकुमारा ।सा०।
विजयहरष गुरु सुगुर विद्यारा, वंदे श्रीधरमसीह वारोवारा।१६

मेतार्थ मुनि स्वाध्याय

राजग्रही में गोचरी, विहरतौ शुद्ध आहार ।
सोनार नै घर संचर्यो, सुमति गुप्तिइ रे साचवतौ सार ।१।
सुज्ञानी साधु धन मेतारिज धीर ।
सजि समता रे तजि ममता सरीर ।सु०।धन०।२।
सोना तणा जव तिण घड़ी, तिण घड़ी, कीध तैयार ।
सोनार तिण साधुनइ बहिरावा, गयो गेह मझार ।सु०।३।
पूठा थकी कुंच पंखियइ तिहां, चुग्या सहु जव तेण ।
सोनार आइ संभालतां, कह्यौ माहरा रे जव लीधा केण ।सु०।४।
नर कोइ बीजौ इहां नहीं, सहु लिया जव इण साध ।
तिण रीस भरियै तेहनौ, सीस वीटयौ रे लेइ नीले वाध ।सु०।५।
जांणियौ मन में तिहां यती, जौ कहुं गिलिया क्रुंच ।
तौ एह हणिस्यै तेह नैं, साधु बोल्यो रे नहीं इणसंच ।सु०।६।
अति घणी वेदन ऊछली, सूकतैं बाधइ सीस ।
पीड थी दग छिटकी पड्या, दया पाली रे तोइ बिस्वा वीस ।७।
भली अनित्य अशरणभावना, धरि चित्त चढ़ते ध्यान ।
कर्म चूरि अंतगड़ केवलि, थइ पहुंतौ रे मुनि शिवथान ।सु०।८।
अणगार एहवा उपशमी, प्रणमियैं तेहना पाय ।
सुख विजयहरष हुवै सदा, इम भाखइ रे धर्मसी उवझाय ।सु०।९

—:॰:—

दश श्रावक सज्भाय

सूधै मन प्रणमौ दश श्रावक मोटी ऋद्धि बारैं व्रत धार ।
वीर जिणंदइ एह वखाण्या, सातमे अंग तणैं अधिकार । सू०।१।
वाणीय गाम नगर तिहां आणंद, बारह कौडि सोनईया सार ।
दस गौ सहस तणो इक गोकुल, एहवा गौकुल जेहनै च्यार ।सू०।२।
कोडि अढ़ार सोवन छ गोकुल, चंपापुरि कामदेव जगीस ।
तीजौ चुंलणीप्रिया बनारसी, आठ गोकुल धन कोडि चौवीस ।३।
सुरादेव वाणारसी नयरइ, चुलशतक आलभीया सार ।
कंपिल्ले नयरें कुंडकोलिक, छ व्रज कोडि अढ़ार अढ़ार ।सू०।४
पोलासपुरि सद्दालपुत्र सत्तम, तीन कोडि धन गोकुल एक ।
आठमौ महाशतक राजग्रही, कोडि चौवीस व्रजआठ विवेक ।५।
नवमो नंदणीप्रिया सावत्थी, दशमौ लेतीया पिया तिण ठाम ।
बार बार कोडि धन बिहुनै, च्यार च्यार गोकुल अभिराम ।६।
व्रत पाली अणशण करि पहुंता, पहिलै देवलोकै परधान ।
च्यार च्यार पल्योपम आयुष, धर्मसीह धरै धर्म ध्यान ।सू०।७।

—:※:—

श्री गुरुदेव स्तवनादि संग्रह

श्री गौतम स्वामी स्तवन

प्रहसम आलस तजि परौ, चौखो चित्त करो रे, राचो एकणी रंग।
गौतम गुण भणौ रे ।। आंकणी ।।
सेवो मन शुद्धे करी, भावे भरी रे, आणंद होवे अंग ।।गौ०१।।
नामे नित नवनिध मिलैं संकट टलै रे, दालिद नासे दूर।
ध्यान धर्या धन है घणा,
न रहैं मणा रे, पामे सुख भरपूर ।। गौ०२ ।।
कामधेनु कल्पतरु, चिंतामणि वरु रे, नाम में तीन रतन्न।
लब्ध अठावीस जेहनें,
गुण गेह नैं रे, ध्यावे ते धन धन्न ।। गौ०३ ।।
जिण दिनकर किरणां ग्रही, मन गहगही रे, चढ्यौ अष्टापद सोइ।
जिणवर बिंब जुहारिया,
दुख वारियारे, च्यार आठ दस दोइ ।। गौ०४।।
प्रतिबोध्या तापस वली, मन नी रली रे, पनरेंसें नें तीन।
एकणि पात्रे पारणो,
भव-तारणउ रे, लब्धि अंगूठ अखीण ।। गौ०५ ।।

जे एहवा मुनिवर जपै, तसु दुख खपै रे, तूटै सगला कर्म।
लीला अधिक लहै सदा,
सुख संपदा रे, भाजे भव नौ भर्म ॥ गौ०६ ॥
आठ सिद्धि हुइ आंगणै, घरि धन घणैं रे, विजयहरष जशवास।
धरमसीह मुनिवर इम कहै,
ते सुख लहै रे, एह भणै जे उल्हास ॥ गौ०७ ॥

श्री जंबूस्वामी स्तवन

छोडो नां जी २ कंचन नै कामिनी छोडौ नां जी।
सुणि जंबु स्वामी छोडो ना जी। आणि ह्रां।
सुधरम स्वामी तणि सुणि वाणी, इमदिक्षा मन आणी।
तरुणी परणी तुरत तजौ ते, तोड़ो मति अति ताणी ॥छो० १ ॥

दायज में सोनइया दीधी, नवला कोड़ि निनाणुं।
परिहरि नै पाछै पछतास्यौ, तुम सुं स्युं अति ताणुं ।छो० २।

प्रीतम कहै सुण देवानुप्रिये सुख थोड़ा दुख बहुला।
मधु बिन्दु दृष्टांते मानी, संग तजुं छुं सगला ॥ छो० ३ ॥

सुन्दर आठे श्वसुरा सासु, मातु पिता हित माथै।
प्रभवो पंचसयां प्रतिबोध्यो, संयम लै सहु साथै ॥ छो० ॥ ४ ॥

सुधरम शीश हुवा ए सहु, सुधरम शील आचारी।
सुत्र प्ररूप्या शिव पद पहुंच्या, आज जिके उपकारी ॥छो० ५॥

वडली जिनदत्तसूरि (यात्रा) स्तवन

यात्रा ए वडली जास्यां, गुरूदेव तणा गुण गास्यां हो।
जिहां जिनवर मूरति राजइ, वलि जिनदत्तसूरि विराजें हो ।१।

पाटण अणहलपुर पासइ, एह कीजै यात्रा उल्हासइ हो।
सुणि तीरथ महिमा सारी, आवइ भावइ नर नारी हो ।।२।।

पूज्यां सहु इच्छा पूरइ, दुख दालिद नासै दूरै हो।
जिण चौसठ योगिनी जीती, वरतइ ए बार वदीती हो ।।३।।

वीर बावन पिण वसि कीधा, जगगुरू एहवा जस लीधा हो।
साकिणी डाकिणी उपशामइ, न पडै विजली जसु नामै हो ।।४।।

घर पुर वलि वाटइ घाटै, दुस्मण भय दूरै दाटै हो।
खरतर गुरु इम जस खाटइ, वरतै जे सुधरम वाटै हो ।।५।।

पारिख गुलाल पुन्याइ, जेहनइ सुत यात्र कराइ हो।
श्रीपूज जिनसुखसूरि साथइ, लाभ लीधौ लालचंद नाथइ हो।६।

सतरइ सतसठ्ठ वरीसइ, मिगसर वदि दुतीया दीसइ हो।
सहु संघ मनोरथ साध्या, इम कहै धर्मसीह उपाध्या हो ।।७।

—*—

जिनदत्तसूरि सवैया

बावन वीर किये अपने वश, चौसट्ठि योगिनी पाय लगाइ।
डाइण साइणि व्यंतर, खेचर, भूत परेत पिसाच पुलाइ॥
बीज तटक भटक कट्टक, अट्टक रहै पै खट्टक न कांइ।
कहै धर्मसींह लंघे कुण लीह, दीयैजिनदत्त की एक दुहाइ॥१॥

१ श्री जिनकुशलसूरि (देरावर यात्रा) स्तवन

दादौ देरावर दीपै, जसु सेवक सुजसैं जीपै हो।
सदगुरु सुखदाई।
श्रीजिनकुशलसूरिन्द, कलिजुग मांहे सुरतरु कंदो हो॥१॥
महिमा इण जग मांहे, आवे बहु यात्र उछाहे हो।
परतिख परता पूरें, चित्तनी सहु चिंता चूरे हो॥२॥
विषमी वेला वाटै, करतां समरण दुख काटे हो।
छाजहडां कुल छाजै, गुरु महिमा अधिकी गाजैं हो॥३॥
परसिद्ध जिणचंद पाटै, खरतरगुरु शोभा खाटै हो।
सांनिध करण सदाइ, वड नामी गुरु वरदाई हो॥४॥
थुंभ घणा ठाम ठामै, पाय पूजै ते सुख पामै हो।
थिर देरावर थानै, मुनिवर सहु आसति माने हो॥५॥
मन मोटै मुलताणी, आदर यात्रा मन आणी हो।
राखी राखेचे रेख, संघ कीधो तिण सुविशेष हो॥६॥

जेसलगढ गच्छराज, जिणचंदसूरि गुणे जिहाज हो।
वंदण संघ तिहां आवै, वित्त साते क्षेत्रे वावे हो ॥७॥
संघ आदरै समज, आया यात्रा श्रीपूज हो।
मोटो संघ मुलताणी, हित मरोटी हाजीखाणी हो ॥८॥
जलालपुरे जस लीधो, सीतपुर उच वंछित सीधो हो।
ए संघ यात्रा आया, श्रीपूज श्रीसंघ सवाया हो ॥६॥
सतरैसे पैंतालीसैं, माह सुदि तीजै सुजगीसै हो।
यात्रा करी जयकारी, श्री धर्मसी कहै सुखकारी हो ॥१०॥

(२)

कुशल करण जिन कुशल जी, दादोजी परसिद्ध देव रे लाल।
परगट परता पूरवै, शुद्धे मन करतां सेव रे लाल ॥१॥
पृथ्वी मांहे परगड़ौ, सिवीयाणो गढ सुखकार रे लाल।
जेलागर मंत्री जेहां, नामे जयतश्री नारि रे लाल ॥२॥
तेरे सैंत्रीसैं समै, जायौ शुभ दिन जयकार रे लाल।
सैंतालैं संयम लीयौ, सहु अथिर गिण्यौ संसार रे लाल ॥३॥
सदगुरु जिनचंदसूरिजी, सघले गुण देखि सुघाट रे लाल।
शुभ महोरत सत्योत्तरे, पाटण में दीधो पाट रे लाल ॥४॥
गिरुवो खरतर गच्छ धणी, जिण शासन में जसवास रे लाल।
देरावर पुर दीपतौ, निव्यासीयें स्वर्ग निवास रे लाल ॥५॥

संकट माहे समरतां, दादौजी करें दुख दूर रे लाल।
बेडी राखी बूडती, परसिद्ध ए विरुद पडूर रे लाल ॥६॥
सेवतां सुरतरु समौ, दिन दिन दौलतिदातार रे लाल।
विजयहर्ष वंछित दीयै, वंदै धर्मसी वारंवार रे लाल ॥७॥

(३)

कुशल गुरु नांमे नवनिधि पामै,
ध्यावें जेह सूधै मन सद्गुरु, दिन दिन शुभ परिणामै ॥१॥
भर दुक्कर अटवी वलि घाटै, वैरी जूथ घणामें।
कुशल खेम कुशल परसादैं, ते पहुंचे निज ठामै ॥२॥
परता पूरण संकट चूरण, चावौ चौरासी गच्छां मैं।
धर्मसीह कहै ध्यायां धावैं, करिवा सानिध कामै ॥३॥

(४)

दौलति दाता द्यौ सुख साता, सहुजन मन्न सुहाता राज।
जे दिन राता तुझ गुण गाता, ते रहै राता माता राज ॥१॥
दादा दादा जग जस वादा, मोह्या सहु नर मादा राज।
टलइ अल्हादा सहु विषवादा, कुशल कुशल परसादा
राज ॥२॥
प्रवहण तार्या कष्ट निवार्या, अटवी माहि उबार्या राज।
विरुद संभार्या धर्मसी धार्या, सेवक काज सुधार्या राज ॥३॥

(५)

प्रेम मन धारि नित पहुर परभात रै,
विविध जसवास गुण रास वादौ ।
अमल अखीयात विख्यात एणै इला,
दीपतौ देव जग मांहि दादौ ॥१॥
घाट रिपु थाट जलवाट ओघट घणै,
हणै सहु आपदा हुइ हजूरै ।
सूरि सिरदार द्यै सकल सुख सेवकां,
पूर नित कुशल जिनकुशल पूरै ॥२
अधिक घण भाड उभाड अवगाहतां,
लसकरां तसकरां पड्यां लारै ।
धींग गच्छराज रो ध्यान मन ध्यावतां,
विकट संकट सहु निकट वारै ॥३॥
बडकती भाजती बूडती बेडीयां,
पार उतार जिण विरुद पायौ ।
तूंस सेवक तणा दूख भांजै तुरत,
धरमसी कुशल गुरु नाम ध्यायौ ॥४॥
—:०:—

सवैया

(६)

राजैं थुंभ ठौर ठौर ऐसो देव नाहीं और,
दादो दादो नाम तें जगत यश गायो है।
आपणें ही भाव आय पूजै लख लोक पाय,
प्यासनि कूं राण मांझि पानी आन पायो है॥
वाट घाट शत्रु थाट हाट पुर पाटण में,
देह गेह नेह सौं कुशल वरतायौ है।
धर्मसीह ध्यान धरैं सेवकां कुशल करै,
साचो श्री कुशल गुरु नाम यों कहायो है ॥१॥

(७) कुशल सूरि छप्पय

सरब शोभ गुण सकल, साधुपति आपै साता।
सिरवंतां सिरि सिखर, सील शुभ सीख विख्याता॥
सुद्ध चित्त सुखकार, सूरि जिनकुशलसूर दुति।
सेवहि सेवक कोड़ि, सेव मत वात शैल पति॥
सोभंति अधिक सोभा जगति, सौम्यरूप सौजन्यवर।
संघ नै सुख संपति द्वीयण, सदा सेव धर्मसी सधर॥

(८)

श्री जिन कुशल सूरीश्वरु गावो गच्छराया।
शुद्ध चित्त नित-समरतां सुख होय सवाया। श्री १॥

सेवै कुण सुर अवर कुं, परिहरि प्रभु पाया।
आलिंगे कुण आक कुं, छंडि सुरतरु छाया ॥२॥
मन शुद्धे जपतां मिले, मन वंछित माया।
तेणि धर्मवर्द्धन धर्यो, गुण जिण ही गाया ॥३॥

(६)

कुशल करो जिन कुशल जी दुख दूर निवारौ।
द्यौ मन वंछित दिन दिनै, विनती अवधारौ ॥कु० १॥
तो समरथ साहिब छतें, दास दीन तुम्हारौ।
शोभा न वधै स्यामीयां, एह बात विचारौ ॥२॥
भेट्या में हिव तुम्ह भणी, थयौ सफल जमारौ।
धर्मवर्द्धन कहै मांहरा, मन वंछित सारो ॥३॥

श्रीजिनचन्दसूरि गीत

जाति—सपखरो

आज खरै उदै मुदै सारां गच्छां माहि
साहि पातिसाहि में सराह वाह वाह।
जाग्यौ जैन चंद सागी, सोभागी रागी जैन धर्म,
वैरागी पुण्याइ जागी अधिकै उछाह ॥१॥
रूडा रूडा उपदेश दे दे वड़ा वड़ा भूप
कीधा, ध्रम्म रूप, खड़ा तडा सैवै पाय।

वाणि रा किलोल लोल वखाणै इलौल आँणि,
सूत्र रा अरत्थ सो गरत्थ यूँ बताय ॥२॥
सूरि मंत्र साधना सवाइ पाइ अधिकाइ
आसति अगम्म आइ साची हाथ सिद्धि।
साचो जत्त तत्तसार औहटी विषमवार,
वार तीन च्यार पाई पारिखा प्रसिद्ध ॥३॥
उजाडै पहाडे भाडे आयां चोर धाडै आडै,
राख्यौ साथ ओट जांणे कीध लोह कोट।
जास वयण सिद्धि योग सेवकां रा रोग सोग,
वायै ज्युं वातूल तेम जायैं चढी चोट ॥४॥
साधी पंचनद्द जेण लाधी सिद्ध जैनचंद्र,
जैनसिंघ जैनराज रतन अबीह।
ओपै एण पाट धम्मवाट साधां गज्ज घाट,
पूज मोटे पुन्न धन्न धन्न धर्मसीह ॥५॥

नं०—२ जाति कडखो

पुण्य परकास परभात प्रगट्यौ प्रगट,
भेटतां भरम भर तिमिर भाजै।
देखि खरतर सुगुरु एम दाखै दुनी,
रवि तणै तेज तुझ भाल राजै ॥१॥
अधिक ऊच्छाह सोइ दिवस उगो इला,
दुरित अंधार सहु दूरि डोलैं।

सुकवि गच्छराज नैं निरखि उपम सजै,
तरणि जिम ताहरौ वखत तोलै ॥२॥

धर्म शोभा सकल तेज वरते धरा,
हारि नाठौ तमस हेक हिल्कै।

सूरि जिणचंद संपेखि सगला कहै,
किरणधर जेम तुझ भाग किलकै ॥३॥

प्रगट परताप जिनरतन रो पाटवी,
सकल सुख दैंण कवि कहै धर्मसीह।

झालियल तेज किरणांल जिम झालतां,
दलिद मेटैं करैं दौलति दीह ॥४॥

नं०—३

दे दैंकार करण धर्म दाखैं,
अधिकौ आणिंद दैं अधिकार।

नाम न ल्यै जिणचंद न ना रो,
नाठौ तिण रूसे नाकार ॥१॥

संबे सात प्रियां रे साह्यो,
गिणि पूरवलौ वंस गिनौ।

पूज तठैं पिण धरतां पगला,
न सकै रहि तिण ठाम न नौ ॥२॥

राजैं नगर जिणें गच्छराजा,
दे दैंकार घणा तिण देस।

न नौं कोइ मुखैं न लगावै,
परहौं नासि गयौ परदेस ॥३॥
धरि हिव अरज रतन पाटोधर,
साच कहै धर्मसीह सही।
मांग्यौ देसि आफरती मुंनैं,
ना कारौ तुझ पासि नहीं ॥४॥

न० (४)

चंद जिम सूरि जिणचंद्र चढती कला,
सोम आकार सुखकार सोहै।
अधिक आणंद उद्योतकारी इला,
महीयले मांनवां मन्न मोहै ॥१॥
आय नर राय जसु पाय लागै अडिग,
देखतां दलिद्र दुख जाय दूरै।
प्रगट जसु पुहवी परताप जागै प्रबल,
पवर गच्छराज सुखसाज पूरै ॥२॥
धरत धर्मवाट मुनि थाट सोभा धरा,
रतन रै पाट गहगाट राजैं।
जुगपरधान जंगम्म तीरथ जगै,
दौलति दिह्न चढतैं वाजैं ॥३॥
सकल गुण धार सिरदार सोभा सधर,
सबल सौभाग संसार सारै।
धरमवर्द्धन धरैं नाम धन धन रा,
अभिनवौ कल्पतरु एण आरैं ॥४॥

(५) रसाउला

चावौ गच्छ चउरासियै, भट्टारक वडभाग।
गणधर श्री जिणचंद गुरु, एओ सोभ अथाग ॥१॥

ए अत्थग्गरा, पूजरैं पग्गरा,
यात्र वीजग्गरा, आवै उमंगरा।
साधरै संगरा, अंग उपांगरा,
सूत्र सुचंगरा, भेद अभङ्ग रा।
गंग तरंग रा, राग नैं रंगरा,
पापनैं पुण्य रा, दाखवैं दिन्न रा।
संसै आसन्न रा, मेटियैं मन रा,
गम्म आगम्म रा, ज्ञान रै गम्म रा।
आखवै तत्त आगम्म रा,
धोरी श्री जिन ध्रम्म रा।
पूजतां पाय गुरु प्रम्म रा,
जायैं पाप जनम्म रा ॥१॥

(६) सवैया

वाकुं दूजै पछि दूज वंदत है कोऊ एक,
याकौ नित ही नरिंद वंदत अशेष हैं।
वाकी तो निशा की बेर, अथिर सी जोति होत,
याकै ज्ञान कौ उद्योत भानु सौं सुपेख हैं।

वाकै सब सोल कला, सो भी दिन रैन छीन,
याकै तो छतीस दून, दून रूप रेख है।
धर्मसी सुबुद्धि धार गुणसौं विचार यार,
चंदसुं तो जिणचंद केते ही विशेष हैं ॥१॥
जैसे राजहंसनिसौं राजै मानसर राज,
जैसै विंध भूधर विराजैं गजराज सौं।
जैसैं सुर राजि सुं जु सोभ सुरराज साजैं,
जैसैं सिंधुराज राजैं सिन्धुनि के साज सौं ॥
जैसे तार हरनि के वृन्द सौं विराजैं चंद,
जैसे गिरराज राजै नंद वन राज सौं
जैसे धर्मशील सौं विराजै गच्छराज तैसे,
राजैं जिनचंदसूरि संघ के समाज सौं ॥२॥

तैसो ही अनूप रूप भावैं आइ वंदै भूप,
चातुरी वचन कला पूरी पंडिताइ है।
तैसो ही अडिग ध्यांन आगम अगम ज्ञान,
साचो सूरि मंत्र को विधान सुखदाइ है ॥
तैंसी है अमल बुद्धि, साची है वचन सिद्धि,
तैसों गुण जान तैसी सोभा हू सवाइ है।
और ठौर गुण एक तो में सब ही विवेक,
ऐसी जिनचन्दसूरि तेरी अधिकाइ है ॥३॥
जिणचंद यतीश्वर वंदन को,
नर नारि नरेसर आवत है।

वर मादल ताल कंसाल बजावत,
के गुरुके गुण गावत है ॥
बहु मोतीय तन्दुल थाल भरे,
नित सूहव नारि बधावत है।
धर्मसीउ कहैं गच्छराज कु वंदत,
पुण्य उदैं सुख पावत है ॥४॥

(७) सवैया

छाजति छबि चंदा मुख सुख कंदा
अमल अमंदा अरविंदा।
भाजति भय भुंदा शोभ सुरिंदा,
फेटत फंदा दुख दंदा ॥
दुति जांणि दिणंदा, सेवहि वृंदा,
हाजर वंदा राजिन्दा।
कहै धर्म कविंदा अति आणंदा,
जगति जतिंदा जिणचंदा ॥१॥

शोभत सुखदानी श्री गुरुवाणी,
सकल सुहानी सुनि प्रांणी।
कलि कमल कृपाणी, सिव सहिनाणी,
गुणिजन जाणी हित आंणी ॥
बुधजनहिं वखाणी ग्रन्थ लिखाणी,
रस कर सानी दुख हानी।
धर्मसीह सुजानी पुण्यप्रधानी,
कुशल कल्याणी महिमानी ॥२॥

(८) गहुंली

धन धन दिन आज नो लेखै, वलि हरख्या संघ विशेषैं।
अंग उलट धरिय अशेषै ॥ १ ॥
पाटोधर पाटीयै पधारौ, अम्हची विनती अवधारौ ॥आं०॥
चौपड़ा गणधर कुलचन्द, सहसकरण सुपीयारदे नंद।
खरतर गच्छ अधिक आणंद ॥ २ ॥ पाटो० ॥
सदगुरु जिनरतनसूरिंद, पाट थप्यौ अभिनव इंद।
चढती कला श्री जिणचंद ॥ ३ ॥ पाटो० ॥
हियडौ नयणां अति हर्षे, दुख जाय परा सहु दरसै।
तुम्ह देखण नै सहु तरसै ॥ ४ ॥ पाटो० ॥
सुणतां उपदेश तुम्हारौ, अति हरख्यौ चित्त अम्हारौ।
तुम्ह दरसण मोहनगारौ ॥ ५ ॥ पाटो० ॥
पूज वंदन नी मन रलीयां, सहु कोइ श्रावक मिलीयां।
दरसण दीठा दुख टलीया ॥ ६ ॥ पाटो० ॥
पूज मूरति मोहन वेल, वलि वांणि सुधारस रेल ॥
पूज चालै गजगति गेल ॥ ७ ॥ पाटो० ॥
मिल मिल सब सूहव आवें, गीत मंगल गहुंली गावै।
वलि तंदुल मोती वधावै ॥ ८ ॥ पाटो० ॥
पूज प्रतपो अधिक पुन्याइ, नित विजयहरष सुखदाइ।
धर्मसी कहै शोभ सवाई ॥ ९ ॥ पाटो० ॥

(६) गुरु गीतं

राजैं खरतरगच्छ राजवी, नित नित हो नवलै नूर । रा० ।
जिणचंदसूरीसर जग जयौ, उलसंतै हो पुण्य नै अंकूर ॥१॥
विद्याधर वड वखतावरू, महियलमैं हो महिमा महिमाय ।
राउ राणा मोटा राजीया, पुहवीपति हो लागै जसु पाय ॥रा०२
सहु कुं सुखदायक मुख सोहैं, देखतां हो दुख जायै दूर ॥ रा० ॥
जसु सूरति अति सोहामणी, सोहै सोहै हो श्रीजिनचंदसूर ॥रा०३

चावा जगि गणधर चोपड़ा,
वरदाइ हो जसु वंश विख्यात ॥रा०॥
सुत सोहे सहसासाह नौ,
मतिवंती हो सुपियारदे मात ॥रा० ४॥
श्रीजिनरतनसूरीसरू,
जोग जांणी हो जसु दीधौ पाट ।
जसु जस जागैं इण जगत में,
गावइ गावइ हो गीतां रा गहगाट ॥५॥
गुरू छाजै छतीसे गुणै,
भट्टारक हो जगि मोटै भाग ।
शुद्ध क्रिया नित साचवै,
सगलां में हो जेहनो सोभाग ॥ ६ ॥
श्रीयुगप्रधान यतीश्वरु,
देखतां हो हुवै सफलौ दीह ।
नित विजयहरष वंछित दीयै,
धरि भावै हो गावै धरमसीह ॥७॥

(१०) जिनचंदसूरि गीत

साधु आचार सुविचार सखरी सुमति,
छतीसे गुणे करि जागीयौ वडी छति।
साधियौ सूर मंत्र ग्रही देवां सकति,
साधुपति साधुपति साधुपति साधुपति ॥१॥
धींग धोरी वहै रतन रे पाट धुर,
पाउ धारै तिकै गिणां धन देसपुर।
सुदृष्टि जिणरी हुवै जांणि परसन्न सुर,
चंद गुरु चंद गुरु चंद गुरु चद गुरु॥ २॥
तत्त सिद्धान्त रा तेम व्याकरण तरक,
गात्र जिण रो सदा ज्ञान सुधैं गरक।
उदैं गच्छ खरतरै आज ऊगौ अरक,
भट्टारक भट्टारक भट्टारक भट्टारक॥ ३॥
सूरि जिणचंद श्रीपूज शोभा सधर,
वडा जिनदत्त जिणकुशल जसु दियै धर।
श्री धर्मसी कहै सुजस सगले सखर,
जतीसर जतीसर जतीसर॥ ४॥

नं० ११

थिया केइ दिवस मन कोड़ करतां यकां,
पुण्य करि आज अभिलाष पूगौ।
पूज जिणचंद रा चरण युग पेखतां,
आज सूरज सही भलौ ऊगौ॥१॥

धन्न धरती जठे पूज पगला धरै,
सहू इम सांभरै देस सारै।
इपि गच्छराज धन आज हुआ अम्हे,
धन्न वलि तरणि जग किरण धारै ॥२॥

वांणि वाखाण री जाण अमृत वदैं,
प्रेम मन धारि परवीण पीवें।
गोत्र गणधार गुणधार भेट्यो गुहिर,
दीपियौ भलौ रवि जगत दीवैं ॥३॥

रतन पटधार वडवार वरतो रिधू,
विधू धरि मेर ध्रू जाव वरतें।
धरो चिर आउ गच्छराउ धर्मशील धर,
पुहवी किरणाल जां प्रगट परतें ॥४॥

जिन चंद सूरि दोहा

वारू सरब विवेक, इतरौ जाणौ आपथी।
अम्ह नै दीजे एक, रितु परिमाणै रतन उत ॥ १ ॥

(१) जिनसुखसूरिपद महोत्सव

ढाल—चरण करण धर मुनिवर

उदय थयो धन धन आज नो, प्रगट्यौ पुण्य अंकूरो जी।
वंद्या आचारिज चढती कला, नामै जिनसुखसूरोजी ॥१॥
सूरत सहरै जिणचंदसूरि जी, आप्यौ आपणो पाटो जी।
महोत्सव गाजै बाजै मांडिया, गीतां रां गहगाटौ जी ॥२॥

पारिख साह भला पुण्यातमा, सांमीदास सूरदासो जी।
पदठवणो कीधौ मन प्रेमसुं, वित्त खरच्या सुविलासो जी।३।
रूडी विधि कीधा रातीजुगा, साहमीवच्छल सारो जी।
पटकूले कीधी पहिरावणी, सहु संघने श्रीकारो जी।।४।।
संवन् सतरै बांसठ समै, उच्छव बहु आसाढो जी।
सुदि इग्यारस पद महोत्सव सज्यौ, चंदकला जस चाढो जी।५
साहिलेचा बहुरा जगि सलहीयें, पींचा नख परसंसो जी।
मात पिता रूपचंद सरूपदे, तेहने कुल अवतंसोजी।। ६।।
प्रतपो एह घणा जुग गच्छपति, श्रीजिनसुखसूरिंदो जी।
श्रीधर्मसी कहै श्रीसंघने सदा, अधिक करौ आणंदो जी।। ७।।

(२) कवित्त

सकल गुण जाण वाखाण मुख सरसती,
कलाधर अवर नर मींढ केहौ।
खरें आचार सुविचार जस खरतरे,
जैनसुखसूरि जिनचंद जेहौ ।। १।।
सुगुरू निज सूरिमंत्र हाथसुं सुंपीयौ,
दीपीयौ दशो दिश सुजस दावौ।
कमल चढ़ती कला देखि सहु को कहै,
चंद पाट दूसरौ चंद चावौ।। २।।
अगम आगम तरक शास्त्र जाणइ अर्थ,
छात्रधर छहुं छक गुणे छाजइ।

तरंण रिखराज जेहाज जिम तारवा,
रतनहर राजहर रीति राजइ ॥ ३ ॥
वडी छति मति उगति जुगति रहणी वडी,
महिपति वड वडा वयण मोहे ।
भलें धर्मशील सौभाग्य त्यें भल भला,
सूरिवर सिहर सुखसूरि सोहे ॥ ४ ॥

(३) जिनसुखसूरि छप्पय

सकल सास्त्र सिद्धांत भेद विधि विधि रा भाखै ।
अवल धरम उपदेश, दुरस दृष्टांते दाखै ॥
वडि पहुंचि व्याकरण तास समवड कुण तोले ।
जोडै तरक जुगति बहुत शुद्ध संस्कृत बोले ॥
खरतरे सदा दीसैं खरी, प्रसिद्धि भली पुन्य पूर री ।
इकवीस चौक गच्छ में अधिक, सोभा जिनसुखसूरि री ।१।

(४) जिनसुखसूरि अमृतध्वनि

खरतरगच्छ जाणे खलक, सयल गुणे सुसमृद्ध ।
शोभा जिनसुखसूरि री, सहु विधि धरा प्रसिद्ध ।
चाल—धरा प्रसिद्ध द्ध्ज जस बद्ध,
ध्यान लवद्ध द्धिपणा सुद्ध धीमा बुद्धि,
धुनि धन रुद्ध द्धूण विरुद्ध,
द्धेषन धंध द्धीरज सिद्ध द्धोरी सुद्ध,
द्धौत विरुद्ध द्धंसि कुबुद्धि,
द्धवत परिद्ध द्धारण निद्ध द्धन गुरू बुद्ध,

द्ध र पद दिद्ध द्धरि हथ सिद्ध,
द्धी गुण गृद्ध द्धरि ततछद्ध द्धाम सुलद्ध,
द्धरणी मद्ध द्धाक प्रसिद्ध,
धूम सी किद्ध ध्वनि अमृत सुविशेष ॥ १ ॥ खरतर०

—:o:—

(५) जिनसुखसूरि चंद्रावला

सहु धरमां सिर सेहरौ रे, श्री जिन धरम सुजाण,
खरतर गच्छ सोभा खरी रे, भट्टारकीया कुलभाण ।
कुलभाण रे जाँण वारू किरिया धर्म वखांण,
पूज विराजइ पुण्य प्रमाण, जिनसुखसूरि अखंडित आंण ॥१॥
श्री गच्छनायकजी रे, प्रतपौ बहु जुग पाट,
खाटउ जस खरौजी, वरतौ सधरम वाट । दाटौ दुख परौजी २
साहलेचा वहुरा सही रे, पुहवी गोत्र प्रसिद्ध ।
रतनादे रूपचंद नउ रे, सुत ए गुणे समृद्धरे ।
सुत ए गुणे समृद्ध सार, आणी मन वइराग अपार
संयम जिण लीधौ सुखकार, अधिकै भाव भलइ आचार ॥ ३॥
श्रीजिणचंदसूरिंद जी रे, मैं हथ दीधौ पाट ।
महोछव मूरेत मंडिया रे, गीतां रा गहगाट ।
गीतां रा गहगाट रे खास, दीपइ पारिख सामीदास ।
पदठवणो कीधौ परकास, विलस्या वित्त लीधौ जसवास ।४।
महिमा मोटी महियलै रे, हुआ हरष उच्छाह ।
बचन कला बखाण नी रे, वाखाणैं सहु वाह वाह ।

वाखाणैं सहु वाह वाह रे लेख, आगम भणिया शास्त्र अशेष,
श्री जिन धर्मशील सुविशेष, राजै श्रीपूज चढती रेख, जी
गच्छना० ॥ ५ ॥

(६) सवैया

गुरू जिणचंद सूरि आप हाथ पाट दीनो,
कीनो है महोछव पुर सूरत मनूर जू।
विलस्यौ वित्त वाह वाह चौरासी गच्छे सराह,
देखैं तें विशेषैं सुख होत दुख दूर जू।
उदैं को अंकुर किधुं पुण्य ही को पूर किधुं,
सूरिमंत्र साधना की सकति हजूर जू।
इंद्रभूति अवतारी साचो धर्मशील धारी,
सबही कुं सुखकारी जैनसुखसूर जू ॥ १ ॥

(७) द्रुपद राग—रामकली (रामगिरी)

जिनसुखसूरि सुज्ञानी, सेवो भवि जिनसुखसूरि सुज्ञानी।
सब गुण लायक श्री गच्छनायक, सुखदायक सुविधानी ॥ १ ॥
चवद विद्या सहु विधि चतुराई, प्रकृति भली पहिचानी।
श्री जिनचंद सुगुरू पद संप्यौ, वरपत अमृत वानी ॥२॥ सेवो०॥
वखत वडै गुरू तखत विराजत, महिमा सब जगि मानी।
शुद्ध क्रिया धर्मशील सु मारग, सब ही बात सयानी ॥३॥ से०॥

(८) द्रुपद—धन्याश्री

गावौ गावौ री गच्छनायक के गुण गावौ।
श्री खरतर गच्छ अधिकी सोभा, चौरासी गच्छ चावोरी। ग०१

धन धन श्री जिनचंद पटोधर, दीपै चढ़तो दावौ ।
सकल कला जिनसुखसूरीसर, पग वंद्या सुख पावौ ।गच्छ०।२।
वाणी सूत्र सिद्धान्त वखांणे, विधि सुं वंदि वधावौ ।
ए गुरू श्री 'धर्मशील' आचारी, सहु में सुजस सुहावौ गच्छ०।।३।।

(६) भास गीत गहु ली

ढाल—मोरो मन मोह्यौ पूज वांदण सौं

भलो दिण उगौ आज आणंद सौं, गुरू वांद्या लाधो ज्ञान ।।
सुणिस्यां उपदेस सुहामणा, धरिस्यां साचउ धर्म ध्यान ।भलो०१
नित करस्यां समकित निरमलो, निरमल जिम गंगा नीर ।भलो०
तजस्यां संगति निगुणां तणी, सुगणां सुं करिस्यां सीर ।भलो०२।
मिल आवौ सहियां मलपती, सुन्दर करि शुभ सिणगार ।भलो०
गुण गावौ श्री गुरूदेव ना, औ सफल करौ अवतार । भलो०
भगवंत गणधरै भाखिया, सहु सूत्र सुणावइ सार । भलो०
जिन थी शुभ मारग जाणियै, एहवौ जे करैं उपगार । भलो०।४
जयणा करियै जीवां तणी, जतने भरिये पग जोई । भलो०
वड़कां रौ वलि कीजै विनय, मन कपट न करिस्यौ कोई ।।५।।
ग्याटैं जस अधिकउ खरतरा, जिण शासन शोभ सुजाण ।भलो०
करणी सखरी पुन्य री करै, भला श्रावक कुल रा भाण ।भ०।।६।।
वरतै दिन दिन हि वधामणा, सहु सुजस करै संसार । भलो०
धर्म हेत उपाध्या धरमसी, श्री संघ सदा सुखकार । भ० ।।७।

—:※:—

गुरु गहुंली

(१०) ढाल—वैत्रणी आगै थी कहै । ए०

सिणगार सार बणाइ सुन्दर, चूंनडी ओढ़ी सुचंग।
वर हाथ थाल विसाल ले, आवी अति उछरंग।
सहु मिली सहियां गुण गावौ गहुंली गीत॥ १॥
सुगुरू वधावौ सु रीति, पुन्यै धरि बहु प्रीति॥ सहु०॥२॥
कस्तुरि केशर कुंकमां, करि रोल भरीय कचोल।
मन रंग मांडै मांडणा, अधिकै भाव इलोल॥ सहु॥३॥
चौकुण चिहु दिशि च्यार चौकी, चौकोर फूलड़ी चंग।
कलीए हंसता कमल ज्यूं, सौहे अति ही सुरंग॥ सहु०॥४॥
साथीयो सुन्दर बिचैं सोहैं, मोहै सगला मन्न।
संसार इम सफलौ करै, धन अम्मकादे धन्न॥ सहु०॥५॥
चोखा अंखडित लेइ चोखा, माहि मोती मेलि।
सुहव वधावै सुगुरू नैं, बधती मोहनवेलि॥ सहु०॥६॥
नमती करंती निमछना, लुलि लुलि लागै पाय।
सुख विजयहरष लहै सदा, धरमसी कहै धरि भाव॥सहु०॥७॥

—:❀:—

(११) सुगुरु व्याख्यानगीत

ढाल—धर्म जागरीया नी०

सरस बखाण सुगुरू तणो, मन भवियण ना मोहै रे।
सुणिवानैं तरसैं सहु, सकल गुणै करि सोहै रे॥ सरस०॥ ए।
राग सिधंत तणैं रसै, भेद भलीपर भाखै रे।
मिसरी दूध मिल्यां थकां, चतुर भली पर चाखै रे॥सरस०॥२॥

प्रकृति जुदी पुण्य पाप नी, बेंतालीस बयासी रे।
सुगुरू कहै समझाय नै, भगवंते जे भासी रे ॥ सरस० ॥३॥
दस दृष्टान्ते दोहिलौ, श्रावक नौ कुल सारू रे।
संगति वलि सदगुरू तणी, पामी पुण्य प्रकारू रे ॥ सरस०॥४॥
धरम नरम मन जे धरै, भरम करम ना भाजैं रे।
चरम जिणंद कहैं ते चढ़ै, परम मुगति गढ़ पाजै रे ॥सरस०॥५॥
वांणि विविध विचार सुं, प्राणी नै परकासै रे।
जांणी नैं करिस्यै जिकै, वरस्यै मुगति विलासै रे ॥ सरस०॥६॥
इण भवि सुख अधिका लहै, विजयहरष जसवासो रे।
धरम करौ धर्मसी कहै, इण उपदेश उलासो रे ॥ सरस० ॥७॥

(१२) छप्पय—क का बारहखडी पर

करण अधिक कल्याण, काज साधन शुभ कामित।
किलक भाल किरणाल, कीध जिण निर्मल कीरत ॥
कुल दीपक वलि कुशल, क्रूर नहिं मन द्दग कूरम।
केवल धर्म केलवण, कैहणिया कैतल भ्रम ॥
कोश गुण रतन को इण समौ, कौटिक गण कौमुदीयवर।
कंज सम मुख कंठ कोकिला, कःहु जिनसुख जन सुखकःर।

—o—

श्री जिनभक्तिसूरि गीतम्

ढाल—आषाढै मैरूं आवै ए देसी।

'जिनभक्ति' जतीसर वंदौ, चढती कला दीपति चंदौ रे। जि०।
खरतर गच्छ नायक राजै, छत्रीस गुणे करि छाजै रे।१। जि०।
श्री 'जिनसुख सूरि' सनाथै, दीधौ पद अपणें हाथे रे। जि०।
श्री 'रिणीपुर' संघ सवायौ, महोछव कीधौ मन भायौ रे।२।
'सेठिया' वंसै सुखदाई, श्री जिन धर्म सोभ सवाई रे। जि०।
'हरिचंद' पिता धर्मधीरौ, 'हरिसुखदे' उदरै हीरौ रे।३। जि०।
लघुवय जिण चारित लीधौ, सद्गुरु नै सुप्रसन्न कीधौ रे। जि०
विद्या जसु हुइ वरदाइ, पुण्ये गुरु पदवी पाई रे।४। जि०।
प्रगटयौ जश देस प्रदेसै, वरते आज्ञा सुविसेसै रे। जि०।
वांटै सहु देस बधाइ, खरतर गच्छपति सुखदाई। ५। जि०।
संवत 'सतरै उगुण्यासी, जेष्ठ वदि त्रीज' पुण्य प्रकासी रे। जि०
सहु सुजस रिणी संघ साध्या, इम कहै 'धर्मसी' उपाध्या रे।६।

॥ श्रावक करणी ॥

ढाल--हिवराणी पदमावती

श्री जिन शाशन सेहरौ, वंदु जिनवीर।
देशविरति धर्म उपदिस्यौ, धरे श्रावक धीर॥१॥
श्रावक नी करणी सुणौ, सद्गुरु कहै सार।
जे आदरतां जीवड़ौ, पामै भव पार॥२ श्रा.॥

पाछली रात प्रभात रौ, तजि ऊंघ अज्ञांन।
बे घड़ी एकांत बैसि नै, ध्यावे धर्म ध्यान ॥३॥ श्रा.॥
उतम कुल हुं उपनौ, पूरबलैं पुन्न।
जतन करी जिन धर्म नै, राखैं जेम रतन्न ॥४॥ श्रा.॥
धुरि समकित साचौ धरै, नित गुणै नवकार।
आदर पर उपकार सुं, वरतें विवहार ॥५॥ श्रा.॥
करि न सकै तोही करै, मनोरथ मन मांहि।
व्रत बारै धारै वली, चारित नी चाहि ॥६॥ श्रा
देव जुहारी दिन उदय, गुरु वंदि सुज्ञांन।
सांभलि उपदेश सूत्रनौ, गिणे धन दिन ज्ञान ॥७॥ श्रा.॥
वांदि कहे देज्यो वलि, भात पाणी लाभ।
भोजन कीजै भाव सौं, पात्रां पड़िलाभ ॥ श्रा.॥८॥
पच्चखाण पूगे पारतां, कहे तीन नौकार।
घर सारू थोड़ौ घणौ, करे पुण्य प्रकार ॥ श्रा.॥९॥
पाणी छाणे प्रेम सुं, दिन में दोई वार।
जीवाणी पण जतन सुं, राखैं सुविचार ॥ श्रा.॥१०॥
पीसण खांडण लीपणै, रांधण रंधाण।
छै कूटो छःकायनौ, जयणा करे जाण ॥ श्रा.॥११॥
चक्की चूल्है चंद्रूया, तिम घृत नै तेल।
ऊघाड़ा राख्यां ईयां, वधै पापनी बेल ॥ श्रा.॥१२॥
बावीस अभक्ष जे बोलिया, तजें परहा तेह।
चवदे नेम चितारतां, इण लाभ अछेह ॥ श्रा.॥१३॥

साहमीवच्छल साचवे, साधुनी करे सेव।
आखड़ी व्रत पचखाण री, टाले नहीं टेव ॥ श्रा. ॥१४॥
कूड़ा कथन रखे करौ, सुंस कूड़ी साख।
थांपण मोसौ मत करे, दिढ़ि पारकी राख ॥ श्रा. ॥१५॥
साधू साजी सहित ना, विष ना व्यापार।
पाप विणज टाले परां, जिम होइ जैंवार ॥ श्रा. ॥१६॥
व्यापार शुद्ध करे वली, तिम होइ प्रतीति।
पाप किया ते पड़िक्कमे, अतिचार अनीति ॥ श्रा. ॥१७॥
पांच तिथे टाले परो, अधिकौ आरम्भ।
परहरे निन्दा पारकी, दिल न धरे दम्भ ॥ श्रा. ॥१८॥
पोता री परणी प्रिया, राखे तिण सुं रंग।
शील धरे न करे सही, पर स्त्री प्रसंग ॥ श्रा. ॥१९॥
जूवा प्रमुख कहाजिके, साते कुव्यसन्न।
सेवैं न कोई सर्वथा, धरमी ते धन्न ॥ श्रा. ॥ २० ॥
पोसा परवे पाखिए, करे मन नैं कोड़ि।
गुण गाए गुरुदेव ना, हरखे होडा होडि ॥ श्रा. ॥२१॥
सूड़ने दाणवइ गास जो, खड़ौ खेत्र अखंड।
उपदेश न दिये एहवा, दोष अनरथ दंड ॥ श्रा. ॥२२॥
रात्रिभोजन नादरें, इण दोष अपार।
सेजै रात्रि सूवतां, बलि करे चौविहार ॥ श्रा. ॥२३॥
जो सूंतां कोइ जीवनें, जोखो हुय जाय।
तौ पचखाण सहु तणौ, करे मन वच काय ॥ श्रा.॥२४॥
सहु श्रावक नित साचवे, एतो कुल आचार।
धन ते कहै श्री धर्मशी, सुख लहै श्रीकार ॥ श्रा. ॥२५॥

—:※:०:※:—

शास्त्रीय विचार स्तवन संग्रह

४५ आगम संख्या गर्भित वीर जिन स्तवनम्

देवां ना पिण जेह छै देव, सहु देविंद करै जसु सेव ।
ते नमुं श्रीदेवाधिज देव, वचन सुणौ तेहना नितमेव ।।१।।

ए सहु नैं सुख ए जगदीस, वाणी तेहनी विश्वावीस ।
प्ररूप्या आगम पैंतालीस, संख्या नाम कहुं सुजगीस ।।२।।

श्री आचारांग पहिलौ अंग, सहस अट्ठी ए सूत्र सुचंग ।
सुयगडांग बीजौ श्रीकार (सुविचार), संख्या इकवीससे सुविचार ३

तीजौ ठाणा अंग सुपतिट्ठ, सूत्रेसइत्रीससै सतसट्ठि ।
चौथो समवायांग सुजाण, सोलेसै सतसठ श्लोक प्रमाण ।।४।।

पंचम भगवती सूत्र सुधन्न, पनर सहस सतसैबावन्न ।
ज्ञाता धर्म कथा अंग छट्ठ, हिवणां पंच हजारे दिट्ठ।।५।।

सत्तम उपवासग दसासार, बोल्या अठसै ऊपरि बार ।
अट्ठम अंतगड सूत्र कहेउ, श्लोक संख्या आठसै ने नेऊ ।।६।।

नवमौ अंग अणुत्तर उववाय, इकसौ बाणु मानकहाय ।
प्रश्नव्याकरण दसमौ परकास, एक सहस दोयसै पंचास ।।७।।

सूत्र विपाके इग्यारम अंग श्लोक बारसै सोलै संग ।
अंग इग्यार सूत्र मिले थाय, पैंत्रीस सहस दोइ सै प्राय ।।८।।

ढाल :—सफल संसार नी ॥

बार उपांगमें प्रथम उववाइया, पनरसइ सूत्र परिमाण पिणपाइया।
रायपसेणिया बीय उपांग मैं, दोइहजार अठहोत्तर मन गमैं।६।
त्रीय उपांग जीवाभिगम जांणियै, च्यार हजार सौ
सात परिमाणियै ।
चउथ श्रीपनवणा उवंग गरकासियै, सात हजार सयसात
सत्यासियै ॥१०॥
पांचमौ जंबूपन्नति सुविसालए, चउसहस एकसौ वलिय छैंतालए।
चंदपन्नतिया छट्ठ वावीस सैं, सत्तम सूरपन्नति संख्या इसैं।११।
अट्ठम नाम निरयावली कप्पिया, नवम उवंग इमकप्पवडंसिया।
पुप्फिया दशम इग्यार पुप्फचूलीया, एम वन्हीदशा बारम
अनुकूलिया ॥१२॥
अट्ठम आदिथी उवंग पांचे मिली, शतक इग्यार संख्या इसी
सांभली ।
बार उपांगनो मेल भेलौ वसै, सहस पच्चीस नैं वलि
सया सातसैं ॥ १३ ॥
मूल सूत्र सौ सवा तेण मिलतौ कह्यौ, विशेषआवश्यक सहस
पांचे लह्यौ ।
दूसरौ मूलसूत्र सातसै दाखियै, दशवियकालिक भव्यजन
भाखियै ॥ १४ ॥
पाखियसूत्र नैं मूलसूत्र तीसरौ, तीनसैसाठि संख्या
मतां वीसरौ ।

उत्तराध्ययन दोइ सहस सुविचार ए, मूल सूत्रसहू सवा आठ हजारए ॥ १५ ॥
सूत्र नदी सत्त आंणिये सातसैं, अनुयोगद्वार उगणीससौ मन वसैं ।
एतलै ग थया सूत्र गुणत्रीसए, जे वचै नित्य व्याख्यान सुजगीसए ॥ १६ ॥

ढाल—नदुल राशि विमलगिरि थापी

छ छेदे महानिसीथ निशीथ, पाच सहस गिणिजै इवीथ ।
वृहत्कलप बीजौ वाखाण, च्यारसै चिहुतर सख्या जाण ॥१७॥
व्यवहार सूत्र छ सै सुविचार, दशाश्रुत स्कध शत अट्ठार ।
पचकल्प ते पचम छेद, सवा इग्यारसै सख्या वेद ॥१८॥
छठौ जीतकल्प इण नाम, इकसौ पाच छ कह्या आम ।
दसे पइन्ना हिव इम दाखै, सूत्ररची ते हीये राखै ॥१६॥
चउसट्ठि गाह तणो चौसरणौ, धरमी जन नै मनमे धरणौ ।
बीजौ आउर पचक्खाण, चउरासी गाथा परिमाण ॥२०॥
तीजौ महा पचखाण कहीस, गाथा इकसौ नइ चौत्रीस ।
चोथौ भत्त परिण्णा चाह, इकसौं नै इकहोत्तर गाह ॥२१॥
पंचम पयन्नो तदुलवेयाली, च्यारसै गाह भली तिहां भाली ।
छट्ठो चन्दाविज्झा गाह, इकसौनै छिहुतरि अवगाह ॥२२॥
गणविज्झा ए सत्तम गणियें, भाव भलै सौ गाथा भणियैं ।
मरणसमाहि अट्ठम पयन्न, गाहा जिहां छसै छप्पन्न ॥२३॥

देवेंद स्थुय नवमौ होइ, दाखौ तिहां गाथा सय दोइ ॥
दशम संथारपयन्न सवासौ, दसे सतावीससै परकासौ ॥२४॥
अंग इग्यारं नै उपांग बार, मूल सूत्र चउ नंदि अणुयोगद्वार ।
छ छेद दश पयन्ना मेलीस, ए सूत्र आगम पैंतालीस ॥२५॥
सूत्र पैंतालीस आगम संख्या, सहस अठ्यौत्तर सातसैं कांक्षा ।
आज ऊनाधिक प्रायैं एह, तंत तौ केवलि जांणै तेह ॥२६॥
सूत्र निजुत्ति चुर्णि नै टीका, एहना बहु विस्तार अजीका ।
छलख गुणचालीस सहस्सा, पांचसै छत्तीस जांण रहस्सा ।२७।
कलसः—इमइणैं भरतें आज वरतें, भव्य जीव जिके सही ।
आसता आणी तत्व जाणी, वीर वाणी सरदही ॥
त्रिहुतरैं जेसलमेर नगरें, विजयहर्ष विशेष ए ।
धरमसी पाठक तवन कीधौ. दुरस पुस्तक देख ए ॥२८॥

२४ जिन गणधर साधु साध्वी संख्या गर्भित स्तवन

आदीसर पहलो अरिहंत, गणधर चौरासी गुणवंत ।
प्रणमुं सहस चौरासी साध, साध्वी त्रिणलाख गुणे अगाध ।१।
अजितनाथ बीजो मन आणु, प्रणमीजै गणधर पंचाणु ।
साहू इकलख वंदौ भवियां, त्रिण लख वीस सहस साधवीयां ।२
हिव संभव जिन तीजो होय, गणधर एकसो नै वलि दोय ।
दुइ लख साहु साहुणी सार, तीन लाख छतीस हजार ।३।
अभिनंदन चोथो जिनराय, गणधर एकसौ सोल कहाय ।
तीन लाख मुनि संख्या भाख, आर्या तीस सहस छः लाख ।४।

ढाल—चौपईनी

पांचम सुविधि जिनेसर सेव, सौ गणधर ध्यावो नित मेव ।
तीस सहस तीन लाख मुनीस, साध्वी पंचलख सहसे तीस ।५।

पद्मप्रभु प्रणमुं परभात, गणधर जेहने एक सो सात ।
त्रिण लक्ष तीस सहस अणगार, साहुणी चउलख वीस हजार।६।

श्री सुपास जिणवर सातमौ, नित गणधर पंचाणुं नमो ।
लाख तीन मुनि सूत्रे साख, साध्वी तीन सहस चौ लाख ।७।

अट्ठम जिन चंद्रप्रभु नाम, गणधर त्र्याणु गुण गण धाम ।
लाख अढ़ी मुनि वंदो भवी, चौलख सहस असी साधवी ।८।

ढाल २ हेम घड्यो रतने जड्यो खुंपो, एहनी ।

नवमो सुवधि अठ्यासी गणधर मुनि लख दोइ ।
साधवी त्रिण लाख वीस हजारे अधिकी होइ ।
सीतल दसम इठ्यासी गणधर मुनि लख एक ।
साहुणी पिण इक लख हीज अधिकी छए विवेक । ६ ।

सहस चौरासी मुनि इग्यारम श्रेयास सार ।
छिहुतर गणधर साहुणी इग लख तीन हजार ।
वासुपुज्य जिन बारम जसु छासठि गणधार ।
इक लख साहुणि बहुतर सहस कह्या अणगार । १० ।

साहु अडसठ सहस, सतावन गणधर जाण,
तेरम विमल अज्जा लख उपर आठसें आण ।

चवदम सामि अनंत पचास कह्या गणराय,
छासठ साधनें बासठ साधवी सहसे मिलाय । ११ ।

पनरम धरम तयालीस गणि चौसठ हजार,
साहु साहुणी बासठ सहस अनें सय चार ।
बासठ सहस जतीस छतीस गणाधिप सति ।
सोलम अज्जा इगसठि सहस छसै वलि तंत । १२ ।

ढाल ३ पुरंदर नी ।

साठ सहस मुनि पेतीस गणधर सतरम कुंथु ।
साध्वी साठ हजार ने छसै बोली ग्रन्थ ।
तेत्रीस गणधर अट्ठारम अरि पूरे आस ।
साध्वी साठ हजारे साहु सहस पंचास । १३ ।

मल्लिनाथ उगणीसम साहु सहस चालीस ।
साहुणी सहस पंचावन, गणधर अट्ठावीस ।
वीसम मुनिसुव्रत जसु साधु तीस हजार ।
सहस पचासे साध्वी गणधर जास अढ़ार । १४ ।

इकवीसम नमिनाथ नमुं सतरे गणईस ।
वीस सहस मुनि साध्वी सहसे इगतालीस ।
नेमिनाथ बावीसम साहु सहस अठार ।
साध्वी सहस चालीसे गणधर जास इग्यार । १५ ।

सोल सहस साहु तेवीसम पास जिणेस ।
दश गणधर साहुणी अठतीस हजार गिणेस ।

चौवीसम वर्द्धमान नमुं गणधार इग्यार।
चवदे सहस जतीस, साहुणी छतीस हजार। १६।
चौवीस जिनना चौदहसे बावन गणधर एम।
साहु अठावीस लाख सहस अडतालीस तेम।
साधवी लाख चमालीस सहस छयालीस सार।
ग्यार से उपरि छए घडैं ए संख्याधार। १७।
किणहीक सूत्रें ओछा अधिका कह्या अणगार।
तेपिण चौवीसां ना पूरा नहिं अधिकार।
श्री आवश्यक सूत्रें पूरा सहु सुविचार।
तिणथी संख्या जाणी वंदु वारंवार। १८।

कलसः

इम सतरे से तेपने वरसें दीप परव सुदीसए।
श्री नगर बीकानेर अधिका विजयहर्ष जगीसए।
धर्मध्यान मन धरि कहे पाठक धरमसी नितमेवए।
चौवीस जिन धन राज जेहने ध्याइयें धर्म देवए। १९।

चौवीस जिन अंतर काल, देहायु स्तवन

पंचपरमेष्टि मन शुद्ध प्रणमीकरी,
धरमहित आगम अर्थ हीयडे धरी।
कहिस चौवीस जिन जिन तणो आंतरो,
आउ थित देह परिमाण मत पांतरो।१।
प्रथमही सुखम सुखमा आरो जाणए,
ग्यार कोडा कोडि सागर परिमाणए।

कोस त्रिण्ह देह त्रिणपल्ल आयु धारए,
तीय दिनै तूअर परमाण आहारए ।२।
त्रिण कोडा कोडि सागर सुखम बीय अरो,
देह दो कोस दोई पल्ल आयु धरो ।
बोर परिमाण आहार बीजे दिनै,
युगलीया मानवी एह कहिया जिणै ।३।
दोइ कोडाकोडि सुखम दुःखमा कह्यो,
कोस इक काय इक पल्ल आयु लह्यो ।
आंमलामान आहार लै दिन प्रतै,
काल कर जुगलीया पोहचै सुरगतै ।४।

ढालः वीर जिणेसरनी ।

तिण तीजे अरै तीन वरस साढा अठ मास,
शेष रह्या श्री आदिदेव पहुंता सिववास ।
चौरासी पुव्वलाख वर्ष पाल्यो जिण आयु,
पांचसै धनुष प्रमाण काय राजे जगराय । ५ ।
आदि थकी पंचास कोड लख सागर हेव,
हुयो अजित जिणेसरु ए बीजो जिण देव ।
साढ़ी च्यारसैं धनुष देह दीपै गुणगेह,
बहुतर पूर्व लाख वर्ष आउखो एह । ६ ।
अजित थकी त्रीस कोड लाख सागर गया जाम,
तीजो तीर्थंकर हुवो ए संभव शुभ नाम ।

च्यार सै धनुष सरीर मान धार्यो जिणधीर,
साठ पूर्व लख वर्ष आयु पाल्यो बड़ वीर । ७ ।
संभव थी दस कोड लाख सागर परमाणे,
चोथो अभिनंदन जिणंद महिमा जग जाणे ।
ऊंच पणे जसु देह धनुष तीनसे पंचाम्म,
आयु पचास पूर्व लख वर्ष पाल्यो सुखवास । ८ ।
हिव नव कोडिय लाख जलधि पूरा जव बीता,
पंचम जिणवर सुमतिनाथ हुवा सुमति वदीता ।
तीनसै धनुष सरीर तास शुभ वर्ण सुवास,
चालीस पूरव लाख वर्ष आऊखो जास । ६ ।
सागर नेऊ कोडि सहस हिव वीता जाम,
पद्मप्रभु छठो जिणेसरु ए हुओ गुण धाम ।
अढ़ाईसे धनुष मान काया अभिराम,
तीस पूर्व लख आयु पालि पहुता सिवठाम । १० ।

ढाल:—त्रेकर जोडी ताम, एहनी

हिव नव सहस क्रोडे सागर हुआ सही,
श्री सुपास जिणेसर सातमो ए ।
दुइ सैं धनुषां देह वीस पूरव लख,
आयुथिति नितही नमो ए । ११ ।
हुआ सागर हेव नवसों कोडीय, दौढ़से धनुष देही धरु ए ।
दस पूर्व लख आयु आठम जिनवर, श्रीचन्द्रप्रभु सुखकरु ए ।१२।

सुविधिनाथ सुखकार नवमो जिनवर नेऊ कोडि सागरे ए।
आउ पूर्व लख दोइ, सो धनुषां तनु पाल्यो जिण पूरी परैं ए १३
नीरधि हिव नव कोडि सुवधि जिणेसथी,
शीतल दशमो जिन सही ए।
एक पूर्व लख आव धनुष नेऊ धर काया ऊंच पणै कहीए। १४।
सौ निध छासठ लाख छाबीस सहस वरस
ऊणे इक कोडि सागरू ए।
तिण अवसर श्रेयांस अंग धनुष असी
वरस चौरासीलख धरुए। १५।
जिनवर बारम जाण, चोपन सागरैं वासुपूज्य जिण वंदीये ए।
सत्तरि धनुष सरीर, अति सुख आउखो,
वहुत्तर लाख वर्ष लियें ए। १६।

ढालः—इण पुर कंबल कोइ न लेसी, एहनी

तिण जिन थी हिव सायर तीस, विमलनाथ तेरम जिन ईस।
साठ धनुष काया सु प्रमाण, वर्ष साठ लख आयु वखाण। १७।
हिव नव सायर केरैं अन्त, चवदम जिनवर थयो अनंत।
पूरी काया धनुष पचास, तीन वर्ष लख आयुष तास। १८।
एह थकी चिहु सागर आगे, पनरम धर्म जिणेसर जागें।
पैंतालीस धनुष्य जसु देह, आउप दस लख वर्ष धरेह। १६।
पल्ल त्रिभाग विना त्रिक सागर, सोलम शांतिजिणंद सुखाकर।
चालीस धनुष प्रमाणे काय, एक लाख वरसां नौ आय। २०।

एण थकी पल्योपम आधै, समरू सतरम कुंथु समाधै ।
पामी देह धनुष पैंतीस, आयु पचाणु सहस वरीस । २१ ।
वर्ष एक कोडि सहस विहीन, चोथो भाग पल्योपम कीन ।
त्रीस धनु अरि जिन अट्ठारम, आयु वर्ष चौरासी हजारम ।२२।
वर्ष हुआ इक कोडि हजार, उगणीसम मल्लि जिन अवतार,
तनु पचवीस धनुष नो तास, पचपन सहस वर्ष भववास ।२३।
वोल्या हिव वछर पूरा चोपन लाख,
सामी मुनिसुव्रत हुआ सूत्रे साख ।
वन्दो वीसम जिन वीस धनुष तनु मान,
तीस सहसे वर्ष पाल्यो आयु प्रधान । २४ ।
हिव षट् लख वर्ष हुआ श्री नमिनाथ,
तनु पनरैं धनुप मित सेवो सिवपुर साथ ।
दस सहस वर्ष जिण पाल्यो आयु पडूर,
इकवीसम जिनवर अरचो सुख अंकूर । २५ ।
पंच लाखे पूरे बीते वर्षे वंद,
बावीसम बहु गुण नेमीसर जिण इन्द ।
यादव कुल जगचक्ष दीपें दस धणु देह,
आयु थिति पाली एक सहस वरषेह ।२६।
हिव सहस त्रयासी साल शतक पंचास,
वर्षे त्रेवीसम परगट जिणवर पास ।
नव हाथ प्रमाणे अंग सुरंग सुरेह,
पूरो जिण पाल्यो आयु सो वरसेह । २७ ।

इण थकी अढीसे वर्षे श्री महावीर,
बहुतर वर्षायुष साते हाथ सरीर।
इम सहु बेतालीस सहस वर्ष ऊणेह,
इक कोडि कोडि सागर आदि थी एह। २८।
कलसः—इम अरें तीजे आदि जिणवर, अवर चोथे एमए।
चौवीस जिणवर चितचोखे प्रणमीये बहु प्रेमए।
पुररिणी सतरैंसे पचीसै प्रगट पर्व पजूसणै,
वाचक विजयहर्ष सानिध धर्मसी मुनि इम भणे।२६।

६८ भेद अल्पबहुत्व विचार गर्भित स्तवन

वीर जिणेसर वंदिये, उपगारी अरिहंत।
आगम ए जिण उपदिस्या, एओ ज्ञान अनंत ॥१॥
भला अठाणुं भेदसों, बोल्या अलप बहुत्त।
जिणमें भमियो जोवड़ो, ते सहु बात तहत्ति ॥२॥

ढाल : सफल संसारनी।

सहु थकी अलप नर गर्भज जाणिये (१)
एहनी नारि संख्यात गुण आणिये (२)
अगनि असंख्यात गुण पज्जत बादरा, (३)
एहथी गुण असंख्यात अनुत्तर सुरा (४) ॥३॥
उपरिम (५) मध्य (६) अधत्रिक त्रिक (७) देवता,
अच्युत (८) आरण (९) प्राणत (१०) आनता (११)
एह संख्यात गुण जाणिज्यो अनुक्रमा।
सातमीनरक (१२) असंख्यात गुणइमतमा(१३)।४।

छिव सहस्रार (१४) शुक्र (१५) पंचम नेरया (१६)
लांतक (१७) चतुर्थीनर्क (१८) ब्रह्मदेवया (१९)
तीय, पृथ्वीय (२०) माहेन्द्र (२१) असंखगुणा,
सनतकुमार (२२) बीयनिरय अनुक्रम घणा (२३)
ठाम चौवीसमी मनुष्य संमूर्च्छिमा, (२४)
देवईशान असंख गुण निभ्रमा (२५) । ६ ।

देवी ईशानरी (२६) सुधर्मसुरजिके (२७)
तेहनी, त्रीय संख्यात गुणीयै तिके (२८) । ६ ।
भवणवइदेव असंख्यात (२६) देवी संख्या बहु (३०)
प्रथमनारकि असंखेय गुणीया सबहु (३१)
बोल बतीसमें खेचर पंचेन्द्रिया,
तिरिय असंख्यात गुणा(३२) संख्य गहनीत्रिया(३३)।७।

ढाल : तिण अवसर कोइ मागध आयो पुरंदर पास ।

थलचर तिरिय पुरष(३४) त्री(३५) जलचरिमिथुन (३६-३७) लहेस,
व्यंतर देवनें (३८) देवीय (३६) ज्योतिषी युगम(४० ।४१)कहेस ।
खचरतिरी(४२)थलचर(४३)जलचरय(४४)नपुंसक जेह ।
अनुक्रमें एह इग्यार संख्यात गुणा करि लेह ॥ ८ ॥
वलि परजापति चोरिन्दी संख्यात गुणेह (४५)
पज्जत संज्ञि पंचेन्द्रि विशेषे अधिका तेह (४६)
पज्जबइन्द्रि (४७) पज्जतेइन्द्रि विशेष (४८) विशेष
अडतासीस ए बोल कह्या अनुक्रम गिण देख ।६।

पंचेन्द्रि अपज्जत असंखगुणा ए जाण (४९)
चोरिन्द्रि तेइन्द्रि (५१) बेइन्द्रि (५२) अपज विशेष वखाण।
प्रत्येक वनस्पतिय(५३)निगोद(५४)पृथ्वी(५५) अप(५६)वाय(५७)
बादर परजापत पांच असंख गुणाय ॥१०॥
हिवअपज्जत्ता बादर अग्नि अठावनेबोल (५८)
एहवा हीज वनस्पति असंखगुणी इणतोल (५९)
वलिय निगोद(६०)पुढ़वी(६१)अप(६२)वाय(६३) एच्यारे जाण।
बादर अपजत्ता असंख्यात गुणा परिमाण ।११।
इहांथी सुक्ष्मअपज्जत अगनि असंख गुणेह (६४)
भू (६५) जल(६६)पवन (६७) इसाज विशेष धरेह।
अड़सट्ठिमो इहां सूक्ष्म पज्जत तेउ गिणेस (६८)
पुढ़वी (६९) अप्प ने (७०) वायु (७१) पज्जता सुक्ष्म विशेष ।१२।

ढाल—बेकर जोडी ताम एहनी।

बहुतरमें हिव बोल सूक्ष्म अपज्जत, जीव निगोदे जाणिवाए,(७२)
असंख्यात गुण एहएहथी पज्जत संख्याते गुण आणवाए (७३)।१३।
अनंतगुणा अधिकार इहांथी आगले भव्य अनंत गुणा सहीए(७४)
ए चिहुतरमो समकित नहीं लहै, मोक्ष कदे लहिस्ये नहीए ।१४।
समकित पतितने(७५)सिद्ध(७६)अनंतागुणा,एलेखवल्यौ अनुक्रमेए।
बादर रूप पज्जत वनस्पतितणा(७७)जीव अनंत गुणा भमैए।१५।

सामान्यरूपे सर्वबादर पज्जत, जीव विशेषाधिक कहीए, (७८) वणबादर अपज्जत असंखगुणा इहां, ठाम गुण्यासीमें लहीए।१६। अपज्जत बादर जीव (८०) वलि बादरसहु, (८१) अधिका अधिक विशेषथीए।

सुहम अपज्ज वणस्स असंख्यगुणा इम, सुण बयासी सांसौ नथीए१७ अपज्जत सुहम विशेष(८३)सूक्ष्मपज्जती वनस्पतिअसंखीगुणैए(८४) इण चौरासी बोल इहांथी आगले सर्व विशेषाधिक पणैए। १८। सुक्ष्म पज्जत्ता जाण (८५) सूखम सहु गिणौ (८६) भव्य सत्यासी में भणौए (८७)। जाणौ जीवनिगोद (८८) वलियवनस्पती (८६) एकेन्द्रि अधिकागिणौ ए (६०)। १६।

जाणौ तृयंचजाति (६१) इक्काणु इहां मिथ्यादृष्टिवांणमोए (६२) अविरत जीव अवशेय (६३)-सकसाइ सहु, (६४) चावौ भेद चौराणुमो ए। २०।

मानोहिव छद्मस्थ (६५) सर्व सयोगीय (६६) भववासी भणियै सहुए(६७)। जीवजिता सहु जाणं एह अठाणुमो, बोल विवेककरो बहुए (६८)। २१।

कलस :—

इम वीर वाणी सुणो प्राणी सूत्र पन्नवणा थकी।
ए भेद आण्या जिणे जाण्या तियै सिद्ध वधू तकी।
सुख विजयहर्ष विशेष श्रीसंघ धर्म शील भला धरे।
जेसाणगढ़ में तवन जोड़्यो संवत सतरे बहुत्तरै। २२।

इति अल्पबहुत्व-विचार गर्भित श्रीमहावीर स्तवनम्

चौवीस दण्डक स्तवन

ढाल—आदर जीव क्षमा गुण आदर

पूर मनोरथ पास जिनेसर, एह करूं अरदास जी।
तारण तरण विरुद तुझ सांभलि, आयो हुं धरि आस जी।१।पू०
इण संसार समुद्र अथागें, भमियो भवजल मांहि जी।
गिलगिचिया जिम आयो गिड़तौ, साहिब हाथे साहिजी।२।पू०
तुं ज्ञानी तो पिण तुझ आगें, वीतग कहिये वात जी।
चौवीसे दंडके हुं फिरीयो, वरणुं तेह विख्यात जी॥ ३॥ पू०
साते नरक तणो इक दंडक, असुरादिक दस जाण जी।
पांच थावर नें त्रिणि विकलेंद्रि, उगणीस गिणती आण जी। ४।
पंचेंद्रि तिरजंच नै मानव, एह थया इकवीस जी।
विंतर जोतिषी नै वैमानिक, इम दंडक चौवीस जी॥५॥पू०
पंचिंद्री तिरजंच अने नर, परजापता जे होइ जी।
ए चउविह देवां मांहे ऊपजै, इम देवें गति दोइ जी॥ ६॥ पू०
असंख्यात आउखें नर तिरि, निसचै देवज थाय जी।
निज आऊखा सम कि ओछे, पिण अधिके नवि जाय जी॥७॥
भवणपती के विंतर तांई, संमूरछिम तिरजंच जी।
सरग आठमें तांइ पहुंचे, गरभज सुकृत संच जी॥ ८॥ पू०
आऊ संख्याते जें गरभज, नर तिरजंच विवेक जी।
बादर पृथिवी ने वलि पाणी, वनसपती परतेक जी॥ ६॥ ०पू

परजापते इण पांचे ठामे, आवी उपजै देव जी।
इण पांचा माहें पिण आगे, अधिकाई कहुं हेव जी॥ १०॥ पू०
तीजा सरग थकी मांडी सुर, एकेंद्रि नवि थाय जी।
अठम थी ऊपरला सगला, मानव मांहि ज जाय जी॥ ११॥

ढाल—आज निहेजो दीसें नाहलो

नरक तणी गति आगति इणपरें, जीव भमें संसार।
दोइ गति नं दोइ आगति जाणिये, वलिय विशेष विचार॥१२॥
संख्यातें आऊ परजापता, पंचेंद्री तिरजंच।
तिमहिज मनुष्य बे हिज ए, नरकमें जाये पाप प्रपंच॥ १३॥
प्रथम नरक लगि जाइ असन्नीयौ, गोह नकुल तिम बीय
गृध्र प्रमुख पंखी त्रीजी लगै, सींह प्रमुख चौथीय॥ १४॥
पांचमी नरके सीमा सांपनी, छट्ठी लगि स्त्री जाय।
सातमीयें माणस के माछला, उपजे गरभज आय॥ १५॥
नरक थकी आवें विहुं दंडके, तिरजंच कै नर थाय।
ते पिण गरभज तें परजापता, संख्याती जसु आय॥ १६॥
नारकियां नै नरक थी नीसरया, जेफल प्रापति होय।
उत्कृष्टे भांगे करते कहुं, पिण निश्चै नहीं कोय॥ १७॥
प्रथम नरक थी उवटि चक्रवृति हुवै, बीजी हरि बलदेव।
त्रीजी लगि तीरथंकर पद लहै, चौथी केवल एव॥ १८॥
पंचम नरक नो सरवविरति लहै, छट्ठी देसविरत्ति।
सत्तम नरक थी समकित हिज लहै, न हुवै अधिक निमित्त १९

ढाल—करम परीक्षा करण कुमर चल्योरे।

मानव गति विण मुगति हुवै नहीं रे, एहनौ इम अधिकार।
आऊ संख्यातें नर सहु दंडके रे, आवी लहै अवतार॥ २०॥

तेऊ वाऊ दंडक बे तजी रे, बीजा जे बावीस ।
तिहां थी आया थावै मानवी रे, सुख दुख पुण्य सरीस ।२१।
नर तिरजंच असन्नी आउखें रे, सातमी नरक ना तेम ।
तिहां थी मरि नें मनुष हुवे नहीं रे, अरिहंत भाख्यौ एम ।२२।
वासुदेव बलदेव तथा वली रे, चक्रवरति अरिहंत ।
सरग नरक ना आया ए हुवै रे, नर तिरि थी न हुवंत ॥२३॥
चौविह देव थकी चवि ऊपजें रे, चक्रवरति बलदेव ।
वासुदेव तीर्थंकर ते हुवै रे, वैमानिक थी बेव ॥२४॥

ढाल—हेम घडयो रतने जड्यो सु पो,

हिव तिरजंच तणी गति आगति कहय अशष ।
जीव भम्यो इण परि भव माहे करम विशेष ॥
आउ सख्याती जे नर नै तिरजच विचार ।
ते सगला तिरजचा माहे लहें अवतार ॥२५॥
जिण तिरजचां माहें आवे नारक देव ।
तेह कह्यौ पहिली तिण कारण न कहु हेव ॥
पचेंद्रि तिरजच सख्यात आऊखै जेह ।
तेह मरी चिहुगति माहे जावे इहा न सदेह ॥२६॥
थावर पाच त्रिणें बिकलिंदी आठे कहावे ।
तिहां थी आऊ सख्याती नर तिरजच मे आवैं ॥
बिकल मरी लहे सरवबिरति पिण मोख न पावें ।
तेउ वाउ थी आयौ तेह नै समकित नावै ॥२७॥
नारक वरजी ने सगलाई जीव संसारै ।
पृथिवी आऊ वनसपति मांहे लहै अवतारै ॥

ए तीनें उवटी इहांथी आवै दस ठामें ।
थावर विकल तिरी नर मांहे उतपति पामै ॥२७॥
पृथिवीकाय आदे देई दश दंडक एह ।
तेऊ वाऊ मांहे आवी ऊपजै तेह ॥
मनुष विना नव मांहे तेऊ वाऊ बे जावै ।
विकलिंदी ते दश मांहि जावै पूठा ही आवै ॥२८॥
एम अनादि तणौ मिथ्याती जीव एकंत ।
वनसपति मांहे तिहां रहियो काल अनंत ॥
पुढवी पाणी अगनि अनै चौथो वलि वाय ।
कालचक्र असंख्याता तांई जीव रहाय ॥२६॥
बेइंद्री तेरिंद्रीने चोरेन्द्री मझारें ।
संख्याता वरसां लगि रहियौ करम प्रकारै ॥
सात आठ भव लगतां नर तिरजंच में रहियौ ।
हिव मानव भव लहिनै साधनो वेष में गहियौ ॥३०॥
रागद्वेष छूटै नहीं किम ह्वै छूटक बार ।
पिण छै मन सुध माहरै तुं हिज एक आधार ॥
तारणतरण मैं त्रिकरण शुद्धं अरिहंत लाधौ ।
हिव संसार घणां भमिवौतौ पुदगल आधौ ॥३१॥
तूं मन वंछित पूरण आपद चूरण सामी ।
ताहरी सेव लही तौ मै हिव नव निधि पामी ॥
अवर न कोई इच्छुं इण भवि तूं हिज देव ।
सूधें मन इक ताहरी होज्यो भव भव सेव ॥३२॥

॥ कलश ॥

इम सकल सुखकर नगर जेसलमेर महिमा दिण दिणै ।
संवत्त सत्तरै उगणतीसै दिवस दीवाली तणै ॥
गुण विमलचंद समान वाचक विजयहरष सुशीस ए ।
श्री पासना गुण एम गावै धरमसी सुजगीस ए ॥३३॥

श्री समवशरण विचार स्तवनम्

॥ दोहा ॥

श्री जिन शासन सेहरौ, जग गुरू पास जिणिंद ।
प्रणमै जेहना पद कमल, आवी चौसठि इंद ॥ १ ॥
तीर्थंकर आवै तिहां, त्रिगढौ करय तयार ।
समकित करणी साचवै, एह कहुं अधिकार ॥ २ ॥
करै प्रशंसा समकिती, मिथ्यात्वी ह्वै मूक ।
सूर्य देखि हरखै सहू, घणै अंधारै घूक ॥ ३ ॥

ढाल (१) वीर वखाणी राणी चेलणा जी

आप अरिहंत भले आविया जी, गावै अपछरह गंधर्व ।
समवशरण रचे सुरवरा जी, संखेपे ते कहुं सर्व । आ० ॥ ४ ॥
भवनपती इन्द्र वीसे मिल्या जी, सोल दू विंतर सार ।
जोइस दु दस विमाणी जुड्या जी, चउसठ्ठि इन्द्र सुविचार ।५।
पवन सुर पुंजी परमारजी जी, भूमि योजन सम भाउ ।
मेघकुमार रचि मेघनै जी, करय सुगंध छड़काउ । आ० ॥ ६ ॥
अगर कपूर शुभ धूपणा जी, करय श्री अगनिकुमार ।
वाणविंतर हिव वेग सुं जी, रचय मणि पीठिका सार ॥ ७ ॥
पुहप पंच वरण ऊरध मुखे जी, वरषए जाणु परिमाण ।
भवणवइ देव त्रिगढो भलो जी, करय ते सुणहु सुजाण ॥ ८ ॥
रचय गढ प्रथम रूपा तणौ जी, सोवन कांगुरे सार ।
रवि शशि रयण कोसीसके जी, कनक कौ बीय प्राकार ॥ ९ ॥

रतन गढ रतन रै कांगुरें जी, रचय वेमाण सुर राज ।
भलो त्रीजो गढ भीतरे जी, तिहां विराजै जिनराज ॥आ१० ॥
भींति ऊंची धणु पांचसैं जी, सवा तेत्रीस विसतार ।
धनुष सैं तेर गढ अंतरौ जी, प्रोलि पंचास धनु च्यार ॥ ११ ॥
दश पंच पंच त्रिहुं गढ तणी जी, पावड़ी वीस हजार ।
थाक श्रम नहिय चढतां थकां जी, एक कर उंच विस्तार ॥१२॥
पंच धणु सहस पृथ्वी थकी जी, उंच रहै त्रिगढ आकास ।
तेह तलि सहु यथास्थित वसे जी, नगर आराम आवास ॥१३॥
तोरण त्रिक चिहुं दिसि तिहां जी, नीलमणि मोर निरमाण ।
दुसय धणु मध्य मणिपीठिका जी, उंच जिण देह परिमाण ।१४।
च्यार आसण तिहां चिहुं दिसि जी, मोतीए झाक झमाल ।
सम विचें कूण ईसाणमें जी, देवछंदौ सुविशाल ॥आ० ॥१५॥
देव दुंदुभि नाद उपदिसें जी, जिण गुण गावसी जेह ।
अम्ह जिम आइ सहु ऊपरे जी, गाजसी तेह गुण गेह ॥ १६ ॥

ढाल (२) सफल ससार नी

पुव्व दिसि आसणै आइ बैसैं पहू, सुरकृत चौमुख रूप देखै सहू।
दीपै अशोक तरु बार गुण देह थी,
देखि हरखै सहु मोर जिम मेह थी ॥ १७ ॥
मोतियां जाल त्रिण छत्र सुविसाल ए,
रूप चिहुं दिसै चामर ढाल ए ।
योजन गामिणी वाणि जिणवर तणी,
भगवंत उपदिशै बार परषद भणी ॥ १८ ॥

प्रदिक्षणा रूप थी अगनि कूर्णे करी,
गणधर साधवी तिम विमाणी सुरी।
ज्योतिषी भुवणिनी विंतरी त्री पणै,
नैऋत कूण जिण वाणि ऊभी सुणै ॥ १६ ॥
त्रिहुं तणा पति वायु कूण में जाण ए,
सुर विमाणीय नर नारि ईसाण ए।
बार परिषद मद मच्छर छोड़ ए,
भूख तृष वीसरैं सुणैं कर जोड़ ए ॥ २० ॥
पूठि भामंडल तेज परकास ए,
जोयण सहस धज ऊंच आकास ए।
झलहलै तेज धर्मचक्र गगने सही,
महक सहु बारणै धूप धाणा मही ॥ २१ ॥
वाहण वहिल सहि धरिय पहिलै गढै,
होइ पगचार नर नारि ऊंचा चढै।
जिण तणी वाणि सुणि जीव तिरजंच ए,
वैर तजि बीय गढ रहै सुख संच ए ॥ २२ ॥
पुण्यवंत पुरुष ते परिषद बारमै,
सुणै जिण वाणि धन गिणय अवतार मै।
चौवहि देव जिणदेव सेवा रसे,
मणिमयी मांहिली प्रोलि मांहे बसै ॥ २३ ॥
चिहुं दिसि वाटुली वावि चौ जाणियै,
विदिसि चौकूणी दोइ दोइ वाखाणीयें।

आवि जिहां वावि जल अमृत जेम ए,
स्नान पामैं वपू निरमल हेम ए ॥ २४ ॥

जय विजया अपराजि जयंतिया,
मध्य कंचणगढ़ै प्रोलि बसंतिया ।

तुंबुर पुरुष षट्ंग अर्चिमाल ए,
रजत गढ प्रोलि ना एह रखपाल ए ॥ २५ ॥

पहिल त्रिगढौ न हुअ जिण पुर ग्राम ए,
देव महर्धिक रचैं तिण ठाम ए ।

करण वार वार कारण नहिं कोइ ए,
आठ प्रातिहारज ते सही होइ ए ॥ २६ ॥

जिन समवशरण नी ऋद्धि दीठी जीए,
तेह धन धन्न अवतार पायो तिए ।

पास अरदास सुणि वंछित पूरज्यो,
हिव मुझ ताहरौ शुद्ध दरसण हुज्यो ॥ २७ ॥

॥ कलश ॥

इम समवशरणै रिद्धि वरणै सहू जिणवर सारिखी ।
सरदहै ते लहै शुद्ध समकित परम जिनध्रम पारिखी ॥
प्रकरण सिद्धंत गुरु परंपर सुणी सहु अधिकार ए ।
संस्तव्यौ पास जिणंद पाठक धरमवरधन धार ए ॥ २८ ॥

—:※:—

चौदह गुणस्थानक स्तवन

ढाल—थंभणपुर श्री, एहनी

सुमति जिणंद सुमति दातार, वंदुं मन सुध वारो वार,
आणी भाव अपार ।
चवदै गुणथानक सुविचार, कहिसु सूत्र अरथ मन धार,
पावै जिण भव पार ॥१॥

प्रथम मिथ्यात कह्यौ गुणठाणौ, बीजौ सासादन मन आणौ,
तीजो मिश्र बखाणो ।
चौथो अविरति नाम कहाणौ, देशविरति पंचम परमाणौ,
छट्ठौ प्रमत पिछाणौ ॥२॥

अप्रमत्त सत्तम सलहीजै, अठम अपूरव करणकहीजै,
अनिवृत्ति नाम नवम्म ।
सूषम लौभ दशम सुविचार, उपशांतमोह नाम इग्यार,
खीणमोह बारम्म ॥ ३ ॥

तेरम सयोगी गुणधाम, चवदम थयौ अयौगी नाम,
वरणु प्रथम विचार ।
कुगुरु कुदेव कुधर्म वखाणै, ते लक्षण मिथ्या गुण ठाणैं,
तेहना पंच प्रकार ॥ ४ ॥

ढाल—२ सफल संसारनी

जेह एकांत नय पक्ष थापी रहै,
प्रथम एकांत मिथ्यामती ते कहै।
ग्रंथ ऊथापि थापै कुमति आपणी,
कहै विपरीत मिथ्यामती ते भणी ॥ ५ ॥
शैव जिनदेव गुरु सहु नमै सारिखा,
तृतीय ते विनय मिथ्यामती पारिखा।
सूत्र नवि सरदहै रहै विकलप घणै,
संशयी नाम मिथ्यात चौथो भणै ॥ ६ ॥
समझि नहिं काइ निज धंध रातो रहें,
एह अज्ञान मिथ्यात पंचम कहै।
एह अनादि अनंत अभव्य नै,
कहय अनादि थिति अंत सुं भव्य नै ॥७॥
जेम नर खीर घृत खंड जिमनैं वमैं,
सरस रस पाइ वलि स्वाद कंहवौ गमे।
चउथ पंचम छठै ठाण चढि नै पड़ै,
किणही कषाय वसि आइ पहिलै अड़ै ॥८॥
रहै विचै एक समयादि षट आवली,
सहिय सासादनें थिति इसी सांभली।
हिव इहां मिश्र गुणठाण त्रीजो कहै,
जेह उत्कृष्ट अंतरमहूरत लहै ॥ ६ ॥

ढाल—३ बेकर जोड़ी ताम रहनी

पहिला च्यार कषाय शम करि समकिती,
कैंतों सादि मिथ्यामती ए।
ए बे हिज लहै मिश्र सत्य असत्य जिहां
सरदहणा बेहुं छती ए ॥ १० ॥

मिश्र गुणालय मांहि मरण लहै नहीं
आउ बंध न पड़ै नवै ए।
कैंतो लहि मिथ्यात के समकित लही,
मति सरिखी गति परिभवै ए ॥ ११ ॥

च्यार अप्रत्याख्यान उदय करी लहै,
व्रत विण सुध समकित पणौ ए।
ते अविरत गुणठाण तेत्रीस सागर,
साधिक थिति एहनी भणौ ए॥ १२ ॥

दया उपशम संवेग निरवेद आसता, समकित गुण पांचे धरै ए।
सहु जिन वचन प्रमाण जिनशासन तणी,
अधिक अधिक उन्नति करै ए ॥ १३ ॥

केइक समकित पाय पुदगल अरध तां, उत्कृष्टा भव में रहै ए ।
केइक भेदी गंठि अंतरमहूरतै, चढतै गुण शिवपद लहै ए ॥१४॥
च्यार कषाय प्रथम्म त्रिणवली मोहनी, मिथ्या मिश्र सम्यक्तनी ए।
साते परकृति जास परही उपशमै,
ते उपशम समकित धनी ए ॥ १५ ॥

जिण साते क्षय कीध वे नर क्षायिकी,
तिणहिज भव शिव अनुसरै ए।
आगलि बांध्यो आय तौ ते तिहां थकी,
तीजै चौथे भव तरे ए॥१६॥

ढाल—४ इण पुर कंबल कोई न लेसी

पंचम देश विरति गुणथान, प्रगटै चौकड़ी प्रत्याख्यान।
जेण तजै बावीस अभक्ष्य, पाम्यौ श्रावकपणौ प्रत्यक्ष॥१७॥
गुण इकवीस तिके पिणधारै, साचा बारै व्रत संभारै।
पूजादिक षट कारिज साधै, इग्यारै प्रतिमा आराधै॥१८॥
आरत रौद्रध्यान है मंद, आयौ मध्य धरम आनंद।
आठ वरस ऊणी पुव कोड़ि, पंचम गुणठाणै थिति जोड़ि॥१९॥
हिव आगै साते गुणथान, इक इक अंतरमहूरत मान।
पांच प्रमाद वसै जिण ठाम, तेण प्रमत्त छट्ठो गुण धाम॥२०॥
थिवरकलप जिनकलप आचार, साधै षट आवश्यक सार।
उद्यत चौथा च्यार कषाय, तेण प्रमत्त गुणठाण कहाय॥२१॥
सूधौ राखै चित्त समाधै, धर्म ध्यान एकान्त आराधै।
जिहां प्रमाद क्रिया विधि नासै, अपरमत्त सत्तम गुण भासै।२२।

ढाल—५ नदि जमुना के तीर, एहनी

पहलै अंशै अट्ठम गुणठाणा तणै, आरंभै दोइ श्रेणि संखेपै ते भणै।
उपशम श्रेणि चढै जे नर है उपशमी,
क्षपक श्रेणि क्षायक प्रकृति दशाक्षय गमी।२३।

जिहां चढता परिणाम अपूरब गुण लहै,
अट्ठम नाम अपूर्व करण तिणै कहै ।
शुक्लध्यान नौ पहिलो पायो आदरै,
निर्मल मन परिणाम अडिग ध्याने धरै ।२४।
हिव अनिवृति करण नवमो गुण जाणियै
जिहां भावथिर रूप निवृति न आणीयै ।
क्रोध मान नै माया संजलणा हणै,
उदय नहीं जिहां वेद अवेद पणो तिणै ।२५।
तिहां रहै सूषम लोभ कांइक शिव अभिलषै,
ते सूखमसंपराय दशम पंडित दखै ।
शांतमोह इण नाम इग्यारम गुण कहै,
मोह प्रकृति जिणठाम सहु उपशम लहै ।२६।
श्रेणि चढ्यौ जौ काल करै किणही परै,
तो थाये अहमिंद्र अवरगति नादरै ।
च्यार वार समश्रेणि लहै संसार में,
एक भवैं दोइ वार अधिक न हुवै किमै ।२७।
चढि इग्यारम सीम शमी पहिलै पड़ै,
मोह उदय उत्कृष्ट अर्ध पुद्गल रडैं ।
खिपक श्रेणि इग्यारम गुणठाणौ नहीं,
दशम थकी बारम्म चढै ध्याने रही ।२८।

ढाल—६ इक दिन कोई मागध आयो पुरंदर पास

खीणमोह नामैं गुणठाणौ बारम जाण,
मोह खपायें नेड़ो आयौ केवलनाण।
प्रगटपणै जिहां चारित अमल यथा आख्यात,
हिव आगै तेरम गुणथान तणी कहै वात ।२९।
घातीया चौकड़ीक्षय गई रहीय अघाती एम,
प्रकृति पच्यासी जेहनी जूना कप्पड़ जेम।
दरसण ज्ञान वीरिज सुख चारित पांच अनंत,
केवलनाण प्रगट थयौ विचरैं श्री भगवंत ।३०।
देखैं लोक अलोकनी ज्ञानी परगट बात,
महिमावंत अढारह दूषण रहित विख्यात।
आठे वरसे ऊण कही इक पूरब कोड़ि,
उत्कृष्टी तेरम गुणथान तणी थिति जोड़ि ।३१।
रकि शैलेसी करण निरुंध्या मन वच काय,
तेण अयोगीअंत समै सहु करम खपाय।
पांचे लघु अक्षर ऊचरतां जेहनौ मान,
पंचमगति पामै सुखसुं चवदम गुणथान ।३२।
तीजैं बारमै तेरमै माहे न मरैं कोई,
पहिलौ बीजौ चौथौ परभव साथै होइ।
नारक देव नी गति में लाभैं पहिला च्यार,
धुरला पंच तिरिय में मणुए सर्व विचार ।३३।

॥ कलश ॥

इम नगर बाहड़मेर मंडण, सुमति जिन सुपसाउलैं।
गुणठाण चवद विचार वरण्यो, भेदि आगम नै भलै॥
संवत सतरैं उगुणत्रीसैं, श्रावण वदि एकादशी।
वाचक्क विजयहरक्ख सानिधि, कहै इम मुनि धरमसी ॥३४॥

चौरासी आशातना स्तवन

ढाल—जिससे ऋद्धि समृद्धि मिली ।

जय जय जिण पास जगत्र धणी, शोभा ताहरी संसार सुणी ।
आयो हुं पिण धरि आस घणी, करिवा सेवा तुम्ह चरण तणी १
धन जन जे न पड़ै जंजालै, उपयोग सुं बेसि जिन आलै ।
आसातन चौरासी टालै, शाश्वत सुख तेहिज संभालै ॥ २ ॥
जे नांखें सलेषम जिनहर में, कलहउ करें गाली जूअ रमै ।
धनुषादि कला सीखण ढुकै, कुरलौ तंबोल भखै थूकै ॥ ३ ॥
सरै वाय वडी लघु नीति तणी, संज्ञा कंगुलिया दोष सुणी ।
नख केस समारण रुधिर क्रिया, चांदी नी नांखै चांवड़िया ।४।
दांतण नै वमन पियैं कावौ, खावइ धाणी फूली खावौ ।
सूवे वीसामणि विसरामै, अजगज पसु नइ दामण दांमें ॥ ५ ॥
सिर नासा कान दशन आंखें, नख गाल वपुस ना मल नांखै ।
मिलणौ लेखौ करइ मंतरणौ, विहचण अपणौ करि धन धरणौ ।६।
बैसे पग ऊपरि पग चडियां, थापै छाणा छड़ ढुंढणियां ।
सुकवइ कप्पड़ कप्पड़ वड़ियां, नासीय छिपइ नृपभय पड़ियां।।७।
शोके रोवै विकथाज कहै, इहां संख्या बैंतालीस लहैं ।
हथियार घड़ै नै पशु बांधै, तापै नाणौ परिखैं रांधइ ॥ ८ ॥
भांजी निसही जिनगृह पेंसइ, धरि छत्र नें मंडप में बइसें ।
हथियार धरै पहिरै पनही, चांवर बीजै मन ठाम नहीं ॥ ९ ॥
तनु तेल सचित फल फूल लिये, भूषण तजि आप कुरूप थियै ।
दरसणथी सिर अंजलि न धरइ, इग साड़ें उतरासंग करै ॥१०॥

छोगौ सिरपेच मउड़ जोड़ै, दर्पिए रमै नइ बहसें होड़ै ।
सयणां सुं जुहार करै मुजरौ, करें भांड चेष्टा कहै वचन बुरौ ११
धरें धरणुं झगड़ैं उलंठी, सिर गुंथै बांधैं पालंठी ।
पसारइ पग पहिरइ चाखड़ियां, पग झटकि दिरावै दुड़वड़ियां १२
कर्दम लुहै मैथुन मंडै, जूँआं वलि अइंठि तिहां छंडै ।
ऊघाड़ै गूझ कर वइदां, काढै व्यापार तणी कंदां ॥ १३ ॥
जिनहर परनाल नौ नीर धरइ, अंघोलै पीवा ठाम भरै ।
दूषण जिण भवण में ए दाख्या, देव वंदण भाष्य में जे भाख्या १४
सुज्ञानी श्रावक सगति छतां, आसातन टालें बार सतां ।
परमाद वसें कांइ थायै, आलोयां दोष सहू जायै ॥ १५ ॥
तंबोल नै भोजन पान जुआ, मल मूत्र शयन स्त्री भोग हुआ ।
थूकण पनही ए जघन दसे, वरज्या जिन मंदिर मांहि वसै ।१६।
द्रव्यत नै भावित दोइ पूजा, एहना हिज भेद कह्या दूजा ।
सेवा प्रभु नी मन शुद्ध करै, वंछित सुख लीला तेह वरै ॥ १७॥

॥ कलश ॥

इम भव्य प्राणी भाव आणी, विवेकी शुभ वातना ।
जिन बिंब अरचइ परी वरजइ चौरासी आसातना ॥
ते गोत्र तीर्थंकर ज अरजें नमइ जेहनइ केवली ।
चवझाय श्री धमसीह वंदै जैन शासन ते वली ॥ १८ ॥

———

अट्ठावीस लब्धि स्तवन

॥ दोहा ॥

प्रणमं प्रथम जिणेसरू, शुद्ध मनै सुखकार,
लबधि अट्ठावीस जिण कही, आगम नै अधिकार ॥१॥
प्रश्नव्याकरणै प्रगट, भगवति सूत्र मझार,
पन्नवणा आवश्यकैं, वारू लबधि विचार ॥२॥
अमल तपैं करि ऊपनै, लबधां अट्ठावीस,
ए हिव परगट अरथ सुं, सांभलिज्यो सुजगीस ॥३॥

ढाल १ सफल संसार नो।

अनुक्रमे हेव अधिकार गाथा तणै,
लब्धि ना नाम परिणाम सरिखा भणै।
रोग सहु जाय जसु अंग फरस्यां सही,
प्रथम ते नाम छै लबधि आमोसही ॥४॥
जास मलमूत्र औषध समा जाणियै,
वीय विप्पोसही लबधि वखाणियें।
श्लेषमा औषध सारिखौ जेहनौ,
त्रीजी खेलोसही नाम छै तेहनौ ॥५॥
देहना मैल थी कोढ दूरे हुवै,
चौथी जल्लोसही नाम तेहनो चवै।
केस नख रोम सहु अंग फरसें लही,
रहै नहीं रोग सव्वोसही ते कही ॥६॥

एक इन्द्रिय करी पांच इन्द्रियतणा,
भेद जाणै तिका नाम संभिन्नणा ।
वस्तु रूपी सहु जाणियै जिण करी,
सातमी लबधि ते अवधिज्ञाने धरी ॥७॥

ढाल २ आव्यौ तिहा नरहर, एहनी

हिव आंगुल अढीये ऊणो माणुष खित्त,
संगन्या पंचेंद्री तिहां जे वसय विचित्त,
तसु मन नौ चिंतित जाणै थूल प्रकार,
ते ऋजुमति नामै अट्ठम लबधि विचार ॥८॥
संपूरण मानुष खेत्रैं संज्ञावंत,
पंचेन्द्रिय जे छै तसु मन वातां तंत ।
सूषम परिजायें जाणै सहु परिणाम,
ए नवमी कहियै विपुलमती शुभ नाम ॥९॥
जिण लबधि परमाणे ऊडी जाय आकास,
ते जंघा विद्याचारण लबधि प्रकास ।
जसु वचन सरापै खिण में खेरू थाय,
ए लबधि इग्यारमी आसी विस कहवाय ॥१०॥
सहु सूखम बादर देखै लोक अलोक,
ते केवल लबधी बारमीयें सहु थोक ।
गणधर पद लहियै तेरम लबधि प्रमाण,
चवदम लबधें करि चवदह पूरब जाण ॥ ११ ॥

तीर्थंकर पदवी पामै पनरम लद्धि,
सोलम सुखकारी चक्रवर्त्ति पद रिद्धि ।
बलदेव तणौ पद लहीयें सतरम सार,
अट्ठारम आखां वासुदेव विसतार ॥ १२ ॥
मिश्री घृत खीरें मिल्यां जेह सवाद,
एहवी लहै वाणी उगणीसम परसाद ।
भणियौ नवि भूलै सूत्र अरथ सुविचार,
ते कुट्ठग बुद्धी बीसम लबधि विचार ॥ १३ ॥
एकें पद भणियै आवै पद लख कोड़ि,
इकवीसम लबधी पायाणुसारणी जोड़ि ।
एकें अरथें करि उपजै अरथ अनेक,
बावीसमी कहियै बीज बुद्धि सुविवेक ॥ १४ ॥

ढाल (३) कपूर हुवै अति ऊजलो रे

सोलह देश तणी सही रे, दाहक सकति बखाण ।
तेह लबधि तेवीसमी रे, तेज्यो लेश्या जाण ॥ १५ ॥
चतुर नर सुणिज्यो ए सुविचार, आगम नै अधिकार ।च०।
चवद पूरबधर मुनिवरू रे, ऊपजतां संदेह ।
रूप नवौ रचि मोकलै रे, लबधि आहारक एह । च० ॥ १६ ॥
तेजो लेश्या अगनि में रे, उपशमिवा जलधार ।
मोटी लबधि पचीसमी रे, शीतल लेश्या सार । च० ॥ १७ ॥

जेण सकति सुं विकुरवें रे, विविध प्रकारे रूप ।
सदगुर कहै छावीसमी रे, वैक्रिय लबधि अनूप ।च०॥१८॥
एकणि पात्रे आदमी रे, जीमीवै केई लाख ।
तेह अखीण महाणसी रे, सत्तावीसम साख ॥च०॥१६॥
चूरे सेन चक्रीसनी रे, संघादिक नै काम
तेह पुलाक लबधि कही रे, अट्ठावीसम नाम ॥च०॥२०॥
तेज शीत लेश्या बिन्हे रे, तेम पुलाक विचार ।
भगवती सूत्र में भाखियौ रे, ए त्रिहुं नो अधिकार ॥च०॥२१॥
चक्रवर्ति बलदेव नी रे, वासुदेव त्रिण एह ।
आवश्यक सूत्रें अछै रे, नहीय इहां संदेह ॥च०॥२२॥
पन्नवणा आहार गी रे, कलपसूत्र गणधार ।
तीन तीन इक मिली रे, बारू आठ विचार ॥च०॥२३॥
प्रश्नव्याकरणें कही रे, बाकी लबधां वीस ।
सांभलतां सुख ऊपजें रे, दौलति ह्वै निसदीस ॥च०॥२४॥

॥ कलश ॥

संवत्त सतरें सै छवीसै मेर तेरसि दिन भलैं ।
श्री नगर सुखकर लूणकरणसर आदि जिण सुपसाउलैं
वाचनाचरिज सुगुरू सानिधि विजयहरष विलास ए
कहै धर्मवर्द्धन तवन भणतां प्रगट ज्ञान प्रकास ए ॥२५॥

—:०:—

आलोयणा स्तवन

ढाल (१) सफल संसार नी

ए धन शासन वीर जिनवर तणौ,
जास परमाद उपगार थायै घणौ ।
सूत्र सिद्धांत गुरुमुख थकी सांभली,
लहिय समकित नें विरति लहियें वली ॥१॥
धर्म नो ध्यान धरि तप जप खप करें,
जिण थकी जीव संसार सागर तरें ।
दोष लागा गुरू मुखहि आलोईयैं,
जीव निर्मल हुवै वस्त्र जिम धोईयैं ॥२॥
दोष लागें तिकौ च्यार परकार ना,
धुर थकी नाम ने अरथ ने धारणा ।
किणहि कारण वसै पाप जे कीजीयै,
प्रथम ने नाम संकप्प कहीजियें ॥३॥
कीजीयै जेह कंदर्प्प प्रमुखे करी,
दोष ते बीय परमाद मंज्ञा धरी ।
कूदतां गरबतां होई हिंसा जिहां,
दर्प्प इण नाम करि दोष तीजौ तिहा ॥४॥
विणसतां जीव नें गिनर न करें जिको,
चौथौ उट्टीआ दोष ऊपजै तिको ।
अनुक्रमै च्यार ए अधिक इक एकथी,
दोष धरि प्रायचित लेइ विवेकथी ॥५॥

ढाल (२) अन्य दिवस को० एहनी

पाटी कमली नवकरवाली पोथी जोड,
ज्ञान ना उपग्रण तणीय आसातन कीधी होइ।
जघन्य थी पुरमढ एकासण आंबिल उपवास,
अनुक्रम एह आलोयण सुगुरु बताई तास ॥६॥

एजो खंडित थाये अथवा किहां ही गमाइ,
तौ वलि नव्या करायां दोष सहू मिट जाइ ।
थापना अण पड़िलेह्यां पुरमढ नो तपधार,
खिरतां एकासण ते गमतां चौथ विचार ॥७॥

दर्शन ना अतिचार तिहां परमड्ड जघन्न,
एकासण आंबिल अट्टिम चिहुं भेदे मन्न ।
आसातन गुरुदेवनी साहमी सुं अप्रीति,
जघन्य एकासण थी आलोयण चढ़ती रीति ॥ ८ ॥

अनंतकाय आरंभ विनास्यां चौथ प्रसिद्ध,
बि ति चौरिन्द्री त्रमायां एकासण थी वृद्धि ।
बहु बि ति चौरिंदीय हण्यां बि ति चौ उपवास,
संकल्पादि चिहुं विधि दुगुणा दुगुण प्रकास ॥ ९ ॥

उद्देही कुलियावड़ा कीड़ीनगरा भंग,
बहु जलोयां मूंक्या दस दस उपवास प्रसंग।
वमन विरेचन कृमि पातन आंबिल इक एक,
जीवाणी ढोलंतां दो उपवास विवेक ॥ १० ॥

संकप्पादिक एक पंचिंद्री उपद्रव होइ,
दोइ त्रिण आठ दसे उपवास आलोयण जोइ।
बहु पंचिंदि उपद्रव षट अठ नें दस वीस,
चिहुं परकारे चढती आलोयण सुणि सीस ॥ ११ ॥

पंचेन्द्री ने दीधै लकड़ी प्रमुख प्रहार,
एकासण आंबिल उपवास ने छट्ठ विचार।
साध समक्षै लोक समक्षै राज समक्ष,
कूड़ौ आल दीयां दुइ चौ षट चौथ प्रत्यक्ष ॥ १२ ॥

दस उपवास दंडायां तेम मरायां वीस,
इक लख असीय सहस नवकार गुणौ तजि रीस।
पख चौमास लगि इक त्रिणदस उपवास,
अधिकौ क्रोध करंतो आलोयण नहिं तास ॥ १३ ॥

सूआवड़ि ना दोष कीयां बलि थापण मोस,
बोल्यां वलि उत्सूत्र कीयां गुरु ऊपर रोस।
करीय दुवालस बार हजार गुणै नवकार,
मिच्छादुक्कड़ देई आलावौ बार वार ॥ १४ ॥

ढाल (३) बेकर जोडी ताम, एहनी

विण कीधां पचखाण विण दीधां वांदणां,
पड़िकमणै विधि पांतरै ए।
अणोझा नै असिझाय तिहां अवधे भण्या,
इक इक आंबिल आचरै ए ॥ १५ ॥

गंठसी नें एकत्त निव्बी आंबिल,
भंगे आलोयण इमैं ए ।
एक पांच षट आठ नवकरवालीय,
गुण नवकार अनुक्रमैं ए ॥ १६ ॥
उपवास भंग उपवास आंबिल ऊपरा,
अधिकौ दंड वखाणीयै ए ।
पांचमि आठमि आदि भंग कियां वलि,
फिर ग्रहे पातक हाणीयै ए ॥ १७ ॥
ऊखल मूसल आगि चूल्हौ घरटीय,
दीधें अट्ठिम तप करै ए ।
मांगी सूई दीध कातरणी छुरी·
आंबिल चढता आदरै ए ॥ १८ ॥
जीव करावै जुद्ध रात्रि भोजन,
जल तरणें खेलण जूओ ए ।
पाप तणौ उपदेस परद्रोह चीतव्या,
उपवास इक इक जूजूओ ए ॥ १६ ॥
पनरै करमादान नियम करी भंग,
मद्य मांस माखण भख्या ए ।
आलोयण उपवास संकप्पादिक,
चिहुं भेदे चढता लिख्या ए ॥ २० ॥
बोल्या मिरषावाद अदत्तादान त्युं,
जघन्य एकासण जाणियै ए ।
अति उत्कृष्टी एण जाणि आलोयणा,
उपवास दस दस आणियै ए ॥ २१ ॥

ढाल (४) सुगुण सनेही मेरे लाला, एहनी

चौथे व्रत भागें अतिचार, जघन्ये छठ आलोयण धार ।
मध्ये दस उपवास विचार, उत्कृष्टें गुणि लख नवकार ॥ २२ ॥
परिग्रह विरमण दोष प्रसंग, तीन गुण व्रत मांहे भंग ।
च्यार शिक्षाव्रत रे अतिचारें, आंबिल त्रिण प्रत्येके धारे ।२३।
शील तणी नव वाड़ि कहाय, तिहां जौ लागौ दोष जणाय ।
त्रिय नै फरस हुआं अविवेकै, इक आंबिल कीजें प्रत्येके ।।२४।।
साध अनै श्रावक पोषीध, एकेन्द्री संघट्टें कीध ।
बीसर भोल सचित जल पीध, दंड एकासण अंबिल दीध ।२५।
विण धोये विण लूह्ये पात्रै, एकासण तिम पुरिमढ मात्रै ।
गई मुहपोती आंबिल सारौ, तिम ओघै अट्ठिम अवधारौ ।२६।
च्यार आगार छ छीडी राखै, व्रत पचखाण करैं षट साखैं ।
दोषे मिच्छादुक्कड़ दाखै, आलोयण तेह नै अभिलाषै ।।२७।।
आलोयण ना अति विस्तार, पूरा कहतां नावै पार ।
तौ पिण संखेपे ततसार, निर्मल मन करतां निसतार ॥ २८ ॥
धन श्री वीर जिणेसर सामी, जसु आगम बचने विधि पामी ।
जीत कलप ठाणा अंग आदि, वलिय परंपर गुरु परसादि ।२९।

॥ कलश ॥

इम जेह धरमी चित्त विरमी पाप आप आलोइ नै
एकांत पूछै गुरू बतावै सकति वय तसु जोइ नै
विधि एह करसी तेह तरसी धरमवंत तणै धुरै
ए तवन श्री ध्रमसीह कीधौ चौपनें फलवधिपुरें ॥ ३० ॥

—०—

वीस विहरमान जिनस्तवनम्

वंदु मन सुध वइरत माण जिणेसर वीस,
दीप अढी में दीपै जयवंता जगदीस,
केवलज्ञान ने धारै तारै करि उपगार,
किण किण ठामै कुण कुण जिन कहिस्यु सुविचार ।१।

पैंतालीस लख योजन मानुष क्षेत्र प्रमाण,
वलयाकारै आधै पुष्कर सीमा जाण,
दोइ समुद्रे सोहै दीप अढाई सार,
तिण में पनरै कर्माभूमि नो अधिकार ।२।

पहिलौ जंबूद्वीप समइ विचि थाल आकार,
लांबउ पिहलउ इक लख जोइण नें विस्तार,
मोटो तेहनै मध्य सुदरसण नामै मेर,
तिण थी दस विदिसानी गिणती च्यारे फेर ।।३।।

मेरु थकी दक्षिण दिशि एह भरत शुभ क्षेत्र,
पांचसै छवीस जोयण छकला तेहनो वेत्र,
उत्तर खंड में एहवो इरवइ खेत कहाय,
इण बिहुं करमाभूमि अरा छए फिरता जाय ।।४।।

तेत्रीस सहस छसय चौरासी जोयण जाण,
च्यार कलाए महाविदेह विषंभ वखाण,
भरत थी चौगुणों इक एक विजय तणो परिमाण
एहवी विजय बत्तीस विराजै जेहनै ठाण ।।५।।

मेरु विचै करि पूरब पच्छिम दोइ विभाग,
सोलह सोलह विजय तिहां विचरै वीतग राग,
सासतै चौथे आरै तारै श्री अरिहंत,
एहवै महाविदेह करमभूमि त्रीजी तंत ॥६॥

पूरब विदेह विजय पुखलावती आठमी ठाम,
पुंडरीकणी नगरी तिहां श्री सीमंधर स्वाम;
वप्र विजय पच्चीसमी विजयापुर नौ नाम,
पच्छिम विदेह बीजौ युगमंधर कीजै प्रणाम ॥७॥

तिम हिज नवमी वच्छ विजय वलि पूरब विदेह,
नयर सुसीमा त्रीजो बाहु नमुं धरि नेह,
नलिनावर्त्त चउवीसमी पछिम विदेह वखाण,
वीतशोका नयरी तिहां चौथौ सुबाहु सुजाण ॥८॥

ए च्यारेई जिणवर जंबूद्वीप मझार,
महाविदेह सुदर्शन मेरु तणै परकार;
एहवौ जंबूद्वीप महागढ जेम गिरिंद,
खाई रूपै दोइ लख जोयण लवण समंद ॥९॥

ढाल २ दीवाली दिन आवीयउ, एहनी

दीपइ बीजउ दीप ए, धन धन धातकी खंड।
पिहुलौ चिहुं लख जोयणे, मंडल रूपै मंड॥१०॥दी०॥

पूरब पच्छिम धातकी, खंड गिणीजै दोइ।
विजय मेरु पूरब दिसै, पच्छिम अचलमेरु जोइ॥११॥दी०॥

दोइ भरत दोइ ईरखें, दोइ वलि महाविदेह ।
करमभूमि षट छै इहां, उणहीज नामै एह ॥१२॥दी०॥
दीप इक इक मेरु नै आसरैं, करमभूमि तीन तीन ।
निज निज मेरु थी मांडिनै, लेखो चिहुंदिसि लीन ॥१३॥दी०॥
श्रीसुजात जिण पांचमौ, छट्ठउ स्वयंप्रभु ईस ।
ऋषभानन जिन सातमौ, समरीजैं निसि दीस ॥१४॥दी०॥
अनंतवीरिज जिण आठमौ, एन्यारे जिनराय ।
पूरब धातकीखंड में, महाविदेह रहाय ॥१५॥दी०॥
पहिला चिहुं जिण नी परइ, विजय नगर दिसि ठाण ।
तिणहीज नामें अनुक्रमै, विजय मेरु अहिनाण ॥१६॥दी०॥
नवमौ शूरप्रभ नमूं, दशमो देव विशाल ।
इम वज्रधर इग्यारमो, त्रिकरण प्रणमुं त्रिकाल ॥१७॥दी०॥
बारमौ चंद्रानन जिन, पच्छिम धातकी मांहि ।
विचरै च्यारे जिणवरा अचल मेरु उच्छाह ॥१८॥दी०॥
एहवौ धातकीखंड ए, परिदखिणा परकार ।
अठ लख जोयण वीटीयौ, समुद्र कालोदधि सार ॥१९॥दी०॥

ढाल (३)

कालोदधि नै पैलै पार ए, वीट्यउ चूड़ी जेम विचार ए।
सोलै लख जोयण विस्तार ए, दीप पुक्खरवर अति सुखकार ए ॥
सुखकार पुष्कर दीप तीजौ, तेहनै आधै वगै ।
विचि पड्यो परवत मानुषोत्तर, मनुषक्षेत्र तिहां लगै ॥

तिण आध करि अठ लाख जोयण, अरध पुष्कर एम ए ।
तिहां करमभूमि छए कहीजै, धातकीखंड जेम ए ॥२०॥

आधै पुष्कर में पूरब दिसै, मंदर नामै मेरु तिहां वसैं ।
पच्छिम विज्जूमाली मेरु ए, इहां किण इतरौ नामै फेर ए ॥
फेर ए इतरौ इहां नामै, अवर ठामै को नहीं ।
इक एक मेरैं तीन तीने, करमभूमि तिहां कही ॥
तिम भरत ईरवतइ विदेहे, नाम सिरखें हेत ए ।
तिणहीज नामै विजय सगली, सासता ध्रम खेत ए ॥२१॥

घातकी खंडे तिम पुष्कर सही, इण क्षेत्रां नो मान कह्यौ नहीं ।
दुगुणा दुगुणै अति विस्तार ए, शास्त्र थकी लेज्यो सुविचार ए ॥
सुविचार वाकी तेह सगलौ नगर तिमहिज मन गमै ।
पूरवै पच्छिम जेह जिणदिसि, तेह तिमहिज अनुक्रमें ॥
श्री चंद्रबाहु भुजंग ईसर, नेमि च्यार तिथंकरा ।
पूरवे पुष्कर अरध मांहे, सरव जीव सुखकरा ॥२२॥

वइरसेन वंदू जिन सतरमो, श्रीमहाभद्र अठारम नित नमो ।
देवजसा उगणीसमौ देव ए, जसोरिद्धि वीसम जिन सेव ए ॥
जिन सेव च्यारे अर्ध पुष्कर, मांहि पच्छिम भाग ए ।
तिहां मेर विज्जूमाल चिहुं दिसि, विचरता वीतराग ए ॥
चउरासी पूरब लाख वरसां, आउ इक इक जिन तणौ ।
पांचसै धनुष शरीर सोहै, सोवन वर्ण सोहामणौ ॥ २३ ॥

काल जघन्ये इम जिण वीस ए, हिव उत्कृष्टै भेद कहीस ए ।
इकसौ सित्तरि तिहां जिणवर कहै, पांचे भरते जिण पांचे लहै ।

जिण लहै पांचे, तेम पांचे ईरवै मिलि दश हुआ ।
इक इक विदेह बतीस विजया, तिहां पिण जिण जुजुआ ।।
एक सौ सित्तरि एम जिणवर, कोड़ि नव वलि केवली ।
नव कोड़ि सहसे अवर मुनिवर, वंदिये नित ते वली ।। २४ ।।
इहां भरते ईरवते आज ए, पंचम आरै नहिं जिनराज ए ।
धन धन पांचे महाविदेह ए, विचरै वीसे जिन गुण गेह ए ।।
गुण गेह दोष अढार वर्जित, अतिशया चौतीस ए ।
चउसट्ठि इंद नरिंद सेवित, नमूं ते निस दीस ए ।।
तिहां आज तारण तरण विचरइ, केवली दोइ कोड़ि ए ।
दुइ सहस कोड़ि सुसाधु बीजा, नमुं बेकर जोड़ि ए ।। २५ ।।

॥ कलश ॥

इम अढी दीपे पनर करमा-भूमि क्षेत्र प्रमाण ए ।
सिद्धांत प्रकरण साखि भाख्या वीस वइहरमाण ए ।।
श्रीनगर जेसलमेर संवत सतर उगणतीसै समै ।
सुख विजयहरष जिणिंद सानिधि नेह धरि ध्रमसी नमैं ।। २६ ।।

:—❀—:

अष्ट भय निवारण श्री गौड़ी पार्श्वनाथ छंद

॥ दोहा ॥

सरस वचन दे सरसती, एह अरज अवधार ।
पारथियां पहिड़ै नहीं, उत्तम ए आचार ॥ १ ॥
हित करिजे मोसुं हिवै, देजे वैण दुरस्स ।
कवियण पिण सुणि नै कहै, सखरौ घणुं सरस्स ॥२॥
गुण गरूऔ गौड़ी धणी, पारसनाथ प्रगट्ट ।
मन सूधै मोटा तणा, गुण गातां गहगट्ट ॥ ३ ॥

छंद-नाराच

प्रसिद्ध बुद्धि सिद्धि निद्ध ऋद्धि वृद्धि पूर ए,
कलत्त पुत्त कित्ति वित्त वद्धते सनूर ए ;
विजोग सोग रोग विग्घ अग्घ सिग्घ घायकं,
प्रगट्ट देव नित्त मेव सेव पास नायकं ; ४
गुमान मोड़ि हत्थ जोड़ि देव कोड़ि वग्ग ए,
अनूप भूप चुंप धारि आइ पाइ लग्ग ए ;
पहू बहू सुकित्ति नित्त सव्व सोभ लायकं , प्र० ५
कुबोह लोह कोह द्रोह मोह माण वज्जियं,
अनंत कांत शांत दांत रूप मैण लज्जियं ;
असेस शुद्ध तत्त जुत्त सोभ ए अमायकं , प्र० ६

विसाल भाल सुविसाल अद्धचंद छज्जियं,
रउद्द थी रिसाइ जाणि एथि आइ रज्जियं,
सुनैण कंज गंध काज भौंहि भौंर रायकं प्र० ७

कपूर पूर कस्सतूर कुंकुमा सुरंग ए,
अरग्गजा अथग्ग में रहैं गरक्क अंग ए,
अछेह दुत्ति गेह देह सव्ववही सुहायकं, प्र० ८

मृदंग दौंदौं दौं दप्प मप्प वज्ज ए,
नफेरि भेर भलरी निसाण मेघ गज्ज ए,
तटक्क तान थेइ थेइ लक्ख सुक्ख दायकं, प्र० ६

अष्ट भय नाम दोहा

करि केहरि दव क्रुद्ध अहि, राडि समुद्दह रोग।
अति बंधण भय अठ टलै, सामि नाम संयोग।१०।

छंद भुजंगी

छहुं रित्तु छाक्यौ भुकंतौ भकोला,
लपक्के विलग्गी अली मालि लोला,
वलेटैं वलाका वली सुंडि दौला,
भरै निज्जरा जेम महैं कपोला, ११

पहू चालतौ जाणि पाहाड़ तोला,
भलक्कै डलक्कावतो लाल डोला,
इसौ दूठ पूठै पडंतां अकोला,
जपंतां करैं नाचि नी मात चोला, १२

इति हस्तिभयं

महा सद्द सीहं अबीहं उदंडं,
भरैं फाल आफालतौ पुच्छ भुंडं,
डगैं फाडि डाचौ वडं वज्ज मुंडं,
महातिक्ख नक्खं रखे रोष चंडं ॥ १३ ॥
फुरक्कावतौ मुंछि फाडंत तुंडं,
ललक्कंत लोला विकट्टं विहंडं ।
धणी पास चौ नाम ध्यानं धरंडं,
टलै श्याल ज्युं सीह होए अहंडं ॥ १४ ॥

इति सिंह भयं

जले जंगलां में जटा जूट जाला,
प्रणा भाड़ ऊजाड़ में लग्ग भाला ।
बहू मृग्ग वग्गं पसू पंखि बाला,
बलंता कमेड़ा चिड़ा जंतु माला ॥ १५ ॥
धुखे धूम लग्गे कीया नग्ग काला,
भलो भाल हंखे टल्या नांहि टोला ।
बड़े संकटे एण आयां विचाला,
प्रभु नाम नीरैं बुझैं तत्तकाला ॥ १६ ॥

इति अग्नि भयं

कलू काल रूपी महा विक्करालं,
फणा टोप रोपैं महाकोप जालं ।

वलक्के वलंतौ चलंतौ करालं,
जिणै फूंकि सूकैं तरू माल डालं ॥ १७ ॥
हला हाल संलोलियं विक्ख लालं,
रहै लाल लोचन्न दो जीह वालं ।
धरंतां प्रभू नाम रिद्दै विचालं,
सही साप होवै जिसी फूल मालं ॥ १८ ॥

इति सर्प्प भय

भिड़ैं भूप भूपे अधिक्के अटक्के,
खलां हाड तूटै खडग्गां खटक्के ।
परां हैवरां पाडि नांखै पटक्के,
धुरां सिंधुरां कंधरां भू धटक्के ॥ १६ ॥
पडै प्रांण संधाण बाणे बटक्के,
हुकें केइ हाथाल रोसैं हटक्के ।
भला भाल गोलेहु नाले भटक्के,
तुटैं तुंड मुंडां प्रचंडां तटक्के ॥ २० ॥
छछोहा सलोहा पडंधा छिटक्के,
भुक्कैं सूर भंभेड़ि नांखैं भटक्के ।
प्रभु नाम लेतां इसे ही अटक्के,
कदे बाल बांको न होवैं कटक्के ॥ २१ ॥

॥ इति युद्ध भयं ॥

जतन्ने घणे केइ बैसे जिहाजैं,
अथग्गे जले आइ कुव्वाइ वाजैं ।

घटा टोप मेघा गडड्डंत गाजै,
हुबक्कैं तरंगां विरंगांहु बाजैं ॥ २२ ॥
लिचा पिब्ब लागी घड़ी ताल भाजैं,
अहो कोइ राखैं अठै अम्ह काजैं।
इसैं संकटैं जे जपैं जैनराजे,
सही पार पामै तिके सुक्ख साजैं ॥ २३ ॥

इति जल भयं

गडं गुंबड़ं गोलकं हीय होड़ी,
हरस्सं खसं उध्रसं गांठि फोडी।
टलैं गोढ थी कोढ अट्ठार रोडी,
महाताप संताप आतंक कोड़ी ॥ २४ ॥
न होवै कदे कायमैं काय खोडी,
सहु आधि व्याधं सही जाइ छोडी।
जिणंदं नमै मन्न में मान मोड़ी,
लहैं सो सदा सुक्ख संपत्ति जोड़ी ॥ २५ ॥

इति रोग भयं

अमूछा मलेछा वली मन्न खोटा,
जियां चक्खु चुंचा लुल्या गाल गोटा।
वली पाघ बांकी लपेट्यां लंगोटा,
सहेटा गह्या सब्बला हाथ सोटा ॥ २६ ॥

दीयैं कोरड़ा देह दोला दबोटा,
वदै बोल बांका झंझे मंत झोटा।
पड्या बंदिखानैं महा दुक्ख मोटा,
प्रभू नाम थी वेग थायैं विछोटा ॥ २७ ॥

इति बंदि भयं

नमंतां जिणेशं सदा मन्न रागैं,
सहीअें महा दुट्ठ में अट्ठ भागैं।
रली लोक लक्खं लुली पाय लागैं,
दिसो दिस्स मांहे जसू जस्स जागैं ॥ २८ ॥

॥ कलश ॥

परतख जिणवर पास आस उल्लासह अप्पण
विविध जास गुण वास दासचा दालिद कप्पण
चैंण दंण जसु चरण ईति अति भीति निवारण
लील लाछि लख गान विमलकीरत्ति वधारण
दिण इंद जेम दीपंत दुति, विमलचंद मुवख छवि वरण
दौलत्ति विजयहरपां दीयण, धरमसीह ध्याने धरण ॥२६॥

॥ इति अष्ट भय निवारण श्री गौड़ी पार्श्वनाथ छंद ॥

—:※:—

श्री जिनचंद्रसूरि अमृतध्वनि

रतन पाट प्रतपै रतन जाणइ सकल जुगत्त
गच्छनायक जिणचंद गुरू सोभत तप जप सत्त ।१।

चालि—

तौ तप जप मत्त तेम तपत्त तेज वखत्त त्तरणि तखत्त तृणसम वित्त
त्तजि मदि चित्त त्तुरत चरित्त त्तहि किय
हित्त त्तिनि गुपत्त त्तिद्दुय सुमत्त
त्तेवड़ि तत्त त्तजित मिछत्त त्तत्त सिद्धंत त्तारितजंत त्तरक जुगत्त
त्तरजित धुत्त त्ततु दीपत्त त्तुल रतिपत्ति त्तासन मत्त त्रसत दुरित्त
त्तिभुवन कित्त त्तवत कवित्त त्तसु अमृतध्वनि ध्रमसी कहैं मात
१ रतन०

इति श्री वर्त्तमान गुरू स्तवना रूप ५२ तत्ते झड़ करी नइ
महा अमृतध्वनि जाणिवी ॥

उपकार ध्रुपद
राग—वृंदावनी सारग

करणी पर उपगार की
सब करणी में अधिकी वरणी, तरणी यह संसार की । क० ।१।
कीनें गुण ऊपरि गुन करिवौ, वात सुतौ व्यवहार की ।
पिण विनु स्वारथ करण भलाई, अपनै जीउ उद्धार की ।क०।२।
सुकृती पात्र कुपात्र न सोचै, धरै उपमा जलधार की ।
साची कहिय सुगुरू ध्रम मीमा, सब शास्त्रनि कैं सार की ।क०।३।

सप्ताक्षरी कवित—

गिही केकि के अगिह केकि के गिह गिहि कुकहि ।
केकि को क ख ग घूक हहा हूहू खगहु क्कहि ।
के गहि गह गहि कोह खें गगा हैं खग खगाहि ।
के कुग्गह गह गहे अंग अग्घें अगि अग्गहि ।
के हक्क अहक्क अगाह गहैं गेह खेह कंकह गुहा ।
कहि कुक्ख खुह खुह अग्गि की कहुं केही अक्कह कहा ?
अकुह विसर्जनीया नां कंठ इणे हीज माते अक्षरे कवित्त छै
पेट नाट ऊपरा कह्यौ छै ।

गूढ रूप आशीर्वाद सवैया

धोरी के धनी के नीके हार कौ अहार सुत,
ताही के नगर गयौ जाके दम सीस है ।
सबे लोक जाके सुत ताके नाम ताकी सुता
वाजी मुख भूषन बैठी निसि दीस है ।।
राजा लावै रैंत लार ताकी साखा की सिंगार
आगें धाई धरी देखि उपजी जगीस है ।
माह की धुजावे रैन तिन्है पूछ्यौ जोऊ वैन
ताकी नाम चातुरी सों मेरी भी आसीस है ।।१।।

मुखतैं इक बोल कह्यौ न गिणैं कोऊ धूनि बकं तो गुणी गहरो ।
हलकें कहे बात न पावत न्याउ जबाब के जोर खड़ो बहरौ ।।

निसि मौन सो बैठो तकैं कैहैं ऊंघत सूनौ ही सोर करै सहरौ।
न लहै गुण के कोऊ कहै ध्रमसी जगि आज लबारिन कौ पहुरौ ।१।

समस्या—दोहरा हमारे देस छोहरा करतु है।
सवैया इकतीसा

एक एक तै विसेष पंडित वसैं असेष,
रात दिन ज्ञान ही की वात कुं धरतु है।
बैदक गणक ग्रंथ जानें ग्रह गणन पंथ,
और ठौर के प्रवीण पाइनि परतु है।
करत कवित सार काव्य की कला अपार,
श्लोक सब लोकनि के मन कुं हरतु है।
कहैं ध्रमसीह भैया पंडिताई कहुं कैसी,
दोहरा हमारे देस छोहरा करतु है ॥ १ ॥

समस्या—नैन के झरोखे बीच झाखता सो कौन है।

हरिसों संकेत करी राधिके विलोके मग,
अैसे आई बैठी सखी एक ही बिछौन है।
राधे बोली सुनि खेल मोसुं नैन वाद जोवै,
अनिमेष दो मैं हारी साई दासी हौन है ॥
एतैं सखी पीछैं हरैं हरैं आए हरी अति ही,
अति ही निकट ह्वै कैं तकैं गहि मौन है।
बोली सखी राधे सुनि मोसुं कहि साच वाच,
नैन के झरोखे बीचि झाखता सो कौन है ॥१॥

सवैया सर्वतोमुख—गोमूत्रिका बध

अति	संत	गुणी	नर	चित्त	भणी	सुख	दैण	सदा	जिण	चंद	जती	
मति	वंत	मुणी	सर	कित्त	घणी	मुख	वैन	मुदा	घन	दंद	हती	
प्रति	पंत	धनी	पर	हित्त	जनी	सुख	चैन	बिदा	जन	वृंद	पती	
छति	वंत	मुनी	दर	भित्त	हनी	दुख	रैन	छिदा	दिन	इंद	दुती	।१।

नारी कुञ्जर जाति सवैया†

शोभत घणी जु अति देह की वणी है दुति,
सूरिज समान जसु तेज मा वदाय जू
भूपति नमैं है नित नाम कौ प्रताप पहु,
देखत तही ही दुख नाहि है कदाय जू।
पूरण बडेई गुण सेव के करैं थैं सुख,
वदत तही ही बहुलोक समुदाय जू।
देत है बहुत सुख देव सुगुरुहि नित,
दोऊ कौ नमैं है ध्रमसीह यौ सदाय जू।

अन्तर्लापिका

आदर कारण कौन भूप कहा रोपि रहैं क्रम
न रहैं निश्चल कौन कौन त्रिय नयने ऊपम
करैं विप्र कहा वृत्ति स्वामि वच को न उथापै
कौन नाम समुदाय कौन तिय पुरुषइं व्यापै
वसती विहीन कहियैं कहा सबहि कहा राखत जतन
धरिजै अखंड ध्रमसी कहैं 'धरम एक जग में रतन' १

—:०:—

† यह पूरा पढने से "इकतीसा सवैया" है, बड़े अक्षरों को छोड़ देने से "सवैया तेवीसा" हो जायगा।

शीलरास

ढाल—हु बलिहारी जादवा, ए देशी

शील रतन जतने धरो, खंडी ने मत[1] आणो खोड कि।
भूषण निरदूषण भलौ, होइ[2] नहीं कोइ इयै री जोड़[3] कि।१।शी.
शील रचे मन शुद्ध सूं, परहा तेह पखाले पाप कि।
कुल नैं पिण निरमल करै, ओलखीयौ तिण आपो आप कि।२।
सुकृत तिणै वलि संचीयौ, सहु जग में पांमै सोभाग कि।
दुरगति दुख दूरै दलै, अइओ एहना विरूद अथाग कि।३। शी०
मुशकल करमे मोहनी, बार व्रतां मां दुष्कर बंभ कि।
करणे जीह मन त्रिकरणे, दमणा ए दोहिला[4] निरदंभ कि।४।शी.
पर त्रिय संगत पाड़ई, सप्तम व्यसन कहीजै सोइ कि।
ऊंडी मति आलोचज्यो, हाणि घरे पर[5] हांसौ होइ कि।५। शी.
मेरू जिता[6] दुःख मानियै, सुख तौ मधु ना बिंदु समान कि।
सुरगुरू विद्या (धर) मारिखा, मांनिस तौ बैंसीस विमांन कि ६
मत विषयारस माचज्यौ, बाचेज्यौ एहवा गुरू वैंण कि।
दूह्वी नैं हित दाखवैं, साचा तेह कहीजै सैंण कि।।७।। शी.
विषय तणा फल विष समा, ए बेऊं नही सम अधिकार कि।
विष इक वेला दुख दीयै, विषय अनंती वार विचार कि।।८।।
पुन्यै नरभव पांमियौ, भरम्या विषय म राचौ भोल कि।
काग ऊडावण कारणै, नांखौ मत थे रतन निटोल कि।९। शी.

---

१ मन, २ हुवै, ३ होडि, ४ होए, ५ वलि, ६ जिहा।

कनक तणौ देहरौ दसी, कंचण नी वलि आपै कोड कि ।
कष्ट-तनी किरिया, हुवै नहीं सील तणी ते होड कि ॥१०॥ शी.
पालै शील भली परै, टालै दूषण परहा तेम कि ।
वखाणे सहू को वली, हेक रतन नै जडीयौ हेम कि ॥११॥ शी.
निरमल नयणैं निरखीयैं, वयण वदै नहीं मयण विकार कि ।
सुर सेवा करै सयण ज्युं, शील रयण थी अधिकौ सार कि १२
सोहै मनुष सुशीलीयौ, कुसीलीयां री शोभन काइ कि ।
कोइ रीस मतां करै, सीख भली साची कहिवाइ[1] कि ।१३। शी.
ललना सुं लुबधो थकौ, लोपि गमावै लज्जा लीक कि ।
जायै धन पिण जूजूऔ, नीर रहै नहि फूटी नीक कि ।१४। शी.
पुरष भला स्त्री पापिणी, पापी पुरष नैं स्त्री पुन्यवंत कि ।
मत[2] एकांत म धारिज्यो, परणामे सहु फेर पडंत कि ।१५। शी.
कष्टै धन भेलौ करै, झगड़ा झांटा करि करि झूठ कि ।
खरचै नहीं धरम खेत में, मानवंती नैं दे भर मूठ कि ।१६। शी.
की कस करंडे कूकरी,[3] मुख नौ झरते मांस मसूढ कि ।
ममन हुवै ते स्वाद मैं, मांहिली हांनि न जाणे मूढ कि ।१७। शी.
अवगुण कोइ न अटकलै, मेल करावे तिण सूं मेल कि ।
गुरूजन स्यूं धारै गुसौ, अवसर नांखै ते अवहेल कि ।१८। शी.
महिला रइ संगति मिल्यां, सूखम जीव मरइ नव लाख कि ।
भगवंतइं इम भाखीयौ सूत्र सिद्धांते लाभै साख कि ।१९। शी.

---

१ सुखदाइ, २ मन, ३ हाड कस सूरडै कूकर ।

भरीयै रू तसु भुंगली, तातै सूए रे दृष्टांत कि।
हिंसा जीवां री हुवै, एहवा विषय कह्या अरिहंत कि ।२०। शी.
त्यागी विषय तणा तिके, ज्ञांनी तेह गिणीजै गांन कि।
अथिर गिणीजै आउखौ, वरतै जेहवो संध्या वांन कि ।२१। शी.
जेहवी चंचल वीजली, पीपल नौ वलि पाकौ पांन कि।
ठार रो तेह न ठाहरै, वैश्या नौ जिम नेह विधान कि ।।२२।।
कीजै मद ते कारिमा, जल अंजलि नौ देखत जाय कि।
करवत वहती काठ मैं, दीसैं इण विध आयु रदाय कि ।२३। शी.
सुखदाई संसार मैं, साचो नहीं कोइ धर्म समान कि।
एहना भेद अनेक छै, पिण सहु मांहे शील प्रधांन कि ।२४। शी.
ज्वलम हुवै जल जेहवौ, सरप हुवै फूलमाल समान कि।
सीह हुवै मृग सारिखौ, सीलैं सहु बातां आसान कि ।२५। शी.
मूठो गय ते हय जिसौ, हालाहल ते अमृत होइ कि।
जोरावर अरि मित्र ज्यूं, कष्ट करै नहीं सीलै कोय कि ।२६। शी.
परिसिद्ध नाम प्रभात नौ, ल्यै सहु कोइ मन सुध लोक कि।
पभणुं केय परम्परा, वलि शास्त्रां थी केइ विलोक कि ।२७। शी.
आदिसर नी अंगजा, ब्राह्मी शीलवती वाह वाह कि।
सुन्दर रूप संपेखि नें, चक्री भरत धरी चित चाह कि ।२८। शी.
साठि सहस वरसां लगै, तप आंबिल करी तोड़ी काय कि।
शील पाल्यौ तिण सुन्दरी, कीरति आज लगैं कहिवाय कि ।२६
शुकल किसन पख दंपती, शील अडिग नी एकण सेज कि।
सहस चौरासी साधु थी, आदिसर परसंम्या एज कि ।३०। शी.

बहु जस चंदनबालिका, लघु हिज वय जिण चारित्र लीध कि ।
साधवी सहस छतीस मैं, कीरती वीर जिणेसर कीध कि ॥३१॥
भीना चीर सुकायवा, गईय गुफा में राजुल रंग कि ।
रहनेमें काउसंग रह्यौ, अवलोकी कह्यौ सुन्दर अंग कि ॥३२॥
अंकुस (ना) वसि गज आंणीयौ, दीधो राजमती उपदेश कि ।
निपट प्रमंस्या नेमजी, लाभैं नहीं दूषण लवलेस कि ।३३। शी.
चीर दुर्योधन खांचीया, पांचाली सुं करीय उपाय कि ।
सौ अष्टोत्तर साउला, प्रगट्या नवनव शील पसाय कि ।३४।शी.
देव उपाडी द्रौपदी, आंणी धातकीखंड आवास कि ।
पदमोत्तर नृप प्रारथी, छेडे मत मुझने छ मास कि ॥३५॥
कीधी वाहर किसन जी, पदमोत्तर पिण लाग्यो पाय कि ।
पांचे पांडव नी प्रिया, पाम्यो वंछित शील पसाय कि ॥३६॥
चित चौखे रामचंदनी, कौशल्या माता सुखकार कि ।
कष्ट टल्या वंछित फल्या, सतीयां मै सीलै सिरदार कि ॥३७॥
रावण रै कब्जै रही, सीता रो किम रहियो सील कि ।
लोक बोक के लागुआ, ए परपूठ करै अवहील कि ॥ ३८ ॥ शी.
पावक कुण्ड मांहे पड़ी, जल शीतल में न्हाई जेम कि ।
सहु कहै धन धन ए सती, हुई निकलंक जाणै हेम कि ।३६। शी.
हाथी जेहनै अपहरी, जिण वन में खांमी जीवराशि कि ।
बेऊं सुत नृप बूझिव्या, साधवी पदमावती सु प्रकाश कि ।४०।
साते चेडा नी सुता, शिवा सुज्येष्टा जेष्टा सार कि ।
पदमावती प्रभावती, चेलणा मृगावतीय चितारि कि ।४१। शी.

मृगावती मुझ नैं मिलै, चढ़ि आयौ नृप चंडप्रद्योत कि ।
हिकमति करि हारावीयौ, पाल्यौ नै उदयनै पोत कि ।४२।शी.
सुलसा सखरी श्राविका, निंदे पूरव करम निदान कि ।
सीलै सुर सानिध करै, सुंपै आंणि जीवत संतान कि ।४३। शी०
एक जती री आंखि में, तृण जीभें करि काढ्यौ तेह कि ।
मेटी पीड़ा मुनि तणी, सतीय सुभद्रा धर्म सनेह कि ।४४। शी०
कूडौ ही लोके कह्यौ, आलिंगन इण दीधउ अंक कि ।
चालणीयै जल[1] सींचता, कीधी शीलै ए निकलंक कि ।।५।।शी०
देसवटौ जूए दीयौ, नीकलीयौ स्त्रीय सुं नलराय कि ।
सूती दवदंती तजी, शीले पग पग कीधी सहाय कि ।।४६।। शी०
अति गरबी ने अविरति, जिण तिण सु जोडावै जुद्ध कि ।
तिणहिज भव नारद तिरै, शील तणौ एक गुण मन शुद्ध कि ४७
कुमरी मल्ली धन कही, जिण बूझवीया षट राजांन कि ।
पाल्यौ शील भली परै, सूत्र ज्ञाता में बरण समान कि ।४८।शी०
सुघरणी श्री कुंभरायनी, मल्ली कुमरी तणी ए मात कि ।
शील प्रभाव प्रभावती, वरतै सतीयां मांहि विख्यात कि ।।४६।।
दूषण अभया नै दीयौ, कहै राजा द्यौ सूली कील कि ।
सिंहासन कीधौ सुरै, सेठ सुदरसण धन्य सुशील कि ।५०। शी०
अरि (ना) कटक ते अटकीया, गहनो बल कोइ अगम अथाहकि।
शील मंत्रै मंत्रीसरै, साचौ कहीयें सील सन्नाह कि ।५१। शी०
साची सत्यभामा सती, रुक्मणी पिण तिम चढ़ती रेख कि ।
सलहौ मलयासुन्दरी, शील रतन राख्यौ सुविशेष कि ।।५२।।

१ आलनां ।

सुरसुन्दरी ने श्रीमती, गुणसुन्दरी पिण अधिकी ज्ञान कि ।
नित नित मयणरेहा नमुं, धरिजै अंजनासुन्दरी ध्यान कि ५३

दूषण संख राज दियौ, कर बंध्या दीठा केयूर कि ।
कलावती कर कापीया, निरख्या तो वल ने ए नूर कि ।५४ शी०

मयणा श्रीस्थूलिभद्र नी, जखा जखदिन्ना सु प्रमाण कि ।
भूआ भूअदिन्ना वलि, सयणा वयणा रयणा जाण कि ॥५५॥

कोश्या केर नाटक किया, मुनि थूलिभद्र रह्यो ज्यूं मेर कि ।
आयां गुरू ऊभा हुआ, दुक्करकारक कह्यो दो बेर कि ॥५६॥

एह अदेखौ आणि नै, सीह गुफावासी ते साध कि ।
चूकौ भटके चौमास मैं, आवी नें खाम्यो अपराध कि ।५७।

आतल नें पिण औहटे, वलि संबाहे काठी वाग कि ।
तारै आपणपौ तिको, सहु मांहे पामे सौभाग कि । ५८ । शी०

शील खंड्यौ तिण स्युं कीयौ, दावानल गुण वन नै दीध कि ।
कूट्यौ पडहौ कुजस नौ, कुल मै मसि नौ टीलो कीध कि ।५९।

पांणी दीधौ पुण्य नैं, सहु आपद नैं दीध संकेत कि ।
दुख लियो कांइ उदीर नैं, चतुर हुवै तौ तुं चित चेत कि ६०।

शिवपुर द्वारै तिण सही, भोगल दीधी काठी भीड कि ।
सहु देख तेहनै सामट्टा, नित आवै जिम पंखी नीड कि ॥६१॥

अवगुण कुण कुण आखीयै, खंड्या शील पडे दुख खांण कि ।
पाले तेह पुण्यांत्मा, विलसै सहु सुख ए जिण वाणि कि ॥६२॥

जिन शासन धन जाणियै, आगर धरम रतन नौ एह कि।
ब्रह्मचारी हुआ बड वडा, त्रिकरण शुद्ध प्रणमीजै तेह कि।६३।

वरतैं बीकानेर में विजयहरष जसु लील विलास कि।
धुरि ध्यायौ धर्म ध्यान नौ, श्री धर्मसीह रच्यौ शीलरास कि।६४

इति श्री शीलरास सम्पूर्णम्। संवत् १७७७ वर्षे
मिती फागुण सुदि २ दिने श्री विक्रमपुर मध्ये
पंडित सुखरत्नेनलिपी कृतं।

(पत्र ३ जयचंदजी भंडार)

—:o:—

श्रीमती चौढालिया

दोहा

खीर खांड मिलीया खरा, घृत विण न वर्णे वात;
तिम इहां चार प्रकार में, वरणु शील विख्यात; १
शीले सुर सानिध करै, शीले लील विलास;
शीले दुरगति दुख टलै, शीले पामै शिव वास; २
ते ऊपर सुणजो सहू, श्रीमति नां दृष्टांत;
शील राख्यो जतने करी, ते हिवै सुणजो तंत. ३

ढाल (१) चौपई

इणहिज दखण भरत मझार, अंग देश आरज आचार;
धण कण कंचण रीध अपार, वसंतपुरि अलका अवतार; १
प्रबल तेज प्रताप पडूर, शत्रुदलन तिहां राजा सूर;
तिण राजा रे जीव समान, मतिसागर मुंहतो प्रधान; २
सार पुरि नि करै संभाल, चंद्रधवल नामै कोटवाल;
चतुरा जासु एकज चित्त, सुन्दरदत्त नामे प्रोहित; ३
बहु व्यापार घणो बाजार, गढ मढ मंदिर प्रौल प्राकार
उत्तम जन तिहां वसे अनेक, वसंतपुरि नगरी सुविवेक; ४
हिव सुन्दरदत्त प्रोहित तणौ, श्रीदत्त मित्र अछै हित घणौ;
तेहने नार अछै श्रीमती, शील गुणे करि सीता सती; ५

सेठ जरै परदेशे जाय, प्रोहित नै घर दीयो भोलाय;
जेहवो राखै हेत सदीव, देह दोय जाणै इक जीव; ६
एक दिन श्रीदत्त सेठ विचार, परदेशे चाल्यो व्यापार;
तेड़ी प्रोहित ने कहै तेह, तुम सारु छै माहरो गेह; ७
घर की घणी भोलावण दीध, सेठ तिहां थी कीधी सीध;
प्रोहित आवै करै संभाल, को न सकै कर बांको बाल; ८
सुखे रहे नारि श्रीमति, पालै शील सदा शुभमति;
प्रोहित दीठी रूप अमोल, कहिवा लागो एहवा बोल; ६
हुं प्रोहित माहरो कायदो, मोसुं मिल ज्युं हुवै फायदो;
तुम प्रीतम जे माहरो मित्त, तुं हिवै कोइ न मेलै चित्त; १०
श्रीमति उत्तर भाप्यो सही, तमने एहवो करवो नहीं;
मोटा ते इम न करैं मूल, सा (य) र थिकी कीम उडै धूड; ११
दिवी भोलावण तुम नै घणी, प्रदेशे चाल्यौ मुझ धणी;
घर हुंती किम उठै धाड, चीभड़ला किम खायैं वाड़; १२
प्रोहित कहै मुझ वचन उवेख, धेठि होइ सहि करै द्वेप;
हिवै ताहरौ घर जातो देख, इण बात में मीन न मेख; १३
दुहा—श्रीमति मने जाण्यो सही, खिणि टालुं एक वार;
पहिलै पोहरै आवजो, रात गयां ततकाल; १
संतोष्यो प्रोहित वचन, निज घर बैठो आय;
शील राखण नै श्रीमती, एहवो करै उपाय; २

ढाल २—अलबेला नी

कह्यो जाय कोटवाल नै रे लाल तूं छै पुर रुखवाल सुविवेकी रे
प्रोहित की मत पातकी रे लाल जोरे करैय जंजाल सु० १

सीले निर्मल श्रीमती रे लाल करि बुध बल प्रचंड सु०
जोयजोये इण भांत सुं रे लाल राखे सील सुचंग सु० २
कहै कोटवाल चिंता किसी रे लाल ए नांखिस अवहेल सु०
प्रोहित रहसी पाधरो रे लाल पिण तुं मोसुं मन मेल सु० ३
सती कहै छै बातड़ी रे लाल नहिं छै तांह नै लाग सु०
पाणी थी किम प्रगटै रे लाल ऊनी बलती आग सु० ४
मोसुं ताण मती करो रे लाल कह्यो इम कोटवाल सु०
सती कहै तमे आवजो रे लाल बीजे पहुर विचाल सु० ५
तिहां थी आवि उतावली रे लाल कहै मुंता नैं एम सु०
राजा धुर धर थानके रे लाल कह्यो अन्याय हुवै केम सु० ६
कोटवाल कुमारगी रे लाल हुं नांखिसुं उखेड़ सु०
रूपे मोह्यो मुंतो कहे रे लाल तुं मुझ ने घर तेड़ सु० ७
सूं बोलो छो कहे सती रे लाल सगला सरिया काज सु०
अमृत थी विष ऊपजै रे लाल आयो कलजुग आज सु० ८
मुंतो कहै बोलो मती रे लाल सो बातां एक बात सु०
तीजे पहुरे पधारजो रे लाल इम कहि गई असहात सु० ६
आवी राजा ने कहै रे लाल मुंता में नहिं माम सु०
कहै छै तुझ घर आवसुं रे लाल सुं कीजे हिवै साम सु० १०
राजा रूपे रीझियो रे लाल रागे कहे इण रीत सु०
मुंतो सुं मुझ आगलै रे लाल मुझ नै कर तुं मीत सु० ११
भूप भणी कहै सती रे लाल धरती खावा धाय सु०
तुमे छो प्रजा ना पिता रे लाल एह करो किम अन्याय सु० १२

राजा हुवै सहुनो धणी रे लाल मत तुं वचन उथाप सु०
चउथे पहुरै रातनै रे लाल आविजो थे आप सु० १३
करि संकेत जुदा जुदा रे लाल आवि आपनै गेह सु०
शील राखण नें श्रीमती रे लाल जोयजो करस्यै जेह सु० १४

दूहा

सती कहै ते वारता, पाडोसण नै तेड़;
च्यार नगर ना थंभ ते, मुंके नहीं मुझ केड़; १
कूड़ो कागल ले करि, रोती देती राड़,
तूं आए निशि पाछली, कूटे मुझ किमाड़ २
इम सिखावी तेहनै, मोटी सझी मंजूस;
च्यार भखारी तेह में, कोइ मति जाण्यो कूड़ ३
इण अवसर संझ्या थई, आथम्यो जब सूर;
नेह सहित नि (स) ज थयो, तो प्रोहित नवले नूर; ४

ढाल (३)—नवकार री

वस्त्र आभरण अमोल तंबोल सजाई चूर;
हरखि आयो सति घरे हसतो ऊभो हजूर ॥१॥
कूडै मन आदर करै तेह सजाई लीध,
दासी ने सनकारि सिखावी सगलो सिधो दीध;
भोजन पान सजाई करतां वेला कीध,
बाधी रात पड़ी छै आकुल थाओ म सीध ॥२॥
बीजे पहोरे आयो आय बजायो बार,
हुं कोटवाल उघाड़ किमाड़ म लावो वार।

प्रोहित कहै जाण्यो छै एणै मुझ विकार,
तो आयो इण वेला कीजे कवण विचार ॥३॥

सतीय भणी कहै प्रोहित माहरा बाप नो सूंस,
तुम उपगार गिणीस छिपाय तुं मुझ नै तिण मंजूस,
तिण मंजूस में एक भखारै घाल्यो ठूंस,
सबलौ तालो दीधो सरब रही मन हूंस ॥४॥

हिवै कोटवाल नै मांहे लीधो दीधो बहुमान,
नवी सजाई करवा मांडी भोजन पान।
फिरतां घिरतां आधी रात गमाई ग्यान,
तीजे पहुरै बारै बोल्यो प्रधान ॥५॥

साद ते अटकलीयो हलफलियो कोटवाल,
मुझ ने जाणि मुंहते कुड करी ततकाल।
हिवै किहां जाऊं कै थी थाउं बोली बाल,
बेसि रहो भखार नी बीच मंजूस विचाल ॥६॥

तिहां वलि तालो दीधो लीधो मुंहतो मांहि,
अधिक भगत करै पिण ऊपरले मन उच्छाह।
जिम तिम रात गमावै बात घणी आगाह, '
बारणै राजा बोल्यो चउथे पहुरै चाह; ॥७॥

मंत्री जाण्यो इण बेला नृप आयो आप,
मुझ करतूत तिहां थी वाणी पूरो पाप।
मुझ संताड़ि हिवै नहिं बीजी काइ टाप,
तीजै घर घालि दीयो तालो टाल संताप ॥८॥

ऊपरलै मन हुंतै मांहे बुलायो राय,
पग धोवावै पाणी ल्यावै ज्युं निशि जाय।
इण अवसर आफलती रोती बारणै आय,
पाड़ोसणीं कीमाड़ ने कूटै करि हाय हाय ॥९॥

कूकै पाडोसण हलफली खोल किमाड
ताहरा पति ना कागल मांहे मोटी धाड़
राजा कहै सुं कीजै पहिली मुझ नै छिपाय
चौथे भखारै घाल्यो तालो दीध जड़ाय ॥१०॥

आसै पासै लोक मिल्या तेह निसुणी कूक
कूड़ै चित्त सती पण रोवै प्रीय गयो मुझ मूक
जड़ीया पेई मां च्यार जणा जाणै मामै चूक
कांइ आया हिवै केम निकलस्यां रहिस्यां मूक ॥११॥

दूहा

इतरै सूरज ऊगीयो, प्रगट थयो परभात;
सेठ तणी संभलावणी, करती सगले वात; ॥१॥

आरण कारण करण ने, सगला मिल्या सब कोय;
मुंओ सेठ अपूतीयो, सुणीयो राणी सोय; ॥२॥

माल करावो खालसै, राजा ने कहो जाय,
भूपत किहां लाभै नहीं, जोयो सगले ठायः ॥३॥

राजा मुंहतो नहिं घरे, तिम प्रोहित कोटवाल,
किण हिक मोटा कामवश, गया होसे ततकाल ॥४॥

राणी जाण्यौ हुं हिज हिवै, मंगावी ल्युं माल,
मूंक्या प्यादा आपका, साथे देई हमाल ॥५॥
सेठाणी कहै माहरै, सघलै घर रो सार,
बीजो कांइ जाणुं नहीं, इण मंजूष मझार; ॥६॥
हमाले आणी हिवै, मोटि निउं मंजूस,
राणी जाणै सार ते, ल्युं वहिलेरो लूंस ॥७॥

ढाल (४)—धरम आराधीयए, ए देशी

तालो खोलावै तिसै ए, ऊभी राणी आप;
पहिला प्रोहित प्रगट्यो ए, वहिलो गयो संताप; ।१।
हिवै इचरज थयो ए, जोयजो करम संजोग,
विषयारस वाह्या थका ए, विगड़ै दोनुं लोग; ।२।
कहै राणी तें सुंकीयौ ए, हसिवा लागी हेव;
प्रोहित कहै हसजो पछे ए, देखो बीजा देव; ।३।
जितरै बीजे बारणै ए, नीकलियो कोटवाल;
राणी कहै ओ कांइ ए, करवी थी संभाल; ।४।
म्हां विण चोकी कुण करै ए, कहै कोटवाल निदान;
ततखिण तीजा ठाम थी ए, प्रगट थयो परधान ।५।
हस राणी कहै स्युं हुवो ए, दफतर थांरै हाथ;
मुंतो कहै मनै आवणा ए, राजा जी के पास; ।६।
तालो चौथो खोलता ए, पोते प्रगट्यो राय,
माथें ओढै ओढणा ए, लोकां मांहे लजाय ।७।

मांहो मांहे मीटे मिल्या ए, मान महातम खोय;
पछताप ते अति करै ए, हुणहार जिम होय ।८।
भूपति प्रमुख सको भणै ए, श्रीमति नै साबास;
वैरी घाव वखाणीये ए, राल्यो शील सुवास; ।९।
तेड़ी राजा तेहनें ए, सखरो दै सतकार,
श्रीमती तुं मोटी सती ए, नाम थकी निस्तार ।१०।
वसत्र आभ्रण दीया घणा ए, बहनी नाम बोलाय;
पोते नृप पगे लागने ए, निज अपराध खमाय ।११।
गाजै बाजै हर्ष सुं ए, पहोंचावै नृप गेह,
सहु लोक में जस थयो ए, धन धन श्रीमति एह ।१२।
नगरी मांहि बहु हुवो ए, जिण धरम नो उद्योत ।
सुध शील पाल्यो थकां ए, श्रीमति पर वाधै ज्योत ।१३।
कितरो काल गया थकां ए, आयो तसु भरतार;
शील प्रसादे सुख लह्यो ए, वरत्या जय जयकार ।१४।
अन्य दिवस गुरू आविया ए, धरमघोष अणगार;
श्रीमती संजम लीयो ए, जाणी अथिर संसार; ।१५।
व्रतधारी श्रावक हुवा ए, राजादिक बहु लोग;
पुन्न तणे परसाद थी ए, थाये सगला थोक; ।१६।
सूध साधवी श्रीमती ए, सुर पद पाम्यो सार;
महाविदेह में सीभसी ए, एक लहसि अवतार ।१७।
सीले सुख सदा लहै ए, सीले जस सोभाग;
धरम थकी कहै धरमसी ए, सफल फलै तसु आस ।१८।

इति श्रीमती चौढालिया सम्पूर्ण

[स्वामी नरोत्तमदास जी के सग्रह से]

—✻—

श्री दशार्णभद्र राजर्षि चौपई

वीर जिणेसर वंद ने, प्रणमूं गौतम पाय;
एहनो सासन आज ए, सहु जीवां सुख थाय ।१।
विधि सुं करतां वंदना, धरता मन सुद्ध ध्यान;
लहिये सुख इह लोक ना, परभव मुक्ति प्रधान ।२।
वांदंतां श्री वीर ने, मन थी छोड्यो मद;
इन्द्र प्रशंस्यो आपथी, भलो दसारणभद्द ।३।
मदहरसूत शिवधरम में, पेखी तिण प्रस्ताव;
दसार्णभद्र कीध दृढ, भगवंत ऊपरि भाव ।४।
भांति भांति दीठी भली, गुण अवगुण हुं ज्ञान,
भली वस्तु सहु को भजं, निरखी तजे निदान ।५।

ढाल (१)—कपूरहुवे अति उजलो रे, ए देशी

सम्बन्ध ए तुम्हे सांभलो रे, कारण मूल कहाव;
अधिक दशार्ण आदर्यो रे, भगवंत ऊपरि भाव ।१।
सुगुण नर ए सुणिज्यो अधिकार
सांभलितां थासी सही रे, आगें लाभ अपार; सु०।२।
देश सहु में दीपतो रे, वारू देश वैराट;
सहू को लोक सुखी सदा रे, वरतें निज कुल वाट, ।३।
मोटो एक तिण देश में रे, गिणजें धनपुर गाम,
धन धाने धीणे करि रे, ठावो निरभय ठाम । स० ।४।

मदहर सुत मणिहारीयो रे, वसे तिहां सुखवास;
सखरो आप सुमारगी रे, त्रिया कुशीला तास । स०।५।
कोइ क तिहां कणवारीयो रे, मनरो तिण सु मेलि;
आवै छानों अवसरे रे, करिवा तिण थी केलि ।स० ।६।
उणही ग्रामे एकदा रे, मोटे चोहटें मांहि;
नाटिकीया नाचै नवा रे, आवें लोक उमाहि ।स०।७।
किणही नाटिकीये कीयो रे, नारी रूप नवल्ल;
भांति भांति खेलें भलो रे, अद्भुत कला अवल्ल ।स०।८।
तेहवें ते मदहर त्रिया रे, देखण आवी दौड़ि;
नटवी रूप निहाल ने रे, ठिक न रह्यो दिल ठोड़ि ।६।
उण रा साथी आगलें रे, तेह त्रीया कहें ताम;
मुझ घर आवी जो मिलें रे, द्यु तुहने सो दाम ।१०।
तुरत बात मानी तिणें रे, नाटिक परो निवेड़ि;
नाटिकीयो तिण नारिनें रे, आयो करिवा केड़ि ।११।
त्रिया रूप नटवो तिको रे, आंगण ऊभो आय,
मदहर त्रिय मांहे लीयो रे, बहु आदर बोलाय ।स०१२।
पग हाथ प्रमुख पखालिवा रे, निरमल दीधो नीर;
पुरसें भोजन युगति सं रे, खांडि घिरत नें खीर ।१३।
जीमण बैठो जेतलै रे, नटुवो वेसे नारि,
तिण वेला कणवारियो रे, बोल्यो घरि ने बार ।स०१४।
नारि कहे नट नारि नें रे, कर मति चिंता कांइ ;
तूं छिप वैसि तिलां तणे रे, मोटे कोठें मांहि ।सु० १५।

ते आघो बैठो तिहां रे, अंधारी दिसि आई।
फूं फूं फूं तिल फूंकि ने रे, खूणै बैठो खाय। सु० १६।

दूहा

आसंगायत आवियौ, तेहवें तेह तलार।
पायस भोजन पेखि ने, जिमवा करे जिवार।१।
जीमण बैठो जुगति सुं, सखरी खीर सवाद।
बोल्यो ग्रहपति बारणे, सांभलियो तिणसाद।२।
हलफलियो ऊठ्यो हिवें, अटकल कोप उपाय।
करें वीनति कणवारीयो, छानों मुझ छिपाय। ३।
तिल घर में बैसो तुम्हे, पिण ओलै द्विज पास।
आघा मत पैसौ उहां, विषधर नो छै वास। ४।
ते छिपायो बैठो तिसें, आयो धणीय उमाह।
आखर बीहे अंगना, निबलो तोही नाह। ५।
भर्यो थाल दीठो भलो, खीर घृत नें खांड।
पूछै पति कहो किम किया, मोसु कपट म मांड।६।

ढाल (२)—कुमरी बोलावै कुबजो ए देसी

कहे त्रिया बातां केलवी, आठिम नो दिन आजो रे।
शिव पारवती पूजिवा, करी खीर तिण काजो रे क०।१
जैति करी नें जीमिवा, हुं बैठी थी एहो रे।
जितरे हीय आया तुम्हे, मैं कहिवो सत्यमेवो रे।क० २

पति कहैं हुं परि गांम थी, आयो भूखो आमो रे।
पहिली जीमल्यु' तूं पछे, धाई बैठी धामो रे। क० ३
किम जीमिस त्रिया कहै, सुचि कीधो नहिं स्नानो रे।
करतो भोजन ते कहै, तुम्ह स्नाने अम्ह स्नानो रे।क० ४
तिण अवसर तिल घर तणै, मधि बैठो हुइ मूंकौ रे।
नट ते रूपे नारि नें, फाकै तिल दे फूंको रे क० ।५
विम्मासै कणवारियो, सरप कह्यो थो सोयो रे।
किहां इक फूंकारा करै, हिव केही गति होयो रे। क० ६
जौ अंधारें झाटसी, करसी कुण कणवारो रे।
इण दिसि वाघ उठी नदी, पड़ियो एह प्रकारो रे। क०७
नर उठी नासौ जिसे, लखियो नटवी लागो रे।
ते पिण उठ नाठी तिहां, भला गया बिहुं भागो रे। क०८
धोखे पड़ियो घर धणी, सोचे केहो सरूपो रे।
नर नारी कुण नीकल्या, अदभुत रूप अनूपो रें। क० ६
प्रिय नै पनें परचावण, प्रीया बोली होठे बुद्धो रे।
मैं पाल्यो थो जीमतां, स्नान कियां विण सद्धो रे।क०१०
जीम्यो अणन्हायो जरै, सखरी न करी सेवो रे।
शिव पारवती सलकिया दोयु' परतिख देवो रे। क०
पहिला वडेरा पूजता, सेवा करता सारो रे।
पेट पूज्यां सहु पूजिया, ए थारो आचारो रे। क० १२
कूवां बाहर का नहीं, हुंपिण रही हरायो रे।
वैसि रहें ज्यु बापड़ो, ढोली ढोल बजायो रे। क० ।१३

दूहा

मदहर कहै सुण माननी, हुं मूरख मतिहीन।
अणसमझ्यो उतावलै, कारिज भूंडो कीन। १।
हिवै जो अधिकी तूंहि तो, विधि काईक बताय।
गया देव पाछा गृहे, आवै केण उपाय। २।
त्रिया कहै सुणि नाह तुं, जो परदेशे जाय।
खरै न्याय धन खाट नें, ल्यावै तुं हित लाय। ३।
विधि बलि बाकुल करी, बलि पूजीजे धरि प्रेम।
शिव पारवती तो सही, आवै पूठा एम। ४।
केलवी कह्यो कुसीलणी, साच गिणै पति सुद्ध।
देखो भोलो दिल्ल रो, धवलो तितरो दूध। ५।

ढाल (३) सेवा बाहिरौ कहीयै को सेवक ए देशी

मानव युं भमें मिथ्यामति मोह्यौ, जे हित अहित न जाणै।
अणहूंता इ देवां ऊपर, आसत अधिकी आणै। १ मा०
दिन तिणहीज चल्यौ परदेशे, ले आऊं धन लाहो।
माहरा रूस्या देव मनाउं, ए मन में उमाहौ। मा० २
करतो पंथ दिने कितरेकें, देश दशारण दीठो।
वारू सरस ईख रा वाटक, मांहि हुवै गुल मीठो। मा० ३
रोजगार काजै तिहां रहियौ, काम कितो एक कीधो ;
खेत धणी तिण हेम खुशी सु, दस गदीयाणा दीधौ ; ४ मा०

खांचाताण मिली ए खरची, काम सरै नहिं कोई ;
भमतो तिहां थी वलि भोगवतो, सुख दुख लीया सोई ; ५ मा०

इक दिन इक अटवी में ऊभो, छवि सखरी तरु छाया ;
वाडी चढि राय दशारण, उणहिज वडि तलि आया ; ६ मा०
पूछ्यो भूपे कुण परदेशी, इण ठामे क्युं आयो ;
तिण अपणा घर देव त्रियानो, सहु विरतंत सुणायो ; ७

मदहर सुत हुं छु मणिहारो, धन नें कारण धाउं ;
अरथ खाट नें पूजी अरची, माहरा देव मनावुं ; ८
पूजिस हुं शिव नें पारबती, सो दिन सफलो थासी ;
माया भावै तितरी मेलो, आखर साथ न आसी ; ६

सहसबुद्धी नृप सुणि समझावै, परमारथ सहु पायो ;
सरल चित्त दीसे तुं सखरो, पिण बाहर बहकायो ; १०
घर में केई घाल्या घरणी, नाठा ते नर नारि ;
शिव पारबती घर थी सिलक्या, कामण दीधी गारी ; ११

परहो तुझ काढ्यो परदेशे, कुलटा इतरो कीधो ;
समझावी इम राय दशारण, डेरो पुर में दीधो ; १२
सखरे महिले राख्यो सुखियौ, सखरी भगति सजाई ;
स्वारथ विण जे करणी सेवा, भल्लां तणीय भलाई ; १३

दिल में चिंते राय दशारण, अहो एहनी अधिकाई ;
अछता देव तिहां ही ऊपर, साची भगति सदाई ; १४
मो सरिखौ नाहिं कोई मूरख, मोहे रहियौ माची ;
साचा देव तिथंकर सरिखा, सेवा न करूं साची ; १५

जयवंता श्री वीर जिणेसर, इण ठामे जो आवै ;
तो काइक अधिकाई कीजे, भावना इम नृप भावै ; १६

दूहा

इण अवसर तिहां आविया, जगगुरु वीर जिणेश ।
तरता बीजां ने तारता, देता ध्रम उपदेश । १
परसिद्ध श्री गौतम प्रमुख, गणधर साध इग्यार ।
साथे साध भला सही, जेहनै चवद हजार । २
चौ विधि देव मिली रच्यो, समवशरण श्रीकार ।
स्वामि बैठा सिंहासणे, बैठी परषद बार । ३
जेण दसारण राय ने, दीध वधाई दोड़ ।
आभरण वगस्या अंगना, माथै राख्यो मौड़ । ४
हिवै घणो हिज हरखियो, भूप दशारणभद्र ।
छोले इछोले छिले, साचो जाणि समुद्र । ५
सबला आडंबर सजे, वांदु इम ध्रधमान ।
किणही वांद्या नहिं कदे, इम धारे अभिमान । ६

ढाल (४) यतिनी देशी

अभिमान इसौ मन आणै, प्रभु आया पुण्य प्रमाणै ।
महिमा करूं सबल मंडाणै, वाह वाह सकोइ वखाणै ।१
तेड़या कोटंबक ताम, आखैं हिव भूपति आम ।
सज करीय वजावो सारा, नोबत नीसाण नगारा ।।२।।

शुचि कीजे स्नान संपाड़ा, सहु पहिरै नवि नवि साड़ा ।
हीर चीर पाटंबर हेम, पहिरौ सहु भूषण प्रेम ॥३॥
हिव आणि सिणगारो हाथी, साम्हेलौ मोहें तिण साथी ।
गुड़डंत कलाहिण गाजै, रोलम्ब कपोले राजे ॥४॥
काजल किलकें तनु काला, सबला परचण्ड सुंडाला ।
सिंदूख्या सीस सलूकै, जलधर में बीज झबूकै ॥५॥
ऊपर सोहै अंबाड़ी, फूली जाणै फूलवाड़ी ।
ऊंचा परवत अणुहारा, आण्या गज सहस अठारा ॥६॥
घणा मोला ऊंचा घोड़ा, हर हीसै होडा होडा ।
तेजी ऊछलै त्राडता, उचास भणी आपड़ता ॥७॥
मुंह पतलै पूठे मोटा, छछोहा ने कानें छोटा ।
सोने री साखत कसीया, राजी हुवै चढतां रसिया ॥८॥
सालहोत्र सुलक्षण साख, लेखां हय चौवीस लाख ।
सोल सहस घणै सनमान, राजें साथै राजान ॥९॥
सुखपाल सहस श्रीकार, रथ तौ इकवीस हजार ।
सातसै अन्तेउर सार, सहु सज्ज हुआ सिणगार ॥१०॥
कहा पायक तेत्रीस कोड़ि, कर सेवा बे कर जोड़ि ।
छत्र चामर सोभा छाजै, रवि तेज दसारण राजे ॥११॥
वड़ी रिधि तणै विसतारै, पुर बाहिर हिव पधारै ।
आवै धरता आणंद, जिहां त्रिगड़ै श्री वीर जिणंद ॥१२॥

॥ दूहा ॥

अंबाड़ी थी उतख्या, महिपति अधिकें मान ।
मदहर सुत पिण साथ ले, वंद्या श्री व्रधमान ॥१॥

हिव अति हरख्यो मदहरो, देख निरंजन देव।
मिथ्यामति मेटी करे, श्री जिनवर नी सेव ॥२॥
इन्द्र हिवै आवै इहां, सबल आडंबर साज।
नृप प्रतिबोधण जिन नमण, एक पंथ दोइ काज ॥३॥

ढाल (५) इण अवसर कोइ मागध आयो पुरन्दर पास, ए देशी

सोधरमै देवलोके शक्र महासुर राज,
दीठौ राय दशारण वंदण नै सजै साज।
करणी एह करै ते धन जिन वंदन काज,
पिण अहंकार उतारनै हुं प्रतिबोधूं आज ॥१॥

सुरपति हुकम इरापति देव धरी ऊछाह,
चौसठि सहस्स वड़ा गजराज विकुर्वे चाह,
इक इक गजरै मुख सुखकारी पांचसै वार,
मुख मुख आठ दंतूशल रच्या श्रीकार ॥२॥

इक इक दंते पंते वारू अठ अठ वावि,
वावी वावी आठ आठ कमल सुगंध धर भाव
कमले कमले लख लख पांखडियां परसिध,
पांखडीए पांखडीए नाटक बत्रीस बद्ध ॥३॥

वलि प्रति कमले मध्य प्रासाद वतंस विमान,
राजै तिहां अग्रमहिषी आठे शक्र राजान,
एह अचंभै रूप अनूप वण्या असमान
देख दसारण राजा आप तज्यो अभिमान ॥४॥

जग में धन धन जिन शासन धन वीर जिणंद,
आवै जेहनै वंदण काजै एहवा इंद;
मैं अग्यान कीयौ अभिमान महा मतिमंद,
मुझ रिद्धि अंतर जेहवौ कूप समंद ॥५॥

अहो अहो इन्द्र आगे कीया केई धरम अनूप,
लाधी वैक्रिय लवधि रचै मन मान्या रूप;
धरम करूं हिव हुं पिण ते निश्चै मन धारि,
वीर सुं आवि करी नृप वीनति तुं प्रभु तारि ।६।

प्रतिबूधौ मदहर सुत पिण नृप संगति पाइ,
मलयाचल संगे तरु बीजा पिण महकाय;
कीधो लोच तिहां हिज सोची बात न काय,
देई बिहुं ने दीक्षा शिष्य किया जिनराय ।७।

तुरित त्यागी वड वैरागी मोह न माय,
जे करणी तें कीधी ते मैं कीनि न जाय;
तें अहंकार पोतारो साच कीयो सुखदाय,
पोतें इन्द्र प्रशंसा करि करि लागो पाय ।८।

सहु रिधि संवर शक्र पहूंतो सरग मझार,
वीर जिणेसर तिहां थीं कीध अनेथ विहार;
राय दशारण मदहर साधु भला ध्रमसील,
सहु सुख पाया पायो केवल मोख सलील ।६।

ढाल—(६) आज निहेजो दीसइ नाहलो—ए देशी

कोई मन में गरब रखे करो, सुज्ञानी हूं सोई।
जो करो तोही दसारणभद्र ज्युं, करिज्यो तुम्हे सहु कोई। १को०
सबलो राज दशारण देश नो, तुरत ज तजीयो तेह।
पाए लागी ने इंद्र प्रशंसीयो, अधिको मुनिवर एह। २
उत्तराध्ययन अध्ययन अठारमे, सूत्र टीका सुविचार।
रिषमंडल वलि प्रकरण थी, रच्यो ए विस्तर अधिकार। ३
मिथ्यामत जिम सांभलतां टलै, साचो सरस संबंध।
समकित कारण सुबुधि सांभलो, बोल्यो सगवट बंध। ४
संवत सतरै वरस सतावनै, मेडतै नगर मझार।
चौमासे गणधर जिणचंद जी, सुजस कहै संसार। ५
भट्टारकीया खरतर गच्छ भला, शाखा जिनभद्रसूरि।
वाचक विजयहरष वखतावरू, परसिध पुण्य पडूर। ६
तेहनै शिष्ये ए मुनिवर तव्यो, श्री पाठक ध्रमसीह।
श्री जिनधरम तिको श्रीसंघ नै, द्यौ सुख दोलति लीह। ७

इति श्रीदशारणभद्र राजर्षि चतुःपदी समाप्ताः
संवत् १८६१ मिती आसाढ़ कृष्ण १ रवि
महिपुरं लि० उद्योतविजै—

—:०:—

श्रीवीरभक्तामरः

राज्यर्द्धि वृद्धिभवनाद् भवने पितृभ्यां,
श्री 'वर्धमान' इति नाम कृतं कृतिभ्याम्।
यस्याद्य शासनमिदं वरिवर्त्ति भूमा—
वालम्बनं भवजले पततां जनानाम्॥ १॥

श्री 'आर्षभिः' प्रणमतिस्म भवे तृतीये
गर्भस्थितं तु मघवाऽस्तुत सन्नविंशे।
यं श्रेणिकादिकनृपा अपि तुष्टुवुश्च
स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम्॥ २॥

(युग्मम्)

अथ तृतीयकाव्ये श्रीभगवतो महावीरस्वामिनो बलाधिक्यमाह—

वीर ! त्वया विदधताऽऽमलिकीं सुलीलां,
बालाकृतिश्छलकृदारुरुहे सुरो यः।
तालायमानवपुषं त्वदृते तमुच्च-
मन्यः क इच्छति जनः सहसाग्रहीतुम्॥ ३॥

अथ चतुर्थकाव्येन श्रीभगवतो विद्याधिक्यमाह—

शक्रेण पृष्टमखिलं त्वमुवक्थ[1] यत् तद्
जैनेन्द्रसंज्ञकमिहाजनि शब्दशास्त्रम्।
तस्यापि पारमुपयाति न कोऽपि बुध्या,
को वा तरीतुमलमम्बुनिधिं भुजाभ्याम् ॥ ४ ॥

उपदेशाधिक्यमाह—

धर्मस्य वृद्धिकरणाय जिन! त्वदीया,
प्रादुर्भवत्यमलसद्गुणदायिनी गौः।
पीयूषपोषणपरा वरकामधेनु-
र्नाभ्येति किं निजशिशोः परिपालनार्थम्? ॥५॥

कर्मक्षये भगवतो नाम्नो माहात्म्यमाह—

छिद्येत कर्मनिचयो भविनां यदाशु
त्वन्नामधाम किल कारणमीश! तत्र।
कण्ठे पिकस्य कफजालमुपैति नाशं
तच्चारुचूतकलिकानिकरैकहेतुः ॥ ६ ॥

भगवता मिथ्यात्वं हतं तदन्यदेवेषु स्थितमित्याह—

देवार्यदेव! भवता कुमतं हतं तन्—
मिथ्यात्ववत्सु सततं शतशः सुरेषु।
संतिष्ठतेऽतिमलिनं गिरिगह्वरेषु
सूर्यांशुभिन्नमिव शार्वरमन्धकारम् ॥ ७ ॥

---

[1] वक्थ इति पाठान्तरम्।

भगवतो नाम्न आधिक्यमाह—

त्वन्नाम 'वीर' इति देव सुरे परस्मिन्
केनापि यद्यपि धृतं न तथापि शोभाम् ।
प्राप्नोत्यमुत्र मलिने किमृजीषपृष्ठे,
मुक्ताफलद्युतिमुपैति ननूदबिन्दुः ? ॥ ८ ॥

भगवतो ज्ञानोत्पत्तिविशेषमाह—

ज्ञाने जिनेन्द्र ! तव केवल नाम्नि जाते
लोकेषु कोमलमनांसि भृशं जहर्षुः ।
प्रद्योतने समुदिते हि भवन्ति किं नो,
पद्माकरेषु जलजानि विकाशभाञ्जि ॥९॥

सेवके उपकारविशेषमाह—

वादाय देव ! समियाय य इन्द्रभूति—
स्तस्मै प्रधानपदवीं प्रददे स्वकीयाम् ।
धन्यः स एव भुवि तस्य यशोऽपि लोके
भूत्याऽऽश्रितं य इह नाऽऽत्मसमं करोति ॥१०॥

भगवतो वचनमाधुर्यमाह—

गोक्षीर सत्सितसिताधिकमृ (मि) ष्टमिष्ट-
माकर्ण्य ते वच इहेप्सति को[1] परस्य ।
पीयूषकं शशिमयूखविभं विहाय
क्षारं जलं जलनिधे रसितुं क इच्छेत् ?॥११॥

---

१ 'नो' इत्यन्यः पाठः

भगवतोरूपाधिक्यमाह—

अङ्गुष्ठमेकमणुभिर्मणिजैः सुरेन्द्रा
निर्माय चेत्तव पदस्य पुरो धरेयुः।
पूष्णोऽग्र उल्मुकमिवेश स दृश्यते वै
यत्तो समानमपरं न हि रूपमस्ति॥१२॥

भगवद्दर्शने मिथ्यात्वं नोद्घटतीत्याह—

उज्जाघटीति तमसि प्रचुरप्रचारं
मिथ्यात्विनां मतमहो न तु दर्शने ते।
काकारिचक्षूरिव वा न हि चित्रमत्र
यद्वासरे भवति पाण्डुपलाशकल्पम्॥१३॥

कषायभङ्गे भगवतो बलवत्वमाह—

वन्या द्विपा इव सदैव कषायवर्गा
भञ्जन्ति नूतनतरूनिव सर्वजन्तून्।
सिंहातिरेकतरसं हि विना भवन्तं
कस्तान् निवारयति सञ्चरतो यथेष्टम्?॥१४॥

उपसर्गसहने भगवतो दृढतां दर्शयन्नाह—

द्विट् 'सङ्गमे' न महतामुपसर्गकाणां
या विंशतिस्तु ससृजे जिन! नक्तमेकम्।
चित्तं चचाल न तया तव झञ्झया तु
किं मन्दराद्रि शिखरं चलितं कदाचित्? ।१५।

भगवानपूर्वदीपोऽस्तीत्याह—

निःस्नेह ! निर्दश ! निरञ्जन ! निःस्वभाव !
निष्कृष्णवर्त्म ! निरमत्र ! निरङ्कुशेश !
नित्यद्यु ते ! गतसमीरसमीरणात्र
दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ ! जगत्प्रकाशः ।१६।

अथ सूर्यादप्यतिशयवान् भगवानित्याह—

विस्तारको निजगवां तमसः प्रहर्त्ता,
मार्गस्य दर्शक इहासि च सूर्य एव ।
स्थाने च दुर्दिनहतेः करणाद् विजाने
सूर्यातिशायिमहिमाऽसि मुनीन्द्र ! लोके ।१७।

अथ चन्द्रादपि त्वद्यशोऽधिकमित्याह—

प्रह्लादकृन् कुवलयस्य कलानिधानं
पूर्णश्रियं च विदधच्च यशस्त्वदीयम्
वर्वर्त्ति लोकबहुकोक सुखंकरत्वाद्-
विद्योतयज्जगदपूर्वशशाङ्कबिम्बम् ॥१८॥

भगवता (यत्) सांवत्सरिकं दानं दत्तं तदाह—

यद् देहिनां जिनवराब्दिकभूरिदाने—
दौःस्थ्यं हतं हि भवता किमु तत्र चित्रम् ?
दुर्भिक्षकष्टदलनात् क्रियते सदौप-
कार्यं कियज्जलधरैर्जलभारनम्रैः ? ॥१९॥

भगवच्चरणदर्शने फलाधिक्यमाह—

यादृक् सुखं भवति ते चरणेऽत्र दृष्टे
तादृक् परर्भुवदनेऽपि न देह भाजाम्।
प्राप्ते यथा सुरमणौ भवति प्रमोदो
नैवं तु काचशकले किरणाकुलेऽपि ॥२०॥

भक्तो भगवत्सेवां प्रार्थयन्नाह—

एवं प्रसीद जिन ! येन सदा भवेऽत्र
त्वच्छासनं लगति मे सुमनोहरं च।
त्वत्सेवको भवति यः स जनो मदीयं
कश्चन मनो हरति नाथ भवान्तरेऽपि ॥२१॥

जिनस्य भामण्डलम्—

भामण्डलं जिन ! चतुर्मुखदिक्चतुष्के
तुल्यं चकासदवलोक्य सभा व्यमृक्षन्।
सूर्यं समा अपि दिशो जनयन्ति किं वा
प्राच्येव दिग् जनयति स्फुरदंशुजालम् ॥ २२ ॥

लोकैर्यः शिवः शिव इति ध्यायते स भगवानेवेत्याह—

शम्भुर्गिरीश इह दिग्वसनः स्वयम्भू-
र्मृत्युञ्जयस्त्वमसि नाथ महादिदेव:।
तेनाम्बिका निजकलत्रमकारि तन् त्वन्—
नान्यः शिवः शिवपदस्य मुनीन्द्र ! पन्थाः ॥ २३ ॥

सर्वशास्त्राध्ययनादपि सम्यक्त्वमधिकमिति दर्शयन्नाह—

जानन्ति यद्यपि चतुर्दश चारु विद्या
देशोनपूर्वदशकं च पठन्ति सार्थम्।
सम्यक्त्वमीश न धृतं तव नैव तेषां
ज्ञानस्वरूपममलं प्रवदन्ति सन्तः ॥ २४ ॥

पुरुषोत्तमोऽयं वीर एवेत्याह—

नृणां गणाः गुण चणाः पतयोऽपि तेषां
ये ये सुराः सुरवराः सुखदास्तकेऽपि।
कृत्वाऽञ्जलिं जिन! चक्रिति ते स्तुतिं तद्
व्यक्तं त्वमेव भगवन्! पुरुषोत्तमोऽसि ॥ २५ ॥

संसारसागरशोषकाय प्रणाम :—

रोगा झखा बहुमहामकराः कषाया—
श्छिन्नैव यत्र वडवाग्निरसातमम्भः।
वार्धिर्भवः सर इव त्वयका कृतस्तत्
तुभ्यं नमो जिनभवोदधिशोषणाय ॥२६॥

भगवद्दर्शनालाभे विडम्बना—

यद् यस्य तस्य च जनस्य हि पारवश्य—
मावश्यकं जिन! मया वरिवस्ययाऽऽप्तम्।
तत् तर्कयामि बहुमोहतया मया त्वं
स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचिदपीक्षितोऽसि ॥२७॥

स्तनन्धयस्य भगवतो रूपस्वरूपमाह—

रम्येन्द्रनीलरुचि वेषभृतो जनन्याः
पार्श्वं श्रितस्य धयतश्च पयोधरं ते ।
रूपं रराज नवकाञ्चनरुक् तमोघ्नं
बिम्बं रवेरिव पयोधरपार्श्ववर्त्ति ॥२८॥

प्रभोर्जन्म—

इक्ष्वाकुनामनि कुले विमले विशाले
सद्रत्नराजिनि विराजत उद्भवस्ते ।
दोपापहारकरणः प्रकटप्रकाश—
स्तुङ्गोदयाद्रि, शिरसीव सहस्ररश्मेः ॥२९॥

नाथस्य जन्माभिषेकः—

स्नानोदकैर्जिन (र्जनि) महे सुरराजिमुक्तै-
र्गात्रे पतद्भिरपि नूनमनेजमानम् ।
दृष्ट्वा भवन्तममराः प्रशशंसुरीश-
मुच्चैस्तटं सुरगिरेरिव शातकौम्भम् ॥३०॥

वप्रत्रयविचारः—

ये त्रिप्रदक्षिणतया प्रभजन्ति वीरं
ते स्युर्नरा अहमिवाद्भुतकान्तिभाजः ।
वप्रत्रयं वददिति प्रविभाति तेऽत्र
प्रख्यापयन् त्रिजगतः परमेश्वरत्वम् ॥३१॥

भगवत्संस्मरणे सुरसान्निध्यमाह—

कान्तारवर्त्मनि नराः पतिताः कदाचिद्
दैवान् क्षुधा च तृषया परिपीडिताङ्गाः ।
ये त्वां स्मरन्ति च गृहाणि सरांसि भूरि-
पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयन्ति ॥३२॥

भगवच्चित्तस्थिरतामाह—

संनिश्चला जिन ! यथा तव चित्तवृत्तिः
कस्यापि नैवमपरस्य तपस्विनोऽपि ।
यादृक् सदा जिनपते ! स्थिरता ध्रुवस्य
तादृक् कुतो ग्रहगणस्य विकाशिनोऽपि ?॥३३॥

अथ भगवद्दर्शने जन्मवैरिणामपि विरोधो न भवतीत्याह—

ओत्वाखवोऽहिगरुडाः पुनरेणसिंहा-
अन्येऽङ्गिनोऽपि च मिथो जनिवैरबन्धाः ।
तिष्ठन्ति ते समवसृत्यविरोधिनं त्वा
दृष्ट्वा भयं भवति नो भवदाश्रितानाम् ॥३४॥

भगवच्चरणशरणगतं न कोऽपि पराभवतीत्याह—

यस्ते प्रणश्य चमरोंऽह्वितले प्रविष्ट-
स्तं हन्तुमीश न शशाक भिदुश्च शक्रः ।
तद् युक्तमेव विबुधाः प्रवदन्ति कोऽपि
नाक्रामति क्रमयुगाचल संश्रितं ते ॥३५॥

भगवन्नामतोऽति (पि) भयं न भवतीत्याह—

पूर्वं त्वया सदुपकारपरेण तेजो-
लेश्या हता जिन विधाय सुशीतलेश्याम्।
अद्यापि युक्तमिदमीश ! तथा भयाग्निं
त्वन्नामकीर्तनजलं शमयत्यशेषम् ॥३६॥

भगवन्नामतः सर्पभयमपि विलीयत इत्याह—

ऊर्ध्वस्य ते बिलमुखे वचनं निशम्य
यच्चण्डकौशिकफणी शमतामवाप।
तन् साम्प्रतं तमपि नो स्पृशतीह नाग—
स्त्वन्नामनागदमनी हृदि यस्य पुंसः ॥३७॥

भगवद्विहारे ईतयो न भवन्तीत्याह—

तुर्यारके विचरसिस्म हि यत्र देशे
तत्र त्वदागमत ईतिकुलं ननाश।
अद्यापि तद्भयमहर्मणिधामरूपात्
त्वत्कीर्त्तनात् तम इवाशु भिदामुपैति ॥ ३८ ॥

भगवत्पादसेवाफलम्—

निर्विग्रहाः सुगतयः शुभमानसाशाः
सच्छुक्लपक्षविभवाश्चरणेषु रक्ताः।
रम्याणि मौक्तिकफलानि च साधुहंसा
स्त्वत्पादपङ्कजवनाश्रयिणो लभन्ते ॥ ३९ ॥

भगवद्वचनश्रद्धानात् कामितप्राप्तिर्भवतीत्याह—

संसारकाननपरिभ्रमणश्रमेण,
क्लान्ताः कदापि दधते वचनं कृतं ते।
ते नाम कामितपदे जिन देह भाज—
स्त्रासं विहाय भवतः स्मरणाद् व्रजन्ति ॥ ४० ॥

भगवद्रूपं दृष्ट्वा सुरूपा अपि स्वरूपमदं मुञ्चन्तीत्याह—

सर्वेन्द्रियैः पटुतरं चतुरस्रशोभं
त्वां सत्प्रशस्यमिह दृश्यतरं प्रदृश्य
तेऽपि त्यजन्ति निजरूपमदं विभो ! ये
मर्त्या भवन्ति मकरध्वजतुल्यरूपाः ॥ ४१ ॥

निर्बन्धनं जिनं ध्यायन्तो निर्बन्धना भवन्तीत्याह—

छित्वा दृढानि जिन ! कर्मनिबन्धनानि
सिद्धस्त्वमापिथ च सिद्धपदं प्रसिद्धम्।
एवं तवानुकरणं दधते तकेऽपि
सद्यः स्वयं विगतबन्धभया भवन्ति ॥ ४२ ॥

भगवत्स्तोत्राध्ययनात् सर्वोपद्रवनाशो भवतीत्याह—

न व्याधिराधिरतुलोऽपि न मारिरारं,
नो विड्वरोऽशुभतरो न दरो ज्वरोऽपि।
व्यालोऽनलोऽपि न हि तस्य करोति कष्टं
यस्तावकं स्तवमिमं मतिमानधीते ॥ ४३ ॥

भगवत्स्तवोमौक्तिकहारः कण्ठे धार्य इत्याह—

त्वत्स्तोत्रमौक्तिकलतां सुगुणां सुवर्णां
त्वन्नामधामसहितां रहितां च दोषैः ।
कण्ठे य ईश ! कुरुते धृत 'धर्मवृद्धि'—
स्तं 'मानतुङ्ग'मवशा समुपैति लक्ष्मीः ॥ ४४ ॥

अथ प्रशस्तिः—

रसगुणमुनिभूमेऽब्देऽत्र भक्तामरस्थैः
चरमचरमपादैः पूरयन्सत्समस्याः ।
सुगुरु 'विजयहर्षा' वाचकास्तद्विनेय—
श्चरमजिननुतिं ज्ञो 'धर्मसिंहो' व्यधत्त ॥ ४५ ॥

—:०:—

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

सरस्वत्यष्टकम्

प्राग्वाग्देवि जगज्जनोपकृतये, वर्णान् द्विपञ्चाशतम्,
या वाप्सी निजभक्तदारकमुखे, केदारके बीजवन् ।
तेभ्यो ग्रन्थ-गुलुञ्छकाः शुभफला, भूता प्रभूतास्तकान् ,
सैवाद्याऽपि परःशतान् गणयसे स्तकूस्फोरणाछ्मतः ॥१॥

यैर्ध्यातेति प्रातः प्रातर्म्मातुर्म्मात र्वाग्मात--
विद्याजातः सश्रीसातस्तेषां जातः प्रख्यातः ।
एतां भ्रातर्भक्त्युध्मातः स्नेहस्नातः स्वाख्यातः
सेवस्वातश्चितृष्णातः शास्त्रेषु स्यान्निष्णातः ॥२॥

शिक्षाछंदश्च कल्पः सुकलितगणितं, शब्दशास्त्रं निरुक्ति—
वेंदाश्चत्वार इष्टा भुवि विततमते धर्मशास्त्रं पुराणं ।
मीमांसाऽऽन्वीक्षिकीति त्वयि निचितभृतास्ताःषडष्टाऽपिविद्या-
स्तत्त्वंविद्यानिषद्या किमु किमसिधियांसत्रशाला विशाला ॥३॥

सुवृत्तरूपःसकलः सुवर्णः प्रीणन् समाशा अमृतप्रसूर्गीः
तमःप्रहर्त्ता च शुभेषु तारके हस्ते विधुःकिं किमु पुस्तकस्ते ॥४॥

पदार्थसार्थदुर्घटार्थचित्समर्थनक्षमा,
सुयुक्तिमौक्तिकैकशुक्तिरत्रमूर्त्तिमत्प्रमा ।
प्रशस्तहस्तपुस्तका समस्त शास्त्रपारदा,
सतां सका कलिदकां सदा ददातु सारदा ॥५॥

मंद्रैर्मध्यैश्च तारैः क्रमततिभिरुरः कण्ठमूर्द्धप्रचारैः,
सप्तस्वर्य्या प्रयुक्तैः सरगमपधनेत्याख्ययाऽन्योन्यमुक्तैः ।
स्कन्धेन्यस्य प्रवालं कललितकलं कच्छपीं वादयंती,
रम्यास्या सुप्रसन्ना वितरतु वितते भारती[1] भारती[2] मे ॥६॥

भातो भातः श्रवणयुगले कुंडले मण्डले वै,
चान्द्रार्कीये स्वतः उत ततो निःसृतौ पुष्पदन्तौ ।
श्रावं श्रावं वचनरचनां मेदुरीभूय चास्याः,
संसेवेते चरणकमलं राजहंसाभिधातः ॥ ७ ॥

अमित नमितकृष्टे तद्धियां सन्निकृष्टे,
श्रुतसुरि शुभदृष्टे सद्रसानां सुवृष्टे ।
जगदुपकृतिसृष्टे सज्जनानामभीष्टे,
तव सफलपरीष्टे को गुणान्वक्तुमीष्टे ॥ ८ ॥

सतेत्थमष्टकेन नष्टकष्टकेन चष्टके
सतां गुणर्द्धि गर्द्धनः सदैव धर्म्मवर्द्धनः ।
सखे सुबुद्धिवृद्धिसिद्धिरीप्स्यते यदा सती,
नमस्यतामुषस्य सावश्य मों सरस्वती ॥ ९ ॥

—०—

इतिश्रीसरस्वत्यष्टकं विद्यार्थपूर्त्तौ त्रिविष्टपविष्टरं

:—॥—:

१ सरस्वती । २ भा च रतिश्चेति भारती कान्तिं सुखं च ददातुइत्यर्थः ।

श्रीजिनकुशलसूरीणामष्टकम्

—:०:—

यो नप्तृनिव सेवकानपि सदा ब्रर्भर्त्ति कुर्वन् मुदं,
विच्छिदन् वियदं ददच्छुभपदं संपादयन् संपदं ।
मन्यन्ते हि यकं पितामहतया विश्वेऽत्र विश्वे जनाः,
सोऽयं वः कुशलानि जैनकुशलश्चकर्तु विद्याचणः ।१।

येऽरण्येषु पिपासवः प्रपतिता दध्युर्गुरुं मानसे,
नानागत्यवितत्यमेघमतुलं वः पाययामास यः ।
योऽद्याप्येप उदन्यतो बहुजनान् कं धापयेद्ध्यानतः,
सोऽयं वः कुशलानि जैनकुशलश्चकर्तु विद्याचणः ।२।

लोलोल्लोलति मिंगला कुलतमे सिन्धावगाधे भृशं,
मज्जन्तं प्रविलोक्य सेवकगणं सत्रा वहित्रेण वै ।
यस्तूर्णंति मतीतरत्संकुशलदं दोर्भ्यां गृहीत्वा दृढं,
सोऽयं वः कुशलानि जैनकुशलश्चकर्तु विद्याचणः ।३।

वारीशोत्तारणे रणे प्रहरणे नागे नगे पन्नगे,
झंझायां विकटे झषे झषकुटे घट्टेऽरघट्टे वटे ।
ध्यानाद्यस्य मनागपीह लभते नो ईतिभीती नरः,
सोऽयं वः कुशलानि जैनकुशलश्चकर्तु विद्याचणः ।४।

त्वं चेदेनमनेनसं सकृदपि स्नेहादसेविष्यथाः,
रामे वैत्य रमा मनोरमतमा त्वां पर्युपासिष्यत ।

इत्यादिश्य वयस्यमिभ्यमनुजा यस्यांह्रिमर्च्चन्त्यहो !
सोऽयं वः कुशलानि जैनकुशलश्चकर्त्तु विद्याचणः ।५।

धन्या 'जैतसिरी' प्रसू जनयिता मंत्री च 'जेलागरो'
यस्मै जन्म ददौ ददौ यतिगुणान् श्रीजैनचन्द्रो गुरुः ।
व्युत्पन्नाय तु सूरिमंत्रसहितं सौवं पदं दत्तवान्,
सोऽयं वः कुशलानि जैनकुशलश्चकर्त्तु विद्याचणः ।।६।।

श्रेयः श्रेयस ओजसा शुभयशा यःस्वर्गमध्यासितो,
नेदीयानिव हर्षयत्यनुदिनं भक्तान् दवीयानपि ।
यो लोके कमलाकरान् रविरिव प्रौढ प्रतापोद्यतः,
सोऽयं वः कुशलानि जैनकुशलश्चकर्त्तु विद्याचणः ।।७।।

दद्यादद्य धनीयते बहुधनं स्त्रीकाम्यते सुस्त्रियः,
यो भक्ताय जिगीषते च विजयं सुत्ये सुतान् दासते ।
यत्कीर्त्तिः प्रसरीसरीति सततं कौ कौमुदीव स्फुटं,
सोऽयं वः कुशलानि जैनकुशलश्चकर्त्तु विद्याचणः ।।८।।

सत्काव्याष्टकमष्टधीगुणयुतो दः पूतरूपो पटुः,
सच्चेता उपवैणवं ह्यहरहर्यः सप्तकृत्वः पठेत् ।
तस्मै श्री विजयादिहर्षगुरुतां सद्धर्मशीलोदयो,
दादाति प्रभुरेष जैनकुशलः साक्षादिव स्वद्रुमः ।।९।।

इति श्रीजिनकुशलसूरीणामष्टकम्

—०—

चतुर्विंशतिजिनस्तवनम्

—:*:—

(इन्द्रवज्राछन्दः)

स्वस्तिश्रिये श्री ऋषभादि देवं, निर्दंभदेवं जिनदेवदेवं,
चारुप्रकाशं किल मारुदेवं, स्तौमीह सम्पत्तिलतैकदेवं ॥१॥

(तोटकछन्दः)

अमरासुर पुंस्पशुपक्षिकृत-मदवारनिवारक ईश जितः,
भवता मदनोऽपि मदौघयुतः प्रवदन्तिबुधा अजितं हि ततः ॥२॥

(वंशस्थं)

लसद्यशः पूरितसद्दिशं भवंत एतमर्च्चन्तु जनाश्च शंभवं ।
जिनं सदिक्ष्वाकु कुलाब्जसंभवं, स्फुरत्तपोधाम वितीर्णसंभवं ।३।

(द्रुतविलम्बित)

जिनमहं प्रणमाम्यभिनन्दनं,
सुभगसंवरभूपतिनन्दनम् ।
सकलसद्गुणपादपनन्दनं,
जिनवरं जनलोचननन्दनम् ॥४॥

(तोटकं)

त्रिजगत्पतिरेषजिनः सुमति—
वितनोतु मतिं किल मे सुमतिः ।
शुभबोधपयोधिरनेकनुतिः,
क्रमणद्युतिरंजितदेवपतिः ॥५॥

(इन्द्रवज्रा)

पद्मप्रभोऽर्हन् वरपद्मलोचनः,
पद्माननश्चाश्रितपद्मलाञ्छनः ।
सश्चित्तपद्मामलपद्मलाञ्छनः,
पद्माकरः स्याच्छिवपद्मलाञ्छनः ॥६॥

(भुजङ्गप्रयात)

भजन्तां प्रभुं चित्प्रदं श्रीसुपार्श्वं,
भवन्तो नरा नूनमानन्दपार्श्वं ।
जिनं तप्तहेमस्फुरत्कान्तिपार्श्वं,
सतां सातदं दम्भवल्ल्यग्रपार्श्वं ॥७॥

(वसन्ततिलका)

चन्द्रप्रभं जिन वदन्ति यके मनुष्या—
त्वां सेवकेन्दुसदृशीकरणान्न दक्षाः
भो चन्द्रसेवितपदाब्ज परंमयोक्तः,
स्वामिन्वत स्तवभकार-उकारयुक्तः ॥८॥

(तोटकं)

विबुधा प्रणुवन्ति जिनं सुविधिं,
विविधप्रकटीकृतधर्मविधिं ।
शिवमार्गविधानत एव विधिं;
गुणनीरनिधिं शिवदायिविधिं ॥६॥

(प्रमाणिका)

विभुं भजस्व शीतलं, सदक्षशाखशीतलं ?
दराग्निवारिशीतलं, जिनं विभिन्नशीतलं ॥१०॥

(विद्युन्माला)

अर्हन्तं मूर्ध्ना श्रेयांसं, वन्देऽहं देवश्रेयांसं ।
श्रेयः सत्कासारे हंसं, हिंसै नोध्वान्तौघे हंसं ॥११॥

(मधुमाधवी)

त्वां प्राप्य सर्वभुवनत्रयवासिपूज्य—
मन्यात्क इच्छति सुराञ्जिन वासुपूज्य ।
किं कोऽपि कल्पतरुमीहितदं विहाय,
ह्युच्छूलपर्णिन इहेसति सत्सुखाय ? ॥१२॥

(द्रुतविलम्बित)

विमलनाथमशेषगुणाकरं, विमलकीर्तिधरं च भजेवरं ।
विमलचन्द्रमुखं जिननायकं, विजयहर्षयशःसुखदायकं ॥१३॥

(स्रगधरा)

कीदृक्संसार एषः प्रमितिकृतितया कीदृशः सिद्धिजीवः,
कीदृक्षो राजशब्दः सुरनरनिचये जिष्णुनामाऽपि कीदृक्
वाह्यार्थो वर्णबंधा द्विधिहरिगिरिशप्रस्तुतश्चारुधर्मा
धर्माद्यः सर्वदर्शी स हि विशदगुणःपातु चातुर्दशोवः ॥१४॥

(मन्दाक्रान्ता)

यः सर्वेषाममित सुखदो यं सदेच्छन्ति सर्वे,
तुल्यं येनान्यदिह न हि च प्राणिनां यः पितेव ।

तस्यापि स्वाम्यसि जिनपते धर्मनाथाभिधाना,—
न्मन्ये तेनाहमिति हि भवच्छदृशो नास्ति कोऽपि ॥१५॥

(शार्दूलविक्रीडितं)

शान्तिः शान्तिमनाः स नाहितकरः सेवन्ति शान्तिं बुधा—
स्तायन्ते मम शान्तिना सुमतयस्तस्मै नमः शान्तये।
शान्तेः कान्तिधरो परो न हि सुरः शान्तेरहं सेवकः,
शान्तौ तिष्ठति मन्मनश्चसततं शान्ते ! सुसातं कुरु ॥१६॥

(स्रग्विणी)

चिन्मयं मद्रदं कुंथुतीर्थङ्करं विश्वविश्वेशमीडे मुदा शङ्करं।
दुष्टकर्मौघघूकाबकाहस्करं, पुण्यकृत्पुण्यसद्रत्न-रत्नाकरं ॥१७॥

(वसन्ततिलका)

नाम्नीह यदरजिनस्य सदा श्रुते च,
नश्यन्ति लघ्वरिजना हि किमत्र चित्रम्।
आकर्णिते बत निनादभरे मृगारे—
स्तिष्ठन्ति किं मृगगणा बलिनोऽपि बाढ़ं ॥१८

(मालिनी)

द्विजपतिदलभालं मल्लिनाथं सुभालं
प्रहतविषयजालं छिन्नदुःखाब्जनालं।
अमितसुगुणशालं प्राप्तनिर्वाणशालं,
भविक-पिक-रसालं स्तौमि नित्यं त्रिकालं ॥१६॥

(सिंहोद्धता)

राकेन्दुकान्तिमुनिसुव्रत वै त्वदास्यं,
दृष्ट्वा हि दृग्विकचपद्ममनोहरं च।
संभावयन्ति मनसीति शुभा मनुष्याः,
सद्राजतेऽब्जयुगलं विधुमध्यभागे ॥ २० ॥

(द्रुतविलम्बितं)

नमत भव्यजनाः सततं नमिं, नमित निर्जरमद्भुतकामदं।
मदनपञ्जरभञ्जनद्विद्विजं, द्विजपतिप्रवराननमीश्वरं ॥ २१ ॥

(मन्दाक्रान्ता)

यस्त्वं नित्यं किल रमयसे मुक्तिसीमन्तिनीञ्च,
तस्याः सङ्गं क्षणमपि समुन्मुञ्चसि त्वं न नेमे।
सत्त्वं सर्वे सुरनृ भुजगैः कथ्यसे योगिनाथ,
स्तेषां वाक्यं बत जिन कथं त्वां च संजाघटीति ॥२२॥

(कामक्रीडा)

वामापुत्रं तेजोमित्रं दुःखौघागे मातङ्गं,
सच्छ्रीकोपं चेतस्तोपं शोभावल्ली सारङ्गम्।
दत्तानन्दं विद्यावन्द्यं प्राण्याशायां कल्पागं,
नित्योत्साहं वन्दे चाहं श्रीपार्श्वेशं पुण्यागम् ॥२३॥

(पञ्चचामर)

प्रवादिसर्वगर्वपर्वप्रभङ्ग भूरिरुट्,
सुपर्वनाथ हैतिमीतिभीतिवार-वारकम्।

जिनेश-वर्द्धमान वर्द्धमान शासनं वरं,
नमामि मामकीनमानसांबुजन्मषट्पदम् ॥२४॥

(कलशः)

इत्थं संवदुरोजदृष्टिनगभूसंज्ञे च दीपालिका—
घस्रे गुम्फित एष सातभरदस्तीर्थङ्कराणां स्तवः ।
सद्विद्याविजयादिहर्षकमलाकल्याण शोभाभरं,
तन्याद्वो बहुधर्मवर्द्धनवतां सन्मानसानां सदा ॥२५॥

इति चतुर्विंशतिजिनस्तवनं पृथक्काव्यजातिमयम् ।

अथ व्याकरण संज्ञा शब्द रचनामयं

श्रीमहावीर जिनबृहत् स्तवनम्

यस्तीर्थराजस्त्रिशलात्मजातः सिद्धार्थभूपो भुवि यस्य तातः,
वितन्यते व्याकरणस्य शब्दैस्तत्कीर्तिरेवात्र यथामुदब्दैः ॥१॥

यो लेख शालाऽध्ययनाय वीरो,
विनीयमानः प्रयतः पितृभ्याम् ।
इन्द्रेण पृष्टं समसुत्ततार,
सर्वैस्ततः शाब्दिक एष ऊचे ॥ २ ॥

ततः परं यः परिणीयपत्नीं,
संभुज्य सर्वानपि कामभोगान् ।

गृहात्परिव्रज्य चरित्रलोल्या—,
न्मन्ये विसस्मार स शब्दविद्याम् ॥ ३ ॥
स तत्र संज्ञाविधिना समानैः,
सहाऽपि सन्ध्यक्षरतां विधित्सन् ।
ये नामिनस्तेषु गुणञ्च वृद्धि—
मबाधपूर्वं युगपच्चिकीर्षन् ॥ ४ ॥

भित्सन् ह्रसत्वं न हि निःस्वरेषु,
तथान्त्ययोर्वै रसयो र्विसर्गम् ।
नाम्नः शतं त्र्युत्तरमन्त्रयुञ्जन्,
विभक्तिभिस्तस्य च नाशमाशु ॥ ५ ॥

लिङ्गत्रयोच्छेदमपि प्रकुर्वन्,
न युष्मदस्मत्स्वपरापरत्वं ।
अप्रोपसर्गा व्यय कारकं च,
स्त्रीप्रत्ययं तत्र मनागपीच्छन् ॥ ६ ॥

वर्णस्य लोपं न तथा विकारं,
न वर्णनाशं च वदन्निरुक्तं ।
कदापि नो विग्रहकारकेपु,
प्रकल्पयन्नेव विकल्पभावम् ॥ ७ ॥

वर्णा विशुद्धार्थविभक्तयो ये,
तेषां समासं न समीहमानः ।
सुखाऽव्ययीभावपदं यदत्र
लिप्सुः सदा तत्पुरुषप्रधानः ॥ ८ ॥

द्वन्द्वं बहुव्रीहिपरिग्रहादि—
रूपं विरूपं च न कर्म धारयन् ।
शत्रावशत्रावपि न द्विगुत्वं,
यद्यद्वदंस्तद्धितमेव लोके ॥ ९ ॥

नित्यं यथाख्यातक्रियाकृतो ये,
तान्सोपसर्गान्न चिकीर्षमाणाः ।
विभृच भावं विजहच कर्म,
न कर्मकर्त्तृत्वमुशंस्तथोक्त्या ॥ १० ॥

(अष्टभिः कुलकम्)

विराजतेऽयं किल कामकुम्भः,
स्वामिस्तव प्राज्ययशः समूहः ।
नो चेत्कथं पूरयतीह नित्यं,
वाढं कवीनां मन ईप्सितञ्च ॥ ११ ॥

सतः सदैवाभिनयं नयन्ती,
सरागरंगाय रभागरंगे ।
दिशं दिशं चारुदृशं दिशन्ती,
नर्न्नर्त्ति कीर्तिस्तव नर्त्तकी च ॥ १२ ॥

स्विदयमाद्रियते सुगुणैः सखे,
स्विदयमाद्रियते सुगुणानिति ।
सुगुणमैक्ष्य हि वीर जिनाधिपं,
बुधजना विमृशन्ति भृशं मिथः ॥ १३ ॥

राजानः स्वैर्ललाटैरहरहरमिता यान्स्पृशन्ति प्रणामान्,
ते राजतो नखास्ते जगति जिनविभो तान्यपि द्योतयन्ति।
स्वामिंस्तस्मादमीषां प्रवरमिह महाराज नामास्ति सत्तन—
मन्त्येऽन्ये नखायामपि दधति महाराज संज्ञां मृपा सा ॥ १४

यावल्लसन्तौ दिविपुष्पदन्तौ यावद् ध्रुवस्तावदसौ स्तवश्च,
कुर्यात्प्रकर्षं विजयादिहर्षं सद्युक्तिलीलः शुभधर्मशीलः ॥ १५ ॥

———

(१) समसंस्कृतमयं पार्श्वनाथ लघुस्तवनम्

संसारवारिनिधितारकतारकाभ,
डिंडीरहीरसमसत्तमबोधिलाभ।
आतंकपंकदलनातुलवारिवाह,
वामेयदेव जयभिन्न भवोरुदाहं ॥ १ ॥

जानामि कामित करं तव नाम देव,
तेनाऽऽगतोऽहमिह पादसरोरुहे ते।
मां माऽवहीलय गुणालय सदयालो,
संतो भवन्ति निपुणाहि परोपकारे ॥ २ ॥

मोहारिभूमिरुहभंगमतंगजाय,
संछिन्नतुंगसमनोज मनोजवाय।
मायाविवादिकुवलालिन वारुणाय,
भूयो नमो भवतु ते जिननायकाय ॥ ३ ॥

वामाङ्गजं दरभरागगजं भजन्ते,
ते जन्तवो नव-नवोदयतां लभन्ते
भूमीरुहो हि समयामलयं वसन्तो,
गच्छन्ति किंन शुभचन्दनतां समेऽपि ॥ ४ ॥

इत्थं सदैव समसंस्कृतशब्द शोभं,
यः पापठीति मनुजः स्तवनं यशोभवे ।
स प्रीयते विजयहर्षसुखं सलीलः,
पार्श्वेशितु स्मरणतः शुभधर्मशीलः ॥ ५ ॥ ॥

——:०:०——

(२) पार्श्वजिनलघुस्तवनम्

विश्वेश्वराय भवभीति निवारणाय
'संताप-पादप निवारण वारणाय ।
सत्यक्तमाय सजलांबुदनीलकाय,
तुभ्यं नमोऽस्तु सततं जिननायकाय ॥ १ ॥

सम्मोहमारुतसुरेशधराधराय ।
मुक्त्यङ्गनाप्रणयपुञ्जकृतादराय ।
दुःकर्मकाष्ठ-भरकाननपावकाय,
तुभ्यं नमोऽस्तु सततं जिननायकाय ॥ २ ॥

सज्जन्तु वांछितसुदानसुरद्रुमाय,
कंदर्पसर्पहरणे गरुडोपमाय ।

योगीश्वराय शिवशालिवने शुकाय,
तुभ्यं नमोऽस्तु सततं जिननायकाय ॥ ३ ॥

दारिद्र्य-रेणु भर-संहरणाम्बुदाय,
सम्पत्ति-सिद्धि सुयशः सुखबोधदाय।
आजन्मदुःखगणपल्लवलावकाय,
तुभ्यं नमोऽस्तु सततं जिननायकाय ॥ ४ ॥

देवाऽसुरप्रणतपाद सरोरुहाय,
कुन्देन्दुमण्डलसमुज्ज्वलचिद्गृहाय।
निःसंख्यदुःखदगदक्षय कारकाय,
तुभ्यं नमोऽस्तु सततं जिननायकाय ॥ ५॥

पूर्णक्षपारमण शुभ्रकलाकलाय
सत्कीर्ति संभृतदिगीश्वरमण्डलाय।
लीलाऽऽलयाय विकचाम्बुरुहाम्बकाय,
तुभ्यं नमोऽस्तु सततं जिननायकाय ॥ ६ ॥

(कलशः)

इत्थं विश्वयमश्वसेननरराड्-वंशाब्जघस्राधिपं,
सद्वामोदर शुक्तिमौक्तिकनिभं कल्काग भङ्गद्विपम्।
श्रीपार्श्वं विजयादिहर्ष सहिताः स्युः संस्तुवन्तो नराः,
पार्श्वेशं बहुधर्मवर्द्धनधनं चिद्रत्नरत्नाकराः ॥७

(३) श्रीपार्श्वजिनबृहत्स्तवनम्

वाञ्छितदानसुरद्रुम तुभ्यं,
नम ए कुरु सौख्यानि लसन्ति ।
जय जय जगतिपतेः ॥ १ ॥

नव नव नवनमहर्निशममलं,
यश ए तव कवयो गायन्ति ।
जय जय जगतिपतेः ॥ २ ॥

इक्ष्वाकुकुल-कमलाकरवर
भास्कर ए अश्वसेनवंश-वतंस
जय जय जगतिपतेः ॥ ३ ॥

वामामातृवामोदरमानस
सर ए तत्र मनोरमहँस,
जय जय जगतिपतेः ॥ ४ ॥

धन्यतरं तदहो अहस्त्रिभुवन
मह ए तव शुभ-उद्भव आस,
जय जय जगतिपतेः ॥ ५ ॥

ववृधे प्रियमनोरथ इव सुखमिव
दिव ए वर राज्यं विललास,
जय जय जगतिपतेः ॥ ६ ॥

ज्वलदहियुगलं बहुहित मंत्र—
दानत ए इन्द्रपदं नयसिस्म
जय जय जगतिपतेः ॥ ७ ॥

नमीकृतशक्रव्रज राज्यं—
रज ए त्वं तूर्णं त्यजसि स्म
जय जय जगतिपते ॥ ८ ॥

मोहलता दलन द्विप बहुलं
तप ए चारुतरं च चकर्थ
जय जय जगतिपतेः ॥ ६ ॥

लब्ध्वा केवलसंपदः शिवपद
सद ए त्वं श्रीपार्श्व बभर्थ,
जय जय जगतिपतेः ॥ १० ॥

सौख्यं बहुभिरवाप्यत तव—
नामत ए कामितदायक देव
जय जय जगतिपतेः ॥ ११ ॥

श्रीधर्मवर्द्धन पेहत तव मत—
रत ए त्वं प्रभुरेधि सदैव
जय जय जगतिपतेः ॥ १२ ॥

श्रीपार्श्वजिनवृहत्स्तवनं संस्कृतमयं तालमध्ये गेयं ।

(४) चतुरक्षर-पार्श्वस्तवनम्

(कन्या छन्द)

भो भो भव्याः कीर्त्तिस्तव्याः
नव्या नव्या, जैनी श्रव्या ॥ १ ॥
प्रत्यूषेनः, श्रीपार्श्वेनः
यो ज्ञानेन, प्रघ्नश्चेव ॥ २ ॥
ध्वस्तद्वंद्वं, सम्यक्संधं
त्यक्त्वाव्यध्वं, तं वंद्ध्वं ॥ ३ ॥
यः श्रीकाश्यां, वाणारस्यां
पुर्य्यामस्यां, स्वश्रेयस्यां ॥ ४ ॥
अश्वात्सेनः, श्रीभूपेन
ईतिस्तेन, स्तद्राज्येन ॥ ५ ॥
तत्स्त्रीमुख्या, वामाभिख्या
तस्याःकुक्ष्याः, पुत्रो न्युष्यात् ॥ ६ ॥
चेतोऽन्तर्वै, न्यस्तोऽखर्वैः
ग्लायद्गर्वै-र्देवैः सर्वैः ॥ ७ ॥
पुण्यप्राज्यं, भुक्त्वा राज्यं
तत्साम्राज्यं, ज्ञात्वा त्याज्यं ॥ ८ ॥
यः संसारं, त्यक्त्वा भारं
साध्वाचारं, चक्रे सारं ॥ ९ ॥

अन्यापोहं, ध्यात्वा सोऽहं
श्रेण्यारोहं, क्षिप्त्वा मोहं ॥ १० ॥
तत्त्वांचल्यं, हत्वा शल्यं
प्रापत्कल्यं, यः कैवल्यं ॥ ११ ॥
द्वे आयात-स्तत्सेवातः
श्रीर्विद्यातः, सातव्रातः ॥ १२ ॥
तद्व्याख्यानं, तस्य ध्यानं
तत्त्वज्ञानं, भूयात्प्यानं ॥ १३ ॥
अन्याऽनीह, स्तद्भक्तीहः,
धर्मात्सीह-स्तं स्तौतीह ॥ १४ ॥

इति श्री चतुरक्षरायांप्रतिष्ठायांजातौ कन्यानाम छंदोवृहत्स्तवनं

(५) पार्श्वलघुस्तवनम्

(द्रुतविलम्बितछन्दः)

प्रवरपार्श्वजिनेश्वर पत्कजे,
भयहरे भविभावुकदे भजे ।
य इमके न कदापि नरस्त्यजे—
त्तमिह सद्रमणीवरमासजेत् ॥ १ ॥

उदितमेतदहः सफलं नरां,
सफलतां च नयामि तथा दृशं ।
जिनप दर्शनतो भव एव मे—
सफल एव गुणाः सफलाः समे ॥ २ ॥

जरिद्दपीति विलोक्य सना जिनं
मम मनोऽत्र शिखीव घनाघनं ।
मिलति वै यदि वाञ्छितदायक—
स्तमनुसृत्य न वष्टि सुखाय कः ॥ ३ ॥
लघुवया अपि यः सवयाः सतां
निजगुणैः प्रबभूव तनूभृतां ।
अहियुगाय यकोज्ज्वलते ददे
सुरपदं स जिनो भवतां मुदे ॥ ४ ॥
शमदमादिगुणैरति सुन्दर—
स्तव जिनेश विराजति संवरः ।
परिभृतो मणिभिः सुयशश्रणः
क्षितितले किमु भाति न रोहणः ॥ ५ ॥
तव यशश्च गुणान्निगमं पदं,
वचनतो मनसस्तनुतो मुदः ।
वदति वेत्ति च विंदति वंदते,
विधिरयं जिन यस्य स नन्दति ॥ ६ ॥
गुणघनो भुवि पार्श्वजिनेश्वरः
सम इहाऽस्ति न येन परः सुरः ।
जित इनो महसा यशसा शशी
नमति तं सततं मुनिधर्मसी : ॥ ७ ॥
इति छेकानुप्रासपादान्त-द्रुतविलम्बित छन्दोमयं
पार्श्वजिनलघु-स्तवनम्

(६) श्रीपार्श्वलघुस्तवनम्

भजेऽश्वसेन-नन्दनं मुहुर्विधाय वन्दनं,
न रागिणी हि के नरा इने जिने सुदृग्धराः ॥१॥
सतां विपश्चितां मतां सदेव सुप्रसादतां,
विधेहि पार्श्वदेवते मयि क्रमाब्जयो रते ॥२॥
अभीष्ट युष्मया मया प्रवृत्य ते त्वदाज्ञया,
न दद्यते कृपोदयाद्विभो ममोद्यता अयाः ॥३॥
चरीकरीति ते यशः प्रसर्सरीति तद्यशः,
वरीवरीति ते पदं स वर्व्वरीति ते पदं ॥४॥
समस्तदुःखनाशनं विभो तवानुशासनं,
तदस्तु मे पुनर्धनं सुजैनधर्मवर्द्धनं ॥५॥

श्री ऋषभदेव स्तवनम्

जय वृषभ वृषभवृषविहितसेव, सेवकवाञ्छितफलफलद देव ।
देवादेवार्चितपादपद्म, पद्माननपूरितभूरिपद्म ॥१॥
पद्माङ्कजमदगजगजविपक्ष, पक्षीकृतजगदुपकारलक्ष ।
लक्षितसमलोकालोकभाव, भावितसूनृतसुगुणस्वभाव ॥२॥
भावारितमोभरतरणिरूप, रूपस्थित रूपातीत-रूप ।
रूपित सद् यज्ञसुधर्मशील, शीलित शाश्वतशिवसौख्यलील ॥३॥

नवग्रही-न्यायपरीक्षा

सख्ये सत्यपि दहना द्रक्षति यन्नं विचक्षणा त्रयथा ।
ग्रहराजो ग्रहराजौ हिमांशुमंगारकादर्वाक् ॥१॥
शीताद्बिभ्यति सर्वे शीतार्त्तिर्भवति दुःसहा सततम् ।
अङ्गारकमुष्णांशुं तत्तिष्ठत्यन्तरा हिमरुक् ॥२॥
यत्रायाति कुपुत्रो जनयति वैरं हि जनकपुत्राणाम् ।
यद्विग्रहं गृहालौ सोऽयं सोमस्य सौम्यस्य ॥३॥
निवसति यद्यपि दैवाद् ज्ञः क्रूराक्रूरयो र्द्वयोर्मध्ये ।
सत्प्रकृतेरनुभावाद्यः सौम्यः सौम्य एव स्यात् ॥४॥
गुरुरधिकः सर्वगुणै र्गुरुसेवा नैव निःफला भवति ।
समया गुरुं वसन्तौ ग्रहावुभौ बुधकवी जातौ ॥५॥
तारुण्ये सति शुक्रे बोभूयन्तेऽसमे शुभा कामाः ।
तदभावे तदभावाच्छुक्रबलं को न कामयते ॥६॥
उच्चपदादिस्थिरया पितुरुक्त्याचलति वैपरीताद्यः ।
सत्याभिधो बुधोक्त्या मन्दो मत्या पुनर्गत्या ॥७॥
पर्व्वण्यमृतं पेन्तु तुदति सुधांशुं विधुंतुदः साक्षात् ।
लब्ध्वास्वादो लोके शीर्षे छिन्नेऽपि न हि तिष्ठेत् ॥८॥
स्वस्वामिनं विनाऽपि हि निजशक्त्या कार्यसिद्धिमातनुते ।
किं नो कबन्धरूपः केतुः स्तुत्यो ग्रहश्रेणौ ॥९॥
श्रेष्ठां सुवर्णरचितां नवग्रहीं मुद्रिकां सुधर्ममतिः ।
प्रीत्या परीक्षमाणाः परीक्षते तत्त्वरत्नानि ॥१०॥

शान्तिनाथस्तवनम्

स्तुवन्तु तं जिनं सदोपकारतालताघनं,
स्वदेहदानतो यको ररक्ष रक्तलोचनम् ।
प्रसूदरस्थितेन सच्छुनंयुता प्रयुंजिता,
त्वरा निजाःप्रजाव्रजा रुजा विवर्जिताःकृताः १

अवाप्य येन जन्म चक्रवर्तिता प्रवर्तिता,
जगत्प्रभुत्वमाप्य कीर्त्तिनर्त्तिकी च नर्त्तिता ।
अभीष्टदा दिवस्तरुर्घटो मणि स्नगोऽप्यमी,
अनुत्वकां तकांस्तु सेवते सना सना भ्रमी ॥ २ ॥

स्वकीयसेवकाय यः सुखं ददाति सत्वरं,
ततो मुदा तमाचिरेयमाचिरेयमीश्वरं ।
नमो नमोऽस्तु ते त्वया समो न कोऽप्यहो ऋभुः
सुधर्मशीलने भवेभवेस्त्वमेव मे विभुः ॥ ३ ॥

—:※:—

(७) श्रीगौडीपार्श्वनाथस्तवनम्

प्रणमति यः श्रीगौडीपार्श्वं, पद्मा तस्य न मुञ्चति पार्श्वं,
सुगुणजनं सुषमेव । कीर्तिस्फूर्तिरहो ईदृक्षाः यस्य—
जगति जागर्त्ति समक्षा; नंनमीह तमेव ॥ १ ॥

सद्भक्त्या भक्तलोका जिनवरंभवतो यत्र यत्र स्मरन्ति,
साक्षात्तेषां समेषां वरमिह हि मुहुर्वाञ्छितं त्वं विधत्से ।
यात्रामायान्ति तत्तो कति कति च मया प्रत्ययाश्चात्र दृष्टा,
दृष्टा मे चित्तवृत्तिस्तत इत इत आः कामये नान्य देवम् ॥ २ ॥

(प्राकृतचित्राक्षराछन्दः)

विविह सुविहिलच्छीवल्लिसंताणमेहं,
सुगुणरयणगेहं पत्तसप्पुण्णरेहं ।
दलियदुरियदाहं लद्धसंसिद्धिलाहं,
जलहिमिव अगाहं वंदिमो पासनाहं ॥ ३ ॥

(मागधी)

शुलपुलनलवललुचिलविनिलमिदपलमानन्द,
सकलशुभाशुभशेविदपदशलशीलुहृदंद ।
कलुनाशागल कुलकमलालिदिनेशलदेव,
चलनशलोजमहं पनमामि निलंतलमेव ॥ ४ ॥

(सौरसेनी)

दुहदटिनीदारनदरनपोय, दुरिदोहहुदासन-अदुलदोय।
संपूरिदजगदीजंदुकाम पूरयमह वंछिद पाससामि ॥ ५ ॥

(पैसाची)

तुहताहतवानलनासघनं, सुहतानसुकोवितगीतगुनं ।
धरनीतफनीस नतं सततं, नम पासजिनं सुसुहं ततं ॥ ६ ॥

(चूलिकापैसाची)

मतनमतसरवनवनदहनपावकं,
सिद्धिसुभजुवतिसिंगारवरजावकं ।
जो हु तुह चलनजुकमंचते संततं
चकति सव्वे चना पास पनमंति ते ॥ ७ ॥

(अपभ्रंसिका)

तुहु राउल-राउलह सामि हुं राउल रंकह,
हिणसु दुहाइ सुहाइ कुणु सुमइ मा अवहीरह ।
पिक्खइ जुगु अजुग्गु ठाणु वरसंतउ किं घणु,
पत्तउ पइ जइ होसु दुहियसा तुह अवहीरणु ॥८॥

(समसंस्कृतं)

सज्जन्तु कामितविधाननिधानरूपं,
चित्ते धरामि तव नाम सुगेयरूपं ।
इच्छामि कान्त मिदमेव भवे भवेऽहं,
वामाङ्गजेह गुणगेह सुपूरितेहं ॥९॥
इम अरज अम्हारी तां हि पक्षीकुरु त्वं,
गिणइज हित कीधुं तस्य सत्यं गुरुत्वं ।
हिव मुझ सुख आपो, सा तवैवास्ति शोभा,
तुझ विण कहि स्वामी कस्य नो सन्ति लोभाः ॥१०॥
स्वर्भाषा संस्कृतीया तदनु प्रकृतिजा मागधी शौरसेनी,
पैशाची द्व्यंगरूपाऽनुसृतविधिरपभ्रंसिकासूत्रवाक्यैः ।

षड्भिर्वाग्भी रसैर्वा स्तुति सुरसवती-निर्मिता पार्श्वभर्त्तुः,
श्रीधर्माद्वर्द्धनेनामितसुकृतवतां ह्लादसुस्वाददास्तान् ॥११॥
इतिश्रीगौडीपार्श्वनाथस्य स्तवनं षट्भाषा समसंस्कृतादि
चातुर्यमयं श्रेयः क्रियान्

(८) श्रीपार्श्वाधीशितु बृहत्स्तवनम्

सर्वश्रिया ते जिनराज राजतः,
श्लोकोऽति शुल्को गिरिराज-राजतः।
अर्घप्रदानैरपि राजराजतः—
त्वत्कोऽतिरेको भुवि राजराजतः ॥१॥
स्मरणं कुरुते सदा यक—
स्तव तस्मै सुखवासदायकः।
त्वमसि प्रभवे सदायकः
प्रणमन्नेश भवेत्सदायकः ॥२॥
शुभदृक् तव नाथ सेवकं,
नयते वाञ्छितमेव सेवकं।
विबुधै र्विहितैकसेवकं,
त्वदृते वश्मि हि मानसे बकं ॥३॥
तव ये चरणेऽत्रनामिनः

स्युरहो ते तु कदापि नामिनः।
मणिमाप्य मुनीश नाकिनः,
किमु चित्रं हि भवन्ति नाकिनः ॥४॥
जिनपार्श्वसुनाम तावकं,
शरणं यः श्रयते न तावकं।
न पराभवितुं हि कोऽपि तं,
प्रभविष्णुः क्षितिपोऽपि कोपितं ॥५॥
परिहृत्य वसुस्त्रियौ वने,
निवसन्तीश यके हि यौवने।
हृदि यैर्निहितं न नाम ते,
विदधीरन्सहितं न नाम ते ॥ ६ ॥
गमितं नरजन्म देवनै—
र्हृदि मे तेन कदापि देव नैः।
तदहं परवश्यतां गतः,
परसेवा च मया कृतांगतः ॥ ७ ॥
शुभवता भवता सुकृता कृताः,
कतिचिदूर्ध्वं जगत्प्रभुताद्भुताः।
कतिचिदीश महोदयतायता,
मम विधौ विहिता लसता सता ॥ ८ ॥
मम सदा नतनिर्जरवारके,
त्वयि विभौ सति पापनिवारके।

इह जिनाधिपदुःषमवारके,
किल मया किमऽदायि न वारके ॥ ९ ॥
राका भवानिव भवानिह भात्यतोऽपि,
श्रेष्ठाः स्तुवन्ति शुभवन्तमहो भवन्तं ।
छिन्नार्त्तिरात्तभवता भवतापकर्त्री,
तस्मै सदाऽत्र भवते भवते नमः स्तात् ॥ १० ॥
देवोऽधिकः प्रभवतो भवतो न कोऽपि,
सेवाज जिष्णु-भवतो भवतोऽतिरम्या ।
सद्भक्तिरा भवति यै र्भवति प्रक्लृप्ता,
प्रोप्तातया शिवफला जिनधर्मसीता ॥ ११ ॥

श्रीनेमिस्तवनम्

॥:०:॥

जिगाय यः प्राज्यतरस्मराजीं,
तत्याज तूर्णं रमणीञ्च राजीम् ।
राजेव योगीन्द्रगणे व्यराजीद्—
देयात्स नेमि र्बहुसौख्यराजीः ॥ १ ॥
निजकुलकुलरत्नं वाञ्छितार्थैघ रत्नं,
तमसि गगनरत्नं चित्कला रात्रिरत्नम् ।
नमितसकलदेवः क्रोधदावैकदेवः,
प्रभवतु सुमुदे वः संततं नेमिदेवः ॥ २ ॥

—॥—

(६) श्रीपार्श्वस्तोत्रं

(द्विहसं शालिनी छंद)

तवेश नामतस्त्वरा दरा भवन्ति गत्वराः,
प्रसृत्वरा रवेकरास्ततो यथा तमो भराः ॥१॥
अधोत्करारश्च नश्वरा धरेश्वराद्धि तस्कराः,
स्थिराः स्युरिन्दिराभराः स्वमन्दिरान्न हीत्वराः ॥२॥
प्रभोः स्तवेषु तत्परा नरा जगत्सु जित्वराः,
तकेषु तत्परा दरा दरातयोऽपि किंकराः ॥३॥
विधीयतां जिनेश्वराऽऽशु पार्श्वदृक्कृपापराः,
प्ररायतां तरा त्वरा ममापि धर्म्मशीलराः ॥ ४ ॥

—०—

पश्चतीर्थ्याः पंचजिन स्तोत्रम्

(प्रमाणिकाछंदः)

योऽचीचलद्दुश्च्यवनोरसि स्थितः
क्रमाङ्गुलीतः किल कर्णिकाचलं ।
स्वनाम चंचुश्च चरिक्रियादयं,
स श्रीमहावीरजिनो महोदयम् ॥ १ ॥

अर्कः शुभोदर्कमतर्कितश्रियं,

जैवातृकः प्राति जयं यशः क्रियम् ।
भौमो भिनत्तीतिमनीतिजां भियं,
बुधो ददातीह बुधाश्रितां धियम् ॥ २ ॥
गुरु गुरुं ज्ञानगुणं विधत्ते,
काव्यः कलां काव्य कलाश्च दत्ते ।
शनिः शुभं राहुरयं शिखीशं,
नुः सेवितु र्यच्छति वीरमीशम् ॥ ३ ॥
एवं सेवां दधतः पञ्चजिनानां स्तवान्प्रपञ्चयते ।
ते सौख्यानि लभन्ते भव्यश्रीधर्मशीलभृतः ॥ ४ ॥

अष्टमङ्गलानि

स्वस्तिकं चारुसिंहासनं कौस्तुभं,
कामकुम्भः सरावादिमंसंपुटं ।
मत्स्ययुगलं सुखस्यार्पणं दर्पणं,
नंदिकावर्त्तकं मङ्गलान्यष्ट वै ॥ १ ॥

चतुर्दशस्वप्नाः

श्वेतेभो वृषभो हरिश्च कमला स्यात्पुष्पमालाद्वयं,
पूर्णेन्दुश्च दिवाकरो ध्वजवरोऽभःपूर्णकुम्भःसरः ।

क्षीराब्धि द्विविधं विमानभवनं सद्रत्नराशिर्महान्,
निर्धूमाग्निरिमे चतुर्दश शुभाः स्वप्ना मुदे सन्तु वः॥१॥

गीर्वाणसिन्धावहिमंगिनो बहून्,
घ्नन्तं समालोक्य रुपा गरुत्मान्।
जघान गंगाम्बु-शुभप्रभावा,
चतुर्भुजीभूय बभूव तत्पतिः॥१॥

शीघ्रमागच्छ भो शिष्य, मम पादौ निपीडय,
परिचर्याप्रसादेन, त्वं प्रवीणो भविष्यसि॥१॥

(१०) श्रीपार्श्वनाथस्तोत्रम्

प्रसर्सर्त्ति पार्श्वेश विश्वे यशास्ते,
विशास्ते तु धन्याः पदाब्जस्पृशस्ते,
मदीयाऽपि लीला, स्तुतौ तेऽस्तु लीला,
विदोलायमाना भ्रमादत्त मा भूत्॥१॥

बुधास्ते सपर्य्यातया चारुतर्य्या,
भवाब्धि प्रतीर्य्या भजान्सद्विपुर्य्याः।

अहं तेऽनुभावं समारुह्य नावं,
तितीर्षु र्विभावंश्रितस्त्वां मुदाऽवं ॥२॥

न केनाऽपि केनाऽपि भोगादिना मे,
वशायां रिरंसा निनंसोस्त्वदं ह्री ।
विनेता तवेशास्मि नेतासि मे त्वं,
रमां धर्मशीलप्रमां देहि मह्यं (?) ॥३॥

इति श्रीपार्श्वस्य लघुस्तोत्रमदः कोविदसदः प्रशस्यं ।

श्री बीकानेरमध्ये श्रीआदीश्वरमूर्ति स्तोत्रं

प्राज्यां चरीकर्त्ति सुखस्य पूर्तिं,
यका जरीहर्त्ति च दुष्टजूर्तिं ।
मद्रैश्च मोमूर्तिं सुभक्तमूर्तिं,
तां वीकपुर्य्यां नमतादिमूर्त्तिं ॥१॥
इष्टार्थपूर्त्तौ सु घटी वरीयसी,
जाड्यार्त्तिहानावपटीपटीयसी,
गिरीसमेयं प्रतिमा गरीयसी,
स्थिरा स्थिरावद् भवतात्स्थवीयसी ॥२॥
एनांजिनेनांगसमां शयद्वयं,

ललाट आधाय विधाय सञ्जयं ।
वयं च यूयं शुभधर्मशीला,
भजाम भव्या विलसामलीलाः ॥३॥

इति श्रीऋषभदेवस्तवनम्

समस्यामयं श्रीमहावीरस्तवनम्

श्रीमद्वीर तथा प्रसीद सततं मे स्यादियं भावना,
संसारं तु वरं च जीवितमथो त्वद्दर्शनात्के मन ।
भोगान् सर्वकुटुम्बकं क्रमतया जानामि पक्वेतर—
"जम्बूवज्जलबिन्दुवज्जलजवज्जंबालवज्जालवत्" ॥१॥
स्थाने तज्जिननूयसे बुधजनैस्त्वं दुष्टकष्टापहो,
भ्रान्त्या भुक्तविषं त्वगाधमुदकं शत्रूछितं शस्त्रकम् ।
दावाग्निः प्रबलो महाँश्च निगडस्त्वन्नामतः स्यात्क्रमा—
जम्बूवज्जलबिन्दुवज्जलजवज्जंबालवज्जालवत् ॥२॥
सोऽपि त्वां प्रणनामयः शिवमते श्रीशैवराजो मुनि—
र्येनामी लवणाम्बुधिप्रभृतयो दृष्टा हि सप्त क्रमात् ।
क्षीरोदोदधिमृद्घृतोदकइराभृच्चेक्षवाः स्वादुवः,
अम्भोधिर्जलधिः पयोधिरुदधिर्वारांनिधिर्वारिधिः ॥३॥
ये त्वां श्रीजिन संश्रयन्ति हि जनास्ते स्युर्जिनाख्याधरा—
स्तद्युक्तं जलपर्यया इव विभा प्राप्ताऽधिरित्यक्षरं ।

पयायास्युरुदन्वता बुधजनः सगृह्यमाणा अमो,
अम्भोधिर्जलधि पयोधिरुदधिर्वारांनिधिर्वारिधिः ॥४॥

जिनं भजंतामिति झल्लरीयं, प्रवक्ति लोकानिव वाद्यमाना।
वृहद्ध्वनेरर्थत एव ठस्य, ठंठंठठंठंठठठंठठंठः॥५॥

दानं तपः शीलमशेषपुण्यं, ज्ञानञ्च विज्ञानमपीह भावः।
त्वच्छासनेनेश विना कृतंतन्, ठंठंठठंठंठठठंठठंठः ॥६॥

जिनवचनमिदं तेऽनन्तकृत्वोऽधिकारे,
प्रययुरणुनिगोदं ज्येष्ठपञ्चेन्द्रियाश्च।
युगपदिह विपद्य स्यात्कदाचिन्न चित्रं,
मशकगलकमध्ये हस्तियूथं प्रविष्टम् ॥७॥

मन इदमगुरुपं न्यायसिद्धं मदीयं,
मदमदनमतंगा यान्ति तन्मध्यदेशं।
अहमिह किमु कुर्य्या देव साक्षादजय्यं
मशकगलकमध्ये हस्तियूथं प्रविष्टम् ॥८॥

नवनं नमनं महनं वचनं, कुरुते कुरुते कुरुते कुरुते।
तव यः स यशः शिव मां च सुखं, लभते लभते लभते लभते ॥६॥

दीव्यद्दीधिति दिक् चतुष्कसदृशंभामण्डलंपृष्ठतः
कृत्वाऽऽसीनमहो चतुर्मुखविधुश्रेष्ठाऽऽस्य नंतुं त्वकां।
आयातः स्मयदा विमानसहितौ श्रीपुष्पदन्तौ तदा,
चन्द्राः पञ्च तथैव पञ्च रवयो दृष्टा जनै र्भूतले ॥१०॥

पुण्या ते प्रकृतिः प्रभो परगुरो बाढं मदाढ्यं सदा,
सद्द्रव्योऽपि निराश्रयोऽसि मदनानीकंपरिघ्नन् स्फुटं।

इष्टं मृष्टतरं च वर्णनमथो प्रस्तूयते ते क्रमाद्—
गंगावद्गजगण्डवद् गगनवद्गांगेयवद्गेयवन् ॥११॥

(कलशः)

इत्थं वांञ्छितदानदैवततरुर्यः शासनाधीश्वरः ।
श्रीवीरः शिवतातिराततयशाः श्रीधर्मतो वर्द्धनैः,
नूतो नूतन नूतन द्युतिमयः काव्यैसमस्यामयै—
र्ये ध्यायेयुरिमं जिनं जगतितेस्यु र्जन्तवः कन्तवः ॥१२॥

व्यस्त-समस्त मध्योत्तर प्रश्नमयं काव्यम्

के पत्यौ सति भूषणोत्सवधराः ?, श्रेष्ठास्तु के प्राणिषु ?
सर्वत्रादरतां लभेत भुवि कः ? के बन्दिनां स्युर्गृहाः ?
का का भाग्यवतां भवत्प्रतिपदं ? के कांदशीकांगिनां ?
के धन्या निज संपदां विलसने ? "दानप्रकारादराः" ॥१॥
धान्यार्थ उदूखले भवति का स्वार्च्या समेपां च का ?
कार्या नम्रजनै र्गुरौ लसति का शोभा च राज्ये तथा ?
सप्तास्यस्तरणे रथं वहति कः ? सर्व्वसहा का स्मृता ?
कुग्रामे वसतां सतां भवति का ? "सुज्ञान नीवीक्षितिः" ॥२॥

रामे १८Sर्था

त्वं संबोधय कामकेशवविधी-शानश्रियःस्वं मम,
दातृणां च हरौ सदाऽत्र भवताच्छ्रीतापतौ सुन्दरि !

किं धातुत्रयमत्र कीति वदभो त्वं वन्हिबीजं अजं,
विश्रामेप्यविशंश्रिते मुहुरहो उक्तेऽपि किं मुह्यसे ॥१॥

—:o:—

गी वीणा तंत्रिकैका वरचिबुकसृता सूचिका सद्रसानां,
कूपानां वास्पनाशाश्रुतियुगलदशामूर्द्धमूर्द्धा पुरश्रीः ।
तस्मिन् वासश्चकासज्जिन तव सुयशो गाङ्गवाहस्तदित्थं,
सूच्यग्रे कूपषट्कंतदुपरि नगरं तत्र गङ्गा प्रवाहः ॥१॥

तिलमिव लघु चित्तं स्नेहयुक् तत्प्रदेशे,
निवसति किल हीनाङ्गीव तृष्णातिकृष्णाः ।

मयमिव मदनं सा सूतमे[१]ऽभूत्तदित्थं,
तिलतुषतटकोणे कीटिकोष्ट्रं प्रसूता ॥२॥
तवेशाऽस्त्यम्यं धर्मशीलोपदेशो,
भवाब्धि तितीर्षु भंवेद्यो हितेन ।
रतिश्चारतिश्चातिनिन्दातिकृष्णा
समस्या समस्या समस्या समस्या ॥३॥
प्रवर्व्वर्त्ति[२] विश्वे जिनस्योपदेशो,
भवाब्धि तितीर्षु भंवेद्यो हितेन ।
रतिश्चारतिश्चातिनिन्दा तितृष्णा,
समस्या समस्या समस्या समस्या ॥४॥

—:o:—

१ जातं तदित्थ

अथ कतिचित्समस्यापदानि पूर्यन्ते

["दर्शे पूर्णकलं च पश्यति विधुं बन्ध्यासुतोऽन्धो दिवा" इति समस्यापदं श्रीमाल विहारीदासस्य पुरतो भट्टेन प्रदत्तं । यथा—]

प्राग् दुःकर्मवशान्मृतस्वजनकं कश्चिद्गताक्षं शिशुं,
बन्ध्या काचिदपालयन् नृभिरतः प्राख्यायिबन्ध्यासुतः ।
मध्याह्ने शयितः स दर्शदिवसे पूर्णेन्दु मेक्षिष्ट तद्—
दर्शे पूर्णकलं च पश्यति विधुं बन्ध्यासुतोऽन्धो दिवा ॥१॥

["मंदान्दोलितकुण्डलस्तवकया तन्व्या विधूतं शिरः" इति समस्यापदं भट्टदत्तं पूर्य्यते]

भर्त्राऽऽवश्यककार्यतः प्रवसता प्रावाचि पत्न्याः पुरो,
मासान्ते त्वमहं च धामनि निजे द्रक्ष्याव इन्दुं नवं ।
रुच्ये तावदसङ्गते सखिजनै र्द्रष्टुं विधुं प्रोक्तया,
मन्दान्दोलितकुण्डलस्तवकया तन्व्या विधूतं शिरः ॥१॥

अन्यच्च—

साधूनां पुरतो मयाद्य विधिना धर्म्मः समाकर्णितः,
पत्युक्तं वचनं हिताय वनिता श्रुत्वाऽऽशुहृष्टा वरं ।
त्वं चेन्मां वनिते वदेरथ तदा गृह्णामि साधु व्रतं,

मन्दान्दोलितकुण्डलस्तवकया तन्व्या विधूतं शिरः ॥२॥

["प्रथमकवलमध्ये मक्षिकासन्निपातः" इति समस्यापदं उपाध्यायविनयविजयैर्दत्तं तत्पूरितं पण्डितधर्म्मसीकेन]

परिणय जनतायां याति यो भाग्यहीनः
स्वदनमनुजपङ्क्तौ रोषमाधाय तिष्ठेत् ।
यदि कथमपि भोक्तुं संस्थितस्तत्र जातः,
प्रथमकवलमध्ये मक्षिका सन्निपातः ॥१॥

उषसि कृपणनामाऽग्राहि जातं फलं तद्—
द्रुतमजनि जनैः स्वैराटिरुद्वेगता च ।
कथमपि यदि जग्धिः प्रापि तत्रापि जातः,
प्रथमकवलमध्ये मक्षिकासन्निपातः ॥२॥

क्वचिदपि समये स्यान्चित्तभङ्गो जनस्य
तदुपरि विफलाःस्यु र्मिष्टसत्कारवाचः ।
परिणमयति किं वै शेषतत्काल भुक्तीः,
प्रथमकवलमध्ये मक्षिकासन्निपातः ॥३॥

यदि हि जननलग्नं स्यादशुद्धं प्रमादात्,
तदुपरि न फलाय स्पष्टभावाधिकारः ।
किमुपरितनभुक्ति प्रापयेत्सत्फलत्वं,
प्रथमकवलमध्ये मक्षिकासन्निपातः ॥४॥

———

["विद्युत्काकेन भक्षिता" इति समस्यापदं राजसारै र्दत्तं यं धर्मसिंहेन पूर्य्यते]

आयान्तं नायकं वीक्ष्य, श्यामया श्यामवाससा ।
रुद्धा सीमं तरु-किंवा, विद्युत्काकेन भक्षिता ॥ १ ॥
प्रेरितेन भृशं पत्या कस्तूरीचूर्ण मुष्टिना ।
छन्ना रदच्छदाभा किं विद्युत्काकेन भक्षिता ॥ २ ॥
प्रसह्य खण्डिके क्षिप्रा सद्युति द्धरणीसुता । (?)
रक्षसा रावणेनाहो, विद्युत्काकेन भक्षिता ॥ ३ ॥
आजन्मुधी छलं कर्त्तु, श्रीजिनदत्तसूरिणा ।
कृष्णामत्रेणरुद्योत विद्युत्काकेन भक्षिता ॥ ४ ॥
त्वत्खङ्गखण्डितस्यारेः पेशीराजन्यदाऽपतन् ।
मद्वर्णद्वेपिनीयं वै, विद्युत्काकेन भक्षिता ॥ ५ ॥
राजंस्त्वद्वैरिनारीभी रुदतीभिरधोमुखं ।
धौताञ्जनेन पत्राली, विद्युत्काकेन भक्षिता ॥ ६ ॥

(इति समस्याषट्कमहमदावादमध्ये पूरितं)

—:०:—

["मत्सी रोदिति मक्षिका च हसति ध्यायन्ति वामभ्रुवः" इति व्यास-सतीदास-दत्तं समस्यापदं पूर्य्यते-]

श्रीकृष्णोऽम्बुधितश्चतुर्दशभृशं रत्नानि निर्वासय,
मासानेहसितत्रशक्रशफरः शुण्डाघटो निसृतः ।

स्वस्वभ्रंशवशादपूर्वलभनाद्भीतिप्रतीतेः क्रमा—
त्मत्सी रोदिति मक्षिका च हसति ध्यायन्ति वामभ्रुवः ।१।
राजन्नाजिविधौ त्वया निजरिपुर्व्यापादितस्तच्छिरो,
लात्वोड्डीय जगाम गृध्र उत तद्भ्रंष्टं च नद्यां बहन् ।
वार्घट्टे किमिति स्त्रियस्तिमियुतं तन्निश्चकर्षुस्तदा,
मत्सी रोदिति मक्षिका च हसति ध्यायन्ति वामभ्रुवः ॥२॥
वृक्षे क्षौद्रमसंख्यमक्षिकमिहा रुक्षन् समीक्ष्य स्त्रियो,
द्रागुन्मूल्य सरिद्द्रयोद्रुममिलद् द्रुत्वामितद्रुं द्रुतं ।
पीताब्धिश्च पपौ जलं स्थलतया गामज्जनाच्चित्रतो,
मत्सी रोदिति मक्षिका च हसति ध्यायन्ति वामभ्रुवः ॥३॥
कासाराम्भसि वारिणा निजघटान् बभ्रुः पुरस्य स्त्रिय—
स्तावत्ताज्जलमध्यतो मदकलो हस्त्युन्ममज्ज स्फुटम् ।
भ्रस्यन्मीनमुदग्रवर्वणमिमं ता वीक्ष्य चित्रं तदा,
मत्सी रोदिति मक्षिका च हसति ध्यायन्ति वामभ्रुवः ॥४॥

"मन्दोदरी किमुदरी बदरी किमेषा" इति समस्या पदं—

दृष्टाशया वरदशाननजल्पनौघैं,
रंतस्तमाः कुवलकण्टकतां दधाना।
मायोपमात्रययुताऽपि क्रमाद्विभिन्ना,
मन्दोदरी किमुदरी बदरी किमेषा ॥ १ ॥

चारुश्रिया बहुविचारि सुगोत्रजेषु, सञ्चारताचरणलक्षणवर्जितेषु।
प्रश्नोत्तरे इयमुभे धरते समस्या, धन्वस्थलेषु च खलेषु चको
विशेषः ॥ १ ॥

"यष्टिरीष्टे न वैणवी" इति समस्यापदं

नमनं गुणवानेव कुरुते न तु निर्गुणः।
गुणं विना नतिं कर्तुं, यष्टि रीष्टे न वैणवी ॥ १ ॥
प्रतिभैव प्रभुर्युक्तिखण्डने स्यान्मतिस्तुना।
श्रोदितुं हि कुशीवक्ष्मां, यष्टि रीष्टे न वैणवी ॥ २ ॥

"शीर्षाणां सैव वन्ध्या मम नवतिरभूल्लोचनानामशीतिः"

इति समस्या—

चक्रे श्रीपार्श्वमौली श्रृणु युवति मया सत्फणानां सहस्रं,
तद्वीक्ष्येन्द्रः स्तुवन्सन् खशशिनवशिरांस्युन्ममार्ज्ज स्ववस्त्रैः।
शच्यग्या नर्च्चखाक्ष्यं कवि धुमितद्दशोऽर्हन्प्रतस्थेऽघशेषा,
शीर्षाणां सैव वन्ध्या मम नवतिरभूल्लोचनानामशीतिः॥ १ ॥

———०———

("नवलक्ष्यो जनताक्षिभिर्विभीः" इति समस्यापदं श्रीजिन चन्द्रसूरिभट्टारकैः प्रदत्तं पञ्चकृत्वः पूरितम्)

सुषमाभिरनेकसूनृतैः प्रतिभाभिः सुनयश्च सद्गुणैः।
जिनचन्द्रतुलां करोति यो नवलक्ष्यो जनताक्षिभिर्विभीः।१।
प्रति घस्मयकैतवस्पृहाः करणान्यत्र च पञ्च तद्भिदे।
प्रवणो यति यः परीक्ष्यते, न वलक्ष्यो जनताक्षिभिर्विभीः।२।
उपकारपरोपकारिषु कनक कामिनिकाञ्च वञ्चिनो।
संभवाब्धिपराङ्मुखः पुमानवलक्ष्यो जनताक्षिभिर्विभीः॥३॥
कुरुते गुरुगर्हणाय को दृढ़मुष्टि त्वमलं दधाति यः।
अभिधाप्य शुभात्र यस्य स नवलक्ष्यो जनताक्षिभिर्विभीः।४।

गदतः स्वजनेष्व नाशतो जरसा मृत्युल एव दैवतः ।
शतशो भयमेवमुद्वहन्नवलक्ष्यो जनताक्षिभिर्विभीः ॥ ५ ॥

"तिलतुषतटकोणे कीटिकोष्ट्रं प्रसूता" इति समस्यापदम्

सखि दृशि समपप्तत्कीटिकैकोपतारं
सुहृदवदत्पक्ष्मो दस्य निःसारयंस्ताम् ।
अभिमुखमयबिम्बं वीक्ष्य दृक्स्थं तदाऽहो,
तिलतुषतटकोणे कीटिकोष्ट्रं प्रसूता ॥ १ ॥

"विवेकः शाब्दिकेष्वयम्" इति समस्यापदम्--

उत्तमोऽहं सदा वर्त्ते मध्यमस्त्वं प्रवर्त्तसे ।
परः सामान्य आवाभ्यां विवेकः शाब्दिकेष्वयम् ॥ १ ॥
समासः क्रियते तेषां येषामन्वययोग्यता ।
व्यासता बहुरूपाणां, विवेकः शाब्दिकेष्वयम् ॥ २ ॥
सार्व्वधातुकतानित्यं लकाराणां चतुष्टये ।
आर्द्धधातुकताषट्के, विवेकः शाब्दिकेष्वयम् ॥ ३ ॥

"हुताशनश्चन्दनपङ्कशीतलः"

ज्वलन्कषायोऽपि तवोपदेशा-
द्भवेज्जनः शान्तिरसैकरूपः ।
किं नामृतासारत ईश हि स्यात्,—
हुताशनश्चन्दनपङ्कशीतलः ॥ १ ॥

—•—

धर्मवर्द्धन ग्रन्थावली में प्रयुक्त देशी सूची

(अमरकुमार) सुरसुन्दरी रास का अन्त्य भाग

[ढाल १२—इण पर भाव भगति मन आणी]

धरम शील जिण साचो धार्यो, वलि नवकार संभार्यों जी।
सुरसुन्दरिए सर्व समार्यो, निज आतम उधार्यो जी,
एक सदा जिन धर्म धराधो ॥६॥

'शीलतरंगणी' ग्रन्थ नी साखे, ए रास अति डाखे जी।
धन जे शील रतन नै राखै; भगवंत इणपर भाखै जी ॥७॥

संवत सतरै वरस छत्तीसै, श्रावण पूनिम दीसै जी।
एह संबन्ध कह्यो सुजगीसै, सुणतां सहु मन हीसै जी ॥८॥

गणधर गोत्रे गच्छपति गाजै, जिनचंद्रसूरि विराजै जी।
श्री बेनातट पुर सुख साजै, चौपी करी हित काजै जी ॥९॥

साखा जिनभद्रसूरि सवाई, खरतर गच्छ वरदाई जी।
पाठक साधुकीरति पुण्याई, साधुसुन्दर उवझाई जी ॥१०॥

विमलकीरति वाचक बड़ नामी, विमलचन्द यश कामी जी।
वाचक विजयहर्ष अनुगामी, धर्मवर्द्धन धर्म ध्यानी जी ॥११॥

उपदेश हिंया में आणी, पुण्य करै जे प्राणी जी।
आवी लाछि मिलै आफाणी, साची सद्गुरु वाणी जी ॥१२॥

बारमी ढाल कही बहुरंगे, चौथे खंड सुचंगे जी।
जिन धर्मशील तणे शुभ संगे, आनंद लील उमंगे जी ॥१३॥

—oo—

सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट के प्रकाशन

राजस्थान भारती (उच्चकोटि की शोध-पत्रिका)

भाग १ और ३ ८) प्रत्येक
भाग ४ से ७ ६) प्रति भाग
भाग २ (केवल एक अंक) २) रुपये
तैस्सितोरी विशेषांक ५) रुपये
पृथ्वीराज राठोड जयन्ती विशेषांक ५) रुपये

प्रकाशित ग्रन्थ

१; कलायण (ऋतुकाव्य) ३।।) २ वरसगांठ (राजस्थानी कहानियां २।।)
३ आभै पटकी (राजस्थानी उपन्यास) २।।)

नए प्रकाशन

१, राजस्थानी व्याकरण
२, राजस्थानी गद्य का विकास
३, अचलदास खीचीरी वचनिका
४, हम्मीरायण
५, पद्मिनी चरित्र चौपाई
६, दलपत विलास
७, डिंगल गीत
८, परमार वंश दर्पण
६, हरि रस
१०, पीरदान लालस ग्रन्थावली
११, महादेव पार्वती वेल
१२, सीताराम चौपाई
१३, सदयवत्सवीर प्रबन्ध
१४, जिनराजसूरि कृति कुसुमांजलि
१५, विनयचन्द्र कृति कुसुमांजलि
१६, जिनहर्ष ग्रन्थावली
१७, धर्मवर्द्धन ग्रन्थावली
१८, राजस्थानी दूहा
१६, राजस्थानी वीर दूहा
२०, राजस्थानी नीति दूहा
२१, राजस्थानी व्रत कथाएं
२२, राजस्थानी प्रेम-कथाएं
२३, चंदायण
२४, दम्पति विनोद
२५, समयसुन्दर रासपंचक

पता :—सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर